ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। **शृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान**

१   26 02 1977 पुष्प 41 राष्ट्र उत्थान

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि उस परम पिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान इतना महान् है, उसके विज्ञान को कोई भी मानव सीमा में ला नहीं पाता। क्योंकि वह सीमा से रहित है। वे परमपिता परमात्मा की एक एक वस्तु पर मानव जब अनुसन्धान करने लगता है। उस अनुसन्धान की वेला में जब प्राणी प्रवेश करता है तो उसका विज्ञान और ज्ञान मानव के समीप आने लगता है और मानव यह विचारता रहता है कि उस का विज्ञान कितना महान् है? उसकी महत्ता का वर्णन करता रहता है, और वह जब परमात्मा के निकट हो जाता है (चेतनामय), तो मानो वह नेति नेति का प्रतिपादन करता है। क्योंकि उस मानव का जो ज्ञान है जिस रथ में यह आत्मा विद्यमान रहता है, मानो उस रथ में विद्यमान होकर के यह आत्मा सीमा में बन्द होकर के उसका चिन्तन करता रहता है और उसी सीमा तक वह उसे जानता है। परन्तु जब सीमा से रहित हो जाता है, वह नेति नेति का क्या, वह मौन हो जाता है। सर्वत्र इन्द्रियां उस मानव की शान्त हो जाती हैं। उसका जो विषय है, उसकी जो धारा है वह समाप्त हो जाती है।

आओ मेरे पुत्रो आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट नहीं करूंगा। केवल तुम्हें उस क्षेत्र ! में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि मुनि विद्यमान होकर के साधना की चर्चाएं, प्राणों की चर्चाएं, इन्द्रियों का साकल्य बनाकर के यागों की चर्चाएं करते रहते थे। हमने बहुत पुरातन काल में पुत्रो तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि नाना प्रकार के यागों का ! चलन नाना प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। उसके नाना कर्म काण्ड के कर्म भी आते रहते हैं। परन्तु उस यज्ञ में जो प्रधानता दी जाती है वह इसी आभा में दी जाती है कि मानव अपनी यज्ञशाला में यज्ञमान अपना रथ स्वीकार

करके और वह मधु मण्डलों में ओत प्रोत हो जाता है। परन्तु आज मैं तुम्हें ऐसे विज्ञान में ले जाना नहीं चाहता हूँ। आज का हमारा जो आत्मिक रथ है, उसमें मानव साधना में जाना चाहता है। साधना करना चाहता है। प्रत्येक मानव साधना के उस क्षेत्र में रमण करना चाहता है। उस साधना में जो वास्तव में साधना है। मौन रहकर के अनुसन्धान करता हुआ मेरे पुत्रोऐसी स्थली में विद्यमान होकर के गान गाने लगता है ज !िस गान को श्रवण करने के लिए बेटा सिंह राज और मृगराज आते हैं। सर्पराज भी ! उसके उदार वाक्यों की जो सुगन्धि है उसे पान करना चाहते हैं। क्योंकि मानव में नाना प्रकार की सुगन्धि उत्पन्न होती रहती है। वह जो यौगिक सुगन्धि है, वह जो यौगिकता है वह मानव को ऊँचा बना देती है।

मेरे पुत्रो बहुत सुन्दर वाक्य इससे पूर्व शब्दों में उच्चारण किए थे कि राष्ट्र साधकों से ! ऊँचा बनता है। राजा भी साधक होता है और प्रजा भी साधक होती है। पपरन्तु जब दोनों ही साधना में परणित रहते हैं तो राष्ट्र में महत्ता की दीपावली का प्रकाश हो जाता ह‍ै। मानो वह जो प्रकाश है उसे लेने के लिए जो आत्मतत्व इस गृह को जानता है जिस गृह के लिए रमण कर रहा है, क्रियाशील हो रहा है उसको नहीं जानता। अरे, कैसा आश्चर्य है? उस मेरे देव का। कैसा आश्चर्य है कि अन्तर्हृदय में आत्मा विद्यमान है परन्तु मानव उस अन्तरात्मा को नहीं जानता। वह जानता नहीं है। क्योंकि उसे जानना चाहिए। इसके लिए साधना की आवश्यकता है। यौगिकता की आवश्यकता है। क्योंकि प्रत्येक मानव साधना और यौगिकता? चाहता है।

तो इसलिए देखो, वह जो साधना है वह क्या है प्रातः कालीन रात्रि के काल में मानो सबसे प्रथम साधक यह विचारता है, चिन्तन करता है कि संसार में यह रात्रि क्या है? जिस रात्रि के ऊपर रात्रि रात्रि पुकारता रहता है। परन्तु वेद का ऋषि, वेद का जो साधक है, प्रकाश का जो साधक है वो कहता है कि परमात्मा के राष्ट्र में परमात्मा के साधकों के लिए रात्रि नहीं होती। साधकों के लिए रात्रि का अभाव होता है। परन्तु रात्रि किनके लिए होती है? रात्रि उनके लिए होती है जो दूसरों के ऊपर आक्रमण करते रहते हैं। कामातुरता में रमण रहते हैं। मानो अज्ञान के जितने कर्म हैं उनमें सबमें रात्रि

होती है। और जितना भी ज्ञान का, साधना का क्षेत्र है उसमें मेरे पुत्रो रात्रि का अभाव ! रहता है। रात्रि कोई वस्तु नहीं है। परन्तु देखो, मैं रात्रि के सम्बन्ध में रात्रि के क्षेत्र में तुम्हें न ले जाऊँ।

केवल यह कि वह मानव देवता कहलाता है। वह साधक साधना में रमण करता हुआ वह मानव देवता कहलाता है, जो प्रभु के राष्ट्र में आकर के रात्रि को अनुभव नहीं करता। वह अज्ञान को जब अनुभव में नहीं लाता, वह ज्ञान के प्रकाश में प्रत्येक वस्तु को दृष्टिपात करता है। प्रत्येक मानवता को प्रकाश में लाना चाहता है। इसलिए प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या, प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि मण्डल सारे प्रकाश के लिए प्रार्थना करता रहता है। वह यह कहता है कि मैं ऐसे प्रकाश में चला जाऊँ जिस प्रकाश में सर्पश्च मनो, न तो विषैले प्राणी दुःख देने वाले हों और न हिंसक प्राणी मेरी हिंसा करने वाले हों। मुनिवरोंउनका जो तेज है !, उनका जो प्रकाश है, उस प्रकाश में हिंसक प्राणी आच्छादित हो जाएं और उसमें वह रमण करते हुए कर्त्तव्य की भावना और विचित्रता में आते चले जाएं। आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने के लिए नहीं आया हूँ। केवल तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि साधना में प्रवेश होना चाहिए। निर्जन मानो निर्जलः, है क्या रात्रि अप्रः नहीं। मानो देखो, भयंकर वन है जहाँ मानव साधना कर रहा है और वह साधना में चिन्तन कर रहा है उड़ान उड़ रहा है।

परन्तु साधना के लिए परम्परा से यह कहा है कि साधना के लिए अन्न का होना बहुत अनिवार्य है। मैंने इससे पूर्व काल में तुम्हें प्रकट कराया है। कि हमारे ऋषि मुनियों ने जिन्होंने तप किया है। जिन्होंने ऊँची ऊँची पोथियों का निर्माण किया है। जैसे उपनिषद् विद्या के जानने वाले हैं। उपनिवेष में रमण करने वाले हैं। ऐसे जो प्रकाशक होते हैं, ऐसे जो देवता होते हैं मानो जो प्रकाश के लिए सदैव याचना करते रहते हैं तो वह प्रकाश में मानो देखो, अन्न को ऊँचा बनाते हैं।

मैंने बहुत पुरातन काल में यह निर्णय देते हुए कहा कि वह प्राणों को जानते हैं और प्राणों में जो विभक्त क्रिया हो रही है, मन जो विभाजन कर रहा है। वह अपनी क्रिया को जानने वाला उपासक मुनिवरोंदेखो !, ऊँची उड़ान उड़ रहा है। ऊँची वार्त्ता ला रहा

है और वह वायुमण्डल में अपने भोज्य को प्राप्त कर रहा है। वह कैसे करता है? जैसे नेत्रों में तो वह विश्लेषण धर्म का करता हुआ धर्म ला रहा है। मुनिवरों घ्राण से यह ! श !परमाणुओं का आदान प्रदान कर रहा है। मुनिवरों्रोत्रों के द्वारा असत्य शब्दों को ग्रहण नहीं कर रहा। वह सत्य शब्दों को रमण करा रहा है। मानो वह तो शब्द ही शब्द है। मुनिवरों वह जो सत्यमय जीवन है वही तो मानव को देवता बनाता है। मानव को ! पवित्र बनाता है।

इसीलिए हे मेरे भोले ऋषियोआज तुम साधना में प्रवेश क !रना चाहते हो तो तुम भयंकर वन में विद्यमान होकर के तुम अपनी इन्द्रियों पर अनुसन्धान करो। अपनी इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन करने के लिए तत्पर रहो। जब तुम्हारी प्रत्येक इन्द्रिय धर्म में गुथ जाएगी। धर्म में परणित हो जाएगी जैसे ओ३म् रूपी जो धगा है उस ओइम् रूपी धगे में प्रत्येक वेद की ऋचा पिरोई हुई रहती है। प्रत्येक वेद का मन्त्र पिरोया हुआ रहता है। तो वह एक माला बन जाती है। ओइम् रूपी सूत्र में जितना ब्रह्माण्ड है जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, चैतन्य जगत् है, बेटा ओइम् रूपी धागे में पिरोया हुआ है। ! इसी प्रकार मेरे प्यारेदेखो !, जब इन्द्रियों का शोधन हो जाता है तो मानो एक धागा है उस धागे में मानव की प्रत्येक इन्द्रियों के विषय पिरोए जाते हैं। वह है प्राण। मानो देखो, वह है मन। मन और प्राण दोनों जब इनमें इन्द्रियों के विषय पिरोए जाते हैं तो जितना भी शरीर का मानो व्रीही है जितना भी व्यापकवाद है उसके द्वारा सिमट जाता है और सिमटकर के वह अपनी साधना के क्षेत्र में अपने में और परमात्मा रूपी जो चेतना है उसमें मुनिवरों दोनों को एकता में प्रवेश कर देता है। दोनों को वह एक ही ! सूत्र में दृष्टिपात करने लगता है और वह सूत्र क्या? चेतना है। परन्तु आज मैं मुनिवरों ! विशेष चर्चा प्रकट करना नहीं चाहता हूँ। मैंने बहुत पुरातन काल में यह कहा कि प्राण के द्वारा ही अन्तरिक्ष में से परमाणु को लिया जाता है। प्राण के द्वारा ही मानव साधना करता है। क्योंकि मन को संयम में लाने के लिए केवल प्राण से ऊर्ध्व गति वाली कोई वस्तु नहीं है। इसलिए प्राण ही होना चाहिए और वह जो प्राण है वह मन के सूत्र को अपने में धारण कर लेता है जब अपने में धारण कर लेता है तो मेरे पुत्रो वह मानव !

धन्य हो जाता है।

10. आओ मुनिवरों मैं आज कौन से क्षेत्र में चला गया हूँ। मुझे वह !काल स्मरण आता रहता है पुत्रो जब हम पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा विद्यमान होते थे और गुरुओं ! मानव चेतना क्या है !से यह कहा करते थे हे प्रभु? आत्म चेतना क्या है? साधना क्या है? मैंने कई काल में अपने शिष्यों का वर्णन कराते हुए कहा कि वह काल मुझे स्मरण आता है, जब मेरे पूज्यपाद वाणी के ऊपर अनुसन्धान कराते रहे। वाणी क्या है? जो करते (पान) वर्षों तक मौन रहकर के व्रती बन करके वह वाणी का रसा स्वादन 84 थे। वाणी कितनी विचित्र है? वाणी से मानव चाहता है। वह अग्नि है। मानो वाणी के अनुसन्धान वेत्ता तुम तो कहते हो अन्तरिक्ष में से परमाणुओं को, अन्तरिक्ष में जो विद्युत कार्य कर रही है अपनी विद्युत का और बाह्य विद्युत दोनों का अपने में समावेश कर लेता है। समावेश करके जब मानव प्राण की क्रिया को ले करके प्राण और अपान को लेकर के वाणी से जब इसका सम्बन्ध हो जाता है तो दोनों एक सूत्र में आकर के जब यह व्यान प्राण के साथ में इसकी ऊर्ध्व गति होती है तो उस समय जब यह गान गाता है, प्राणायाम करके गान गाता है, प्राण को अनुशासन में करके गान गाता है, मन को सूत्र में लगा देता है तो ऐसा कहते हैं कि नाना प्रकार दीपावली प्रत्येक गृह में प्रकाशित हो जाती है।

मैंने कई काल में वर्णन करते हुए कहा था मानो देखो, अपने प्राण अहीः लोकः, यह नाना प्रकार की विद्याएं ऋषि मुनियां के मस्तिष्कों में रही हैं। ऋषि मुनियां की धाराओं में रही हैं। पुत्रो वह भी काल मुझे स्मरण है जब महात्मा दधीचि के आश्रम में दोनां ! अश्विनी कुमार जब आयुर्वेद विद्या का अध्ययन करके ब्रह्मविद्या में प्रवेश करते हैं, और ब्रह्मविद्या में साधनावादी कहते हैं कि महाराज अश्विनी कुमार वह शक्ति को अपने में ! संग्रहीत करना जानते थे। प्राण की क्रिया को जानते थे, प्राण की विद्या को जानते थे और पशुओं की विद्या को जानते थे। आयुर्वेद में प्रवेश होने वाला जानता है, परन्तु जब वह ऋषिवर ब्रह्मविद्या प्रवेश करा रहे हैं फिर उसके कण्ठ के भाग को दूर कर देते हैं अश्व के मस्तिष्क से। क्योंकि अश्व नाम सूर्य को भी कहा जाता है। वैदिक साहित्य में

और अश्व नाम घोड़े को भी कहा जाता है। कहा जाता है कि अश्व का मस्तिष्क मानो कण्ठ पर स्थित करके और वह उपदेश पान करने लगे।

मानव यह कहता है कि यह कैसे सम्भव हो सकता है? मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पुत्रों को निर्णय देते हुए कहा था कि यह विद्या हमारे यहाँ परम्परा से रही है। ! यह वैदिक साहित्य में रही हैं वैदिक मन्त्रार्थ इस प्रकार के आते हैं। सूक्त हैं इस प्रकार के कि नाना प्रकार के प्राणियों की वाणी को हम अपने में धारण कर सकते हैं। अपने में हम पालन कर सकते हैं। जहाँ तक विज्ञान और आयुर्वेद का सम्बन्ध है, आयुर्वेद में ऐसी ऐसी विद्याएं हैं उनके आचार्यों के यहाँ कि वह अपने कण्ठ को कहीं स्थिर कर देते हैं। महात्मा दधीचि के कण्ठ का विभाग मानो छह माह तक औषधियों में रहा। अश्व के मुख से ब्रह्मविद्या का पान कर रहे हैं। उस ब्रह्म विद्या में परणित होना था। क्योंकि ब्रह्म विद्या का जो सम्बन्ध है वह अन्तरिक्ष से कहलाया गया है। ब्रह्मविद्या का जो सम्बन्ध है वह मानव के हृदय से कहलाया गया है।

तो तीन प्रकार की धारएं होती हैं ब्रह्मविद्या में प्रवेश होने में एक ब्रह्मविद्या वह कहलाती है जो मस्तिष्क से सम्बन्ध रखती है। इसका अन्तरिक्ष से सम्बन्ध रहता है और वही हृदय है क्योंकि परमात्मता का हृदय यह बाह्य जगत् है और आन्तरिक जगत् मानव का हृदय है। ऐसी ऐसी औषधि हैं कि मानव प्रत्येक प्राणी की वार्त्ता को जान लेता है। अश्वनी कुमार उस विद्या को पान करते थे। परन्तु रहा यह कि मानव के कण्ठ पर अश्व का कण्ठ कैसे आ गया? मस्तिष्क में अन्तर्द्वन्द्व रहता है। परन्तु ऐसी ऐसी विद्याएं यन्त्रों के द्वारा थीं अश्विनी कुमारां के यन्त्रों के द्वारा जो उन्होंने स्थिर किया और कुछ समय के लिए ब्रह्मविद्या को पान करने लगे। ये विद्याएं हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में आती हैं। मानो देखो, महात्मा दधीचि की एक पोथी थी। उस पोथी का नाम ही ब्रह्मविद्या था। अब तो मुझे प्रतीत नहीं वर्तमान के काल में वह पोथी प्रतीत होती है अथवा नहीं होती। परन्तु देखो, इस सम्बन्ध में मैं कोई चर्चा नहीं देना चाहता विचार विनिमय क्या? यह तो विद्या है। इस विद्या का योग के द्वारा, क्रियाओं के द्वारा अनुसन्धान करना है। परन्तु

आज मैं इस क्षेत्र में जाना नहीं चाहता हूँ।
मैं यह उच्चारण कर रहा था कि मानव को अनुसन्धान करना है। मानव को साधना करनी हैं। साधना में प्रवेश करना है तो सबसे प्रथम अन्न को पवित्र बनाता हुआ चिŸा के अनुशासन में प्रवेश कर जाए। अनुशासन किसे कहते हैं? कौन मानव किस प्रकार का है? कैसी वार्त्ता प्रकट करनी है? किस स्थली पर हमें साधना करनी है। गायत्री माँ की गोद में जाना है। श्रद्धा को उत्पन्न करना है। मानो देखो, यह सब अन्न से उत्पन्न होती हैं। इसलिए ऋषियों ने कहा कि अन्न पवित्र होना चाहिए। मुनिवरोंदेखो !, इसके पशत् हमने बहुत पुरातन काल में तुम्हें यह निर्णय देते हुए अपना वाक्य प्रकट करते हुए कहा था कि यह जो साधना का क्षेत्र है इसका सम्बन्ध ज्ञान से है। विवेक से है और विवेकी प्राणी मुनिवरोंचिन्तन करता है और वह चिन्त !न करने वाला परमात्मा से वार्त्ता कर रहा है। परमात्मा से वार्त्ता करता हुआ कहता है कि परमात्मन तो महान् है। परमात्मन तो विचित्र है। वह परमात्मा से आत्मा की वार्त्ता कर रहा है। चिन्तन में मानो प्राण के क्षेत्र का और मन के क्षेत्र का समन्वय करने के पश्चात् एक अनुसन्धान कर रहा है। वह पवित्रता को ला रहा हैं इसी प्रकार आज का हमारा यह वेद का ऋषि। आज का हमारा यह वाक्य क्या कह रहा है? मैं कोई व्याख्यता नहीं हूँ। मैं तो केवल महानन्द जी के कथानुसार साधनाप्रवेः, साधना की वार्त्ता कर रहा हूँ। परन्तु रहा यह कि विशेष साधना की चर्चाएं तो बेटा समुख होकर के प्रकट की जा सकती है। ! सम्मुख होकर के क्रिया में प्रवेश कराना होता है।
मैं बेटा बहुत काल तक महाराजा अश्वपति के यहाँ अध्यापन का कार्य करता रहा। ! परन्तु आध्यापन का जब कार्य करता तो प्रातःकाल में ब्रह्मचारियों की मानो एक पंक्ति लगा करती थी। वह जो पंक्ति लगती थी, उस पंक्ति मैं प्राण के निदान करने का, प्राण और मन दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास करता रहा। परन्तु देखो, उनमें ब्रह्मचारियों को यौगिक क्रियाएं, अनुसन्धान कराता रहा क्योंकि कोई भी मानव, कोई भी अध्ययन करने वाला प्राणी बिना प्राणायाम किए ब्रह्मचारी नहीं रह सकता। आज कोई भी ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी रहना चाहता है, अध्ययन करना चाहता है तो अध्ययन

के साथ मैं गार्हपथ्य नाम की अग्नि पूजा करने वाला हो। गार्हपथ्य नाम प्राणायाम का है। जो प्राणायाम करने वाला हो मन, को एक सूत्र में लाने वाला हो। मेरे पुत्र ने बहुत ऊँची बातें की थीं। अध्यापन का कार्य वही कर सकता है जो स्वयं भी ब्रह्मचारी हो। स्वयं चरि की रक्षा करने वाला हो। जो स्वयं अनुसन्धान करने वाला हो। जो (चरित्र) स्वयं प्राण की क्रिया को जानने वाला हो। यह मानो देखो, विद्यालय में जब विद्या अध्ययन कराता है, अध्ययन की क्रिया उसके समीप होता है, उसमें साधना का एक काण्ड होता है। साधना की मानो एक प्रतिभा होती है। तो ब्रह्मचारी जब विद्यालय से अवतीर्ण होता है तो वह राष्ट्र और समाज को महान् बनाता चला जाता है। वह तपस्वी कहलाता है।

हे राजन् !तेरे राष्ट्र में कैसा कक्ष होना चाहिए? ऐसा क्षेत्र होना चाहिए जिस क्षेत्र में परम्परा से विद्यालयों में ऊँचे ऊँचे कार्य, ऊँचे ऊँचे ब्रह्मचारी तर्क पूर्वक आचार्य के चरणों में ओत प्रोत हो करके अनुसन्धान करने वाले हों। मुझे वह काल स्मरण ह। ै यहाँ का ब्रह्मचारी अध्ययन करता हुआ ध्रुव मण्डल की यात्रा करता है। ध्रुव मण्डल में प्रवेश करता है देवऋषि नारद मुनि महाराज अपनी साधना के बल से, अपने वैज्ञानिक बल से वह अपनी पादुका में विद्यमान होकर के पृथ्वी से उड़ान उड़ता, वह मंगल के प्राणियां से वार्त्ता प्रकट करता था। वह मानो सूर्य लोकों में प्रवेश करता है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है। साधना के क्षेत्र में ही नहीं विज्ञान के क्षेत्र में मानव प्रवेश करता रहा है। आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करना नहीं चाहता हूँ। केवल तुम्हें यह वाक्य प्रकट कराने आया हूँ कि ब्रह्मचारी ऐसे वैज्ञानिक देवर्षि नारद जैसे विज्ञान के पण्डित महा ब्रह्मवेत्ता थे। वह कितना सौभाग्यशाली प्राणी हैं जो भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों को एक सूत्र में पिरोने वाला हो। एक ही सूत्र के दोनों मन के हैं। वह परमात्मा विद्या और आध्यात्मिक विद्या दोनों का समन्वय करके ध्रुव का क्या, सूर्य लोकों की यात्रा करने वाला हो। प्रत्येक मानव इस संसार में यात्री बनने के लिए आया है। प्रत्येक मानव यात्री है। क्योंकि यह परमात्मा को जो जगत् है, परमात्मा का जो क्षेत्र है, यात्रा करने का एक क्षेत्र कहलाता है। यहाँ प्रत्येक मानव यात्री बना हुआ है।

यहाँ प्रत्येक मानव यात्रा करने के लिए आया है और यात्रा में करना क्या है? वेद की विद्या को जानना चाहते हैं। वह विज्ञान में प्रवेश करना चाहता है। वह प्रकाश के एक ऐसे मानवीय और ऊँचे क्षेत्र में प्रवेश करना चाहता है जहाँ प्रवेश करने के पश्चात् माननव में महत्ता की तरंगें ओत प्रोत हो जाती है। आओ मैं विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। केवल साधना की चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। केवल साधना की चर्चा तो मैं इतनी उच्चारण कर सकता हूँ।

साधना का विषय एक ऐसा है, उसमें मैं इन्द्रियों की साधना की चर्चा कर सकता हूँ। मैं जहाँ तक तुम्हें साधना कराने का सम्बन्ध है, मेरे पुत्र तुम स्वयं जानते हो वह ! साधना तो मुखार्विन्द के समीप होकर के साधना की क्रियाओं में प्रवेश कराया जाता मैं साधना कराता रहा हूँ। साधना में प्रवेश कराता !है। क्योंकि बहुत काल तक बेटा रहा हूँ परन्तु आज तो बेटा आपत्तिकाल है। इसमें कुछ नहीं कहा जा सकता। ! इसमें कोई वाक्य प्रकट हम नहीं कर पाएंगे। केवल आज मैं तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ। आज तुम्हें मैं यह वाक्य प्रकट कराने के लिए आया हूँ कि मेरे तुम अपने जीवन में म !मेरे देवताओ !पुत्रोहान् बनते चले जाओ। महत्ता के क्षेत्र में ही महत्ता की प्रक्रियाओं की ओर ही उन्मुख होकर वह जीवन प्राप्त होता है प्रत्येक प्राणी को आओ, मेरे पुत्रो आज मैं क्या उच्चारण कर रहा था कि राजा को अपना राष्ट्र ऊँचा ! बनाना है तो मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा कि महाराज ! अश्वपति के यहाँ विद्यालयों में क्रियात्मक कार्य होता रहा है। सबसे प्रथम योग उसके पश्चात् राष्ट्र अपने में कैसे क्रियाशील बनेगा? महान् और कर्त्तव्य पारायणता आएगी। यह वाक्य प्रकट करता रहा हूँ। अनुसन्धान करता रहा हूँ।

मेरी पुत्रियां जीवन में ऊँचा और मेरी पुत्रियां अपने ऊँचे पुत्रों को जन्म देने वाली ! उस काल में होती हैं जब उनके द्वारा त्याग और तप होता है। तपस्या होती है। तो इसीलिए तपस्या होनी चाहिए। तपस्या किसे कहते हैं? ऋषि मुनियां ने वैदिक साहित्य में नाना प्रकार की विद्या दी हैं। मानो मेरी प्यारी माता के लिए कहा हैं हे माता तू ! सन्तान को जन्म दे। परन्तु तू अनुशासन में रहकर जन्म दे। वेद का ऋषि कहता है

तू अनुशासन में रहकर सन्तान को जन्म दे। वह माता कैसी है !कि हे माता? अनुशासन के लिए कह रहा है वेद का ऋषि। मानो देखो, वह अनुशासन ऐसा है कि माता प्रातःकालीन सूर्य के प्रकाश में तपने वाली हो। सूर्य का प्रकाश क्या ज्ञान में तपने वाली हो। प्रत्येक माता को आयुर्वेद का अध्ययन होना चाहिए। मैंने सबसे प्रथम जब महाराजा अश्वपति के यहाँ राष्ट्र का निर्माभ्रा होने लगा राष्ट्र को नियमावली बनने लगी उसमें कहा कि मेरी प्यारी माताओं को विद्यालय में आयुर्वेद की शिक्षा होनी चाहिए यहाँ आयुर्वेद के आचार्य बहुत सूक्ष्म होते हैं। मेरी प्यारी माता जानती है कि बालक का कैसे निर्माण होता है? कैसे निर्माण हो? कौन सा ऋतु ऊँचा होता है? कौन सा दिवस ऊँचा होता है? कौन सी तिथि ऊँची होती है। जिस तिथि में पुत्र का निर्माण किया जाता है। तो यह विद्याएं आयुर्वेद में हैं। इसीलिएउ माताओं को प्यारी पुत्रियां को मैंने सबसे प्रथम यह कहा था जब अश्वपति के यहाँ राष्ट्र का निर्माभ्रा होने लगा कि मेरी प्यारी माता को आयुर्वेद का ज्ञान होना चाहिए। आयुर्वेद का ज्ञान होगा तो माता जिस शिक्षा को लेकर के पुत्र को जन्म देना चाहती हो। वह इच्छा मेरी प्यारी माता की पूर्ण होती है। क्योंकि वह उसी के अनुसार अनुशासन में रहकर के ब्रह्मचर्य से जो रहकर करके सन्तान को जो जन्म देती है वह माता सौभाग्यशाली है।

आज मैं तुम्हें एक माता की चर्चा करने आया हूँ? और वह कौन सी माता है? महात्मा महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की माता थीं। महात्मा महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की माता का नाम था उलखा देवी। उनके पिता का नाम था स्वर्ण केतु ऋषि। वे दोनां वनां में अपने विचार में ऊँचे रहते थे। आयुर्वेद की पण्डिता उलखा भी पूर्ण ब्रह्मवेत्ता थी। उनके हृदय में कुछ समय के पश्चात् यह पिपासा जागी। कि प्रभु हमारी इच्छा यह है ! कि हम अपने विद्यालय में एक विशिष्ट बालक को जन्म देना चाहते हैं। मेरी !पतिदेव प्यारी माता क्या कहती है? विद्यालय क्या है? माता अपने गर्भाशय को विद्यालय उच्चारण कर रही है और यह कहती है कि विद्यालय में हम एक महान् बालक को जन्म देना चाहते हैं, और वह होना चाहिए। मानो उनके उच्चारण करते ही ऋषि कहता है देवीइच्छा तो मेरी भ्ी यही है। परन्तु देखो !, कुछ समय के पश्चात् मानो उन्होंने

आयुर्वेद का अध्ययन किया। उन्होंने ब्रह्मविद्या का अध्ययन किया। तो उस समय देखो, कुछ समय के पश्चात् वह तपस्वी बन करके एक बालक को जन्म दिया। जिसका नाम वशिष्ठ मुनि कहलाता था। बाल्यकाल का नाम उनका वरुण व्रती केतु कहलाया जाता था। परन्तु जब वह विद्या अध्ययन करता माता उसे लोरियों का पान कराती तो वह कहा करती बालक तू वशिष्ठ है और तुझे ऐसे विद्यालय में अध्ययन कराया है जिससे ! ऊँचा रहेगा मेरा नामोकरण रहे ना रहे परन्तु तू संसार में (यश) मानो मेरा नामोकरण विशिष्ट बनकर रह। वह मेरी प्यारी माता अपने गर्भाशय को, विद्यालय उस काल में उच्चारण कर सकती है जब वह स्वयं संयमी होती है। इस विद्यालय में बालक को जन्म देने से किसी मानव का ब्रह्मचर्य नष्ट नहीं होता। वह ब्रह्मचर्य ज्यों का त्यों बना रहता है। वह तो पूर्णमदः पूर्णमही। मानो उसमें से पूर्ण को निकासना है। पूर्ण में से पूर्ण को जन्म देता है। महान् पूर्ण को जन्म देता है। पूर्ण ऋषि है, माता है परन्तु उसमें से वशिष्ठ को महापूर्ण बना रहा है। हास्य अहा यह वेद की पवित्र विद्या। माता यह कहती है ... कि यह विद्यालय है। माता का गर्भाशय, वास्तव में विद्यालय है। परन्तु देखो, वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता हुए और ब्रह्मवेत्ता होकर के दोनों ब्रह्मचारी रहे। संयमी रहे और एक सन्तान को वशिष्ठ को जन्म दिया। माता भी एक पुत्र को जन्म देती है। पिता भ्ी एक पुत्र को जन्म देता है। ऋषि कहता है हे देवी हम एक समय मानो !उलखा ! संयमी एक समय ब्रह्मचर्य पूर्वक रज को प्रवेश करके विद्यालय में निर्माझा करती है, प्रभु निर्माण वेत्ता उस निर्माण को कर देता है। परन्तु माता उसमें सहायक बनती है और बालक को बुद्धिमान बना देती है। यह विचारधरा जब वैदिक साहित्य से हमें प्राप्त होती है, वैदिकता से प्राप्त होती है तो मेरी प्यारी माता उस समय एक वशिष्ठ मुनि को जन्म दे रही है। अहः कैसा ऊँचा मानो देखो, एक ही समय में रजस्तव, वीर्यत्व उसमें प्रवेश होकर के जन्म दिया जा रहा है। पति पत्नी जीवन भर संयम से रहते हैं। जीवन भर साधना में रहते हैं। जीवन भर वैज्ञानिक बने रहते हैं। जीवन भर ब्रह्मचारी रहते हैं। वेद में ये विद्याएं प्राप्त होती हैं मेरी प्यारी माता जैसा मेरे पुत्र ने कई काल में कहा है कि वशिष्ठ को जन्म दें तू यहाँ ऐसे महान् पुरुषां को जन्म दे जो प्रकाश ही प्रकाश में

रमण करने वाला हो। अन्धकार तेरे जीवन में न आए।
अश्वपति के काल में यह नियम था कि माताओं को, ब्रह्मचारणियों को आयुर्वेद की विद्या दी जाती और देखो, माता से पहले पुत्र का निधन नहीं होता। माता से पूर्व और पिता से पूर्व पुत्र का निधन उस काल में नहीं होता जबकि माता पिता अपने पुत्र को वास्तव में जन्म देते हैं। और जैसे यहाँ वर्षा काल में शीतलता से नाना योनियां उत्पन्न हो जाती हैं। यदि माता पिता भी इसी प्रकार का जन्म देते हैं तो वह सदैव जीवन में अपने नेत्रों से अश्रुओं का पात ही होता रहता हैं विचार विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, ऐसी विद्याओं को वर्णन कराना चाहता हूँ पुत्रो जहाँ ! देखो, राष्ट्र का नियम ऊँचा बनता है। राष्ट्रीयता आती है। सत्य युग आता है उनसे।
जब मेरी प्यारी पुत्री आयुर्वेद की बुद्धिमती होती हैं। मानो वह चिकित्सा करती हैं। मानव की चिकित्सा जितनी उदारता से माता कर सकती है इतना मानवप नहीं कर सकता। मानव यदि चिकित्सक है तो वह उदर के ऐश्वर्य में परणित हो जाता है। माता यदि मानो देखो, चिकित्सिक है, अपने पुत्र को उस मानो विद्या से निदान कर रही है और वह प्रत्येक गृह में आयुर्वेद की पण्डिता है तो मानो देखो, गृह आश्रम में प्रवेश होने वाले रुग्णों के द्रव्य का दुरूपयोग नहीं होता। तो इसलिए मैंने बहुत पुरातन काल में पुत्रों तुम्हें यह निर्णय दिया कि आयुर्वेद ऊँचा होना चाहिए। !
सबसे प्रथम नियम राजा के राष्ट्र में यह हो यदि कोई राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है। विद्यालयों में ब्रह्मचारियां को प्राणायाम की शिक्षा होनी चाहिए। ब्रह्मचारी ऊँचे हों और जहाँ गुरुओं की परम्परा ऊँची बनती ह। ै जब राष्ट्र का निधन होना प्रारम्भ होता है वह विद्यालयां से होता है। विद्यालय में यदि आचार्य सुन्दर नहीं है, आचार्य संयमी नहीं है तो वहाँ ब्रह्मचारी भी कदापि ऊँचे नहीं होते। और यदि आचार्य घृणित है, आचार्य घृणा में प्रवेश होकर के विद्यालय में शिक्षा दे रहा है तो ब्रह्मचारी भी घृणित हो जाते हैं। ब्रह्मचारियों में मानो पक्षपात आ जाएगा। मानव कैसे पक्षपात रहित बने? उनके द्वारा तप होना चाहिए। उसके द्वारा प्राणायाम होना चाहिए। उसके द्वारा महत्ता की शिक्षा होनी चाहिए। विद्या को पान करता हुआ मुनिवरोंदेखो !, एक महत्ता में प्रवेश करता

चला जाए।

आज का हमारा वेद का आचार्य यह क्या कहता है? ऋषि क्या कह रहा है? मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ। राष्ट्र को स्वर्ग बनाना है, मानव को स्वर्गवादी बनाना है तो माता वशिष्ठ जैसे पुत्रों को जन्म दे। और राजा के यहाँ नियमावली होनी चाहिए कि ! की चिकित्सा करने वाली !आयुर्वेद की विद्या हो। प्रत्येक मेरी प्यारी ाता अपने पुत्रों हो। गर्भाशय के रजस्त्व, वीर्यत्व गर्भाशय में प्रवेश करता है। माता के शरीर में। उससे लेकर के नौ माह तक गर्भाशय में रहता है। वहाँ भी माता चिकित्सक बनी रहे। और जब बाह्य जगत् में आता है वहाँ भी चिकित्सा करने वाली हो। चिकित्सा क्या है? माता का आहार और व्यवहार ही उसकी चिकित्सा है। परन्तु देखो, ये विद्याएं हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में आती हैं। वैदिकता में मानव जब प्रवेश करता है तो नाना प्रकार की विद्याओं में परणित हो जाता है।

आज मैं जैसा मेरे पुत्र ने कई काल में कहा है कि जिस राजा के राष्ट्र में, समाज में मानो मेरी पुत्रियां अपने श्रृङ्गार को हनन करके उदर की पूर्ति करती हैं वह कोई राष्ट्र पवित्र नहीं होता। वह कोई राष्ट्र नहीं होता यह मेरे पुत्र ने कहा था। हमें तो यह प्रतीत नहीं है, ऐसा है अथवा नहीं। परन्तु देखो, मेरे पुत्र यह उच्चारण करते रहते हैं। मैं ! उनकी वार्त्ता की पुनरुक्ति कर रहा हूँ और वह क्या है कि ऐसा राष्ट्र नहीं होना चाहिए। जिस राजा के राष्ट्र में विज्ञान का दुरूपयोग हो ऐसा राष्ट्र नहीं होना चाहिए। मैं एक वार्त्ता की पुनरुक्ति कर रहा हूँ। एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज को किन्हीं आचार्यों ने यह कहा, किन्हीं ऋषियों ने यह कहा कि महाराज यह जो विज्ञान का ! काल आता है इस भौतिक विज्ञान का अन्तिम परिणाम क्ा होता है? उस समय महर्षि भारद्वाज ने यह कहा कि इस विज्ञान का अन्तिम जो परिणाम होता है। वह समाज की मृत्यु होती है और समाज का जीवन होता है। नाना प्रकार की चित्रावलियों में यदि ऋषि मुनियों के जीवन चरित्र आते हैं, ऋषि मुनियों की धाराएं आती हैं, तो उस काल में विज्ञान का सदुपयोग हो रहा है। विज्ञान में मानव रमण करता हुआ और ऊँचा बन रहा है। विज्ञान का जब दुरूपयोग होने लगता है विज्ञान का दुरूपयोग क्या

है? मानो चित्रावलियों में मेरी पुत्रियां का अश्लील चित्रण हो रहा है और चित्रों को दृष्टिपात करके मानो प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या उसको पान करके चंचल बनती चली जा रही है। चंचलता आ रही है। कामवासना की प्रवृत्ति हो रही है। अरे, वह विज्ञान ही राष्ट्र का द्रोही और राष्ट्र का घातक बन रहा है। समाज का घातक बन रहा है। जिन चित्रावलियों को दृष्टिपात करके ब्रह्मचारिणी, ब्रह्मचारी जब पान करते हैं तो उनका ब्रह्मचर्य दूषित होता है और ब्रह्मचारी जब पान करते हैं तो उनका ब्रह्मचर्य दूषित होता है और ब्रह्मचर्य के दूषित होने पर आलस्य और प्रमाद की प्रवृत्ति हो जाती है। आलस्य और प्रमाद जब संसार में छा जाता है। तो हे राजा अधिकार की पुकार ! ह ोती है कर्त्तव्य का पालन नहीं होता। क्योंकि आलस्य, प्रमाद में कर्त्तव्यवादी प्राणी नहीं रहते। अधिकार तो चाहते हैं अधिकार होना चाहिए। अधिकार चाहते हैं मैं माता हूँ, पिता हूँ। अधिकार से कहते हैं मैं आचार्य हूँ। अधिकार से कहते हैं मैं राजा हूँ। अधिकार से कहते हैं मैं मन्त्रालय में रहता हूँ। परन्तु अधिकार से तो सर्वत्र बनना चाहते हैं।

अरे, कर्त्तव्य का पालन क्यों नहीं किया जाता? क्योंकि वह ब्रह्मचर्य के दूषित होने से नहीं किया जाता। एक ब्रह्मचारी विद्या में अध्ययन कर रहा हैं यदि वह आलसी और प्रमादी है। उसका ब्रह्मचर्य भ्रष्ट हो गया है तो आलस्य और प्रमाद का परिणाम यह है कि वह कर्त्तव्यवादी नहीं रहा। कर्त्तव्य में रह करके अपने गुरु आचार्यों से कहता है कि विद्यार्थी हूँ। मुझे अधिकार दो। कर्त्तव्य वह करे या न करे। आचार्य के चरण स्पर्श करे या न करे। परन्त उसको विद्या अवश्य चाहिए। उसे मानो देखो, उत्तीर्ण अवश्य होना चाहिए। वह मानो परीक्षा में महान् बनना चाहता है। अहा जब विज्ञान का दुरूपयोग ! जिस काल में भी होता है उस काल में मानव विद्या से विहीन बन जाता है।

ब्रह्मचारी जब दूषित हो जाता है तो विद्या से विहीन बन गया है। औरजब विद्या से विहीन बन गया तो अधिकार अधिकार पुकारता है। कर्त्तव्यवाद नहीं रहता, तो उसका परिणाम क्या कि समाज और राष्ट्र दूषित हो आते हैं। जब ये दूषित हो जाते हैं तो राष्ट्र को चाहिए राजा यदि राष्ट्र को क्रान्ति से शून्य बनाना चाहता है वह यह चाहता है कि मेरे राष्ट्र में महत्ता आ जाए तो वह प्रातःकालीन याग करने वाला बने। वह रूढ़ियों में

परणित होने वाला न हो। याग करे। समाज को शिक्षा दें उस राजा के राष्ट्र में प्रजा दुखारी नहीं रहती। उस राजा के राष्ट्र में प्रजा आनन्दयुक्त रहती है। अहा इसी प्रकार ! मैं यह उच्चारण कर रहा था कि विज्ञान का दुरूपयोग होने से समाज अधोगति को जाता है।

विज्ञान का सदुपयोग होने से उसमें सद्गति आती है। सत्यवादी बनता है। साधक बनता है। मानवता में रमण करता है। परन्तु देखो, ऐसा मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था। आज मैं कोई विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ केवल परिचय देना हमारा कर्त्तव्य है। परिचय देते रहते हैं और वह परिचय क्या है? हे राजन् तू अपने राष्ट्र और प्रजा को ऊँ बनाने वाला जब बनेगा। ! जब स्वयं तेरा चरित्र तेरा कर्त्तव्य महान् होगा। माता तू अपने पुत्र का जीवन चाहती है तो माता तू अपने कर्त्तव्य का पालन कर। तू अपने पुत्र को जन्म दे। शिक्षित बना दे। हे माता तू जन्म देती है। मृत्यु नहीं देती। माता तू जन्म देने वाली बन। जन्म ! किस का होता है? तेरे बालक का जन्म हो रहा है। तेरे पुत्र का जन्म होता है। माता मृत्यु नहीं दे सकती। माता जन्म देती है। वही उसका कर्त्तव्य है। वह जन्म क्या है? क्योंकि उत्पन्न तो अवश्य हो जाएगा। जन्म है उसको शिक्षित बनाना। उसको पवित्र बनाना। उसको सदाचारी बनाना। जिसको तुझे जन्म देना है। परन्तु जब तू जन्म देती है तो तेरी सेवा करने वाला तेरा पुत्र बनेगा। तेरे से प्रथम मृत्यु नहीं होगी। वह महान् बनकर तेरे राष्ट्र, समाज और गृह को यौगिकता में प्रवेश कराता चला जाएगा। ऐसा मेरा मानो विश्वास रहता है।

मैंने यह दृष्टिपात किया महाराज अश्वपति के यहाँ पांच ऋषि थे जो नियमावली का निर्माण कर रहे थे। राष्ट्र का विधान बना रहे थे। और सबसे प्रथम विधान में मेरी प्यारी माताओं का पूजन हो। माताओं का पूजन क्या कि उनको आयुर्वेद का ज्ञान हो। आयुर्वेदचार्य होगी तो अपने गर्भ से ऊँची सन्तानां को जन्म देंगी। क्योंकि वही उनकी पूजा कहलाई जाएगी। पूजा का अर्थ क्या है? उनका सदुपयोग करना है। उसके पश्चात् नियमावली क्या? कि वैज्ञानिक और बुद्धिमान होने चाहिए। यौगिक कक्ष होने चाहिए।

उसके पश्चात् वनज कक्ष होना चाहिए। वैज्ञानिक सब कक्षों में अपने कर्त्तव्यां में रमण करते चले जाएं। यह नियमावली बनाई गई। इसी नियमावली पर राष्ट्र का निर्माण हुआ। निर्वाचन कौन कर रहे हैं? ऋषि कर रहे हैं। ब्रह्मवेत्ता और विवेकी कर रहे हैं। मेरे पुत्र बहुत ऊँची वार्त्ता किस काल में उच्चारण कर जाते हैं। आज का विचार क्या कह रहा है? आज का वाक् हमारा समाप्त होने जा रहा ह। ै आज के वाक्य उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय क्या? कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुण गान गाते हम इस संसार सागर से पार हो जाएं। हम साधना के क्षेत्र में प्रवेश करना चाहते हैं। दर्शनों में जाना चाहते हैं। दर्शनों की विद्या में प्रवेश किया जाए। यह बहुत ऊँचा है। परन्तु नम्रता, पवित्रता होनी चाहिए। यह आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा। अच्छा भगवन्आज्ञा। लाक्षागृह !, बरनावा समय दोपहर 3. बजे। 00

२ 13 03 1978 पुष्प 38 पुष्प उपलब्ध नही है

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि इसका ज्ञान और विज्ञान इतना महान और अनन्त माना गया है जिसको कोई भी मानव सीमाबद्ध नहीं कर सकता क्योंकि वह सीमा से सदैव रहित है। तो मुनिवरों उस ! परमपिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान की आभाएं तुम्हें प्रायः प्रकट हम कराते रहते हैं। वेद पाठ आता रहता है और ज्ञान और विज्ञान की विवेचनाएं आती रहती हैं। हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है अथवा उसका वर्णन कर रहा है।

जब हम उस परमात्मा को अपना वरणीय स्वीकार कर लेते हैं तो हमारे जीवन में, हमारी क्रियाओं में एक महान आनन्द हमें प्रतीत होने लगता है। क्योंकि हमारे ऋषि

मुनियों ने परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान के विषय में बहुत परिश्रम किया। उन्होंने बेटाअपने मनस्तत्व !, प्राणस्तत्व दोनों को एक सूत्र में लाते हुए अपने को समाधिष्ट किया। और समाधिष्ट में संसार का जितना भी ज्ञान है अथवा तिना भी वह जान पाता है वह उतने में कुछ लेखनीबद्ध करके चला जाता है। क्योंकि ऐसे नाना ऋषि हुए हैं जिन्होंने भौतिक विज्ञान, आध्यात्मिक विज्ञान दोनों के ऊपर नाना टिप्पणियां ही नहीं कीं, उन्हें जानने का प्रयास भी किया और उनके जीवन का एक रहस्य रहा है कि वह मनस्तत्व, प्राणस्तत्व दोनों का एक सूत्र में ला करके क्योंकि यह मन प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाला है। और जो प्राणस्तत्व है इसको अन्तिम सूत्र में आचार्यों ने प्रणव कहा है, मानो यह ब्रह्म का वाचक, उसकी जो आभा निर्णित कराता है वह प्राणस्तत्व कहलाता है।

परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में भी इतनी गम्भीरता में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय केवल यह कि हमारे ऋषि मुनियों ने बेटा लोक लोकान्तरों की यह ! एक ही सूत्र में जो मालाएं हैं, लोक लोकान्तरों की जो माला है इसको ऋषियों ने अपने मस्तिष्क में धारण किया है और इसको जानने का प्रयास किया। उन्होंने समाष्ठि हो करके एक नहीं, दो नहीं, अरबों, खरबों, सूर्य की गणनाएं की हैं। इसी प्रकार चन्द्र लोकों की गणनाएं की हैं और भी नाना प्रकार के मण्डलों को जानने का प्रयास किया। एक समय का वाक्य मुझे स्मरण आ गया है। एक समय बेटा हम अपने पूज्यपाद ! गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत थे। कुछ अध्ययन कर रहे थे कुछ उनसे यौगिक चर्चाएं आपने यह कै !प्रारम्भ हो रही थीं तो पूज्यपाद गुरु से यह प्रश्न किया कि प्रभुसे जाना है? जो इतने ब्रह्माण्ड की आप चर्चाएं करते हैं, इतने गम्भीर आप इस संसार को ! अनुभव भी नहीं होने देते कि यह संसार क्या है? परन्तु आपका ऐसा जो विचित्र यह अनुपम जगत है। यह जो विचारों का जगत है प्रभु इसमें आप हमें ले जाते हैं। उन ! विचारों के जगत में कौनसी आभा है? और कैसे आपने इसे जाना है? परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव यह कहा करते थे कि जतो भी मानव संसार में विचारक बनना चाहता है वह प्रातःकाल एक याग करता है उस याग का नाम हमारे यहाँ ब्रह्मयाग कहा जाता है

अिवा ब्रह्म का चिन्तन किया जाता है। ऊषा काल में ऊषा देवी अपनी लालिमा ले करके आती है। संसार में प्रकाश को लेकर आती है। उस समय प्रत्येक मानव ब्रह्म का चिन्तन करता है और जैसे रात्रि और दिवस दोनों का मिलान होता है उस काल में अपने मनस्तत्व जहाँ ऊषा काल आता है वहाँ जहाँ अन्धकार और प्रकाश का मिलान होता है ऐसा जो काल उसको हमारे यहाँ मुनिवरों सन्ध्या का काल कहते हैं। उसे ! क्योंकि उसमें प्रकाश और अन्धकार दोनों का !सन्ध्या का काल क्यों कहते हैं विचारक जो ब्रह्मवेत्ता !मिलान होता है। प्रातःकाल को भी और सायंकाल को भी बेटा हैं अथवा जो ब्रह्म का चिन्तन करने वाला है वह ब्रह्म का चिन्तन करने के लिए तत्पर होता है और वह विचारता है इसी प्रातःकाल को और वह चिन्तन करता है लोक लोकान्तर की मालाओं को और मेरे प्यारे वह गम्भीर एक अगाध समुद्र में चला जाता ! है इतनी अगाध आभाओं में रमण करने लगता है क्योंकि ब्रह्म ही एक चैतन्य है। ब्रह्म की जो चेतनता है, ब्रह्म का जो चैतन्यमयी स्वरूप माना गया है मेरे प्यारे प्रातःकाल ! मैं आप !उसे ब्रह्मयाग कहते हैं अथवा ब्रह्म का चिन्तन कहते हैं। वह कहता है हे प्रभु को समर्पित हो गया हूँ। उस समर्पणता के आँगन में हमें धारणा कराइये प्रभु।

तो मेरे प्यारे विचार विनिमय !क्या आज मैं तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को ब्रह्म का चिन्तन करना है, ब्रह्म में ही रमण करना है। उसे मुनिवरों ! ब्रह्मयाग कहते हैं। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? बेटा जो ब्रह्म का जिज्ञासु है। ! ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो अपने को बनाना चाहता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो स्वर्ग में जाना चाहता है। आनन्द को प्राप्त करना चाहता है। मेरे प्यारे ! ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? ब्रह्मण करता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? ब्रह्मचारी करता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? मेरे प्यारे जो समाधि लगाने वाले ! जो माता पिता यह चाहते हैं कि !महापुरुष होते हैं। विचार विनिमय क्या मुनिवरों हमारा गृह आनन्दमयी हो जाए। हमारे गृह में स्वर्ग भी हो, आनन्द भी हो, प्रकाश भी हो तो मेरे प्यारेप्रत्येक माता पिता का यह कर्त्तव्य है कि अपने गृह में ब् !रह्म का चिन्तन करने वाला हो। ब्रह्म का मनन करने वाला हो। जो माता पिता अपने में तो

कुछ बनाना नहीं चाहते और अपने गृह में, जो बाल्य बालिकाएं हैं उनको स्वर्ग में ले जाना चाहते हैं तो यह मिथ्या उनकी कल्पना रहती है।

आज का हमारा विचार क्या? मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जहाँ ऋषि और ऋषि पत्नियों ने चिन्तन किया है, ममन किया है। जिनके आश्रम में रहने वाले ब्रह्मचारी ब्रह्म की चरि को ही चरते रहते थे। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है एक ऋषि थे जिनका नाम सन्तोषी ऋषि महाराज था। सन्तोषी ऋषि महाराज, महाराजा अश्वपति के पुरोहित थे। जब वह प्रातःकाल पति पत्नी दोनों ब्रह्म का चिन्तन करते थे तो उनकी समाधि लग जाती थी। निर्विकल्प समाधि में अभ्यस्त हो जाते। उनके यहाँ कुछ ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, कुछ ब्रह्मचारिणियां थीं तो उनको निर्विकल्प समाधि में मग्न करते हुए दृष्टिपात करते तो ब्रह्मचारी विद्यालय में जब उसी प्रकार का चिन्तन करते रहते तो विद्यालय स्वर्ग बन जाते। विद्यालयों में महत्ता का सदैव प्रदर्शन होता रहता। महानता में रहते मुनिवरों वह विभोर हो जाते और समाधि में जा करके ब्रह्म की आभा में ! रमण करते रहते। महर्षि सन्तोषी मुनि महाराजअश्वपति के पुरोहित भी थे, विद्यालय में आचार्य भी थे। विद्यालय में ब्रह्मचारियों को अध्ययन भी कराते रहते। ब्रह्म के चिन्तन में अपने को महान बनाते हुए, ऊर्ध्वा बनाते हुए संसार की आभाओं में रमण करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। आओ मेरे पुत्रोआज मैं तुम्हें कह !ाँ ले गया हूँ। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले पति पत्नी प्रातःकालीन, मध्यरात्रि होती तो प्रभु के आँगन में ! जाने के लिए उनका आत्म विभोर होना स्वाभाविक था। क्योंकि वह कहा करते थे हे यह जो तेरा आनन्दमयी जगत है इसको हम कैसे जानें !प्रभु? इसको कैसे जान सकते हैं? आपकी जो अनन्त सृष्टि है, जो ब्रह्माण्ड है उसको जानने में प्रभु मैं सदैव असमर्थ ! आप तो महान हैं। आप तो विचित्र कहलाते हैं। यह जो माता !रहता हूँ। हे भगवन् पिता हैं ब्रह्म का चिन्तन करते रहते हैं वहाँ रहने वाले बाल्य, बालिकाएं, वह जो श्रवण करते हैं तो उनका आश्रम, उनका गृह चाहे वह गृह आश्रम में प्रवेश होने वाले हों, चाहे वह विद्यालय में हों। चाहे वह राजा के यहाँ पुरोहित क्यों न हों परन्तु वह जहाँ भी

जाते हैं वह स्वर्ग की कल्पना करते हैं। आनन्द की पुकार करते हैं।

तो मेरे प्यारे आनन्द मानव के हृदय से सम्बन्धित !है। मानव का हृदय ही उसका आनन्द है। इस आनन्द को पान करना मानव का कर्त्तव्य कहलाया गया है। एक आनन्द को पान करना ही उस मनस्तत्व और प्राणस्तत्व दोनों को एक आभा में ले जाना है। परन्तु देखो, प्रातःकालीन जब वह ब्रह्म का चिन्तन करते उसे ब्रह्मयाग कहते हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा इन यागों का अभिप्राय यह है यागम् ब्रह्म लोकाः प्रभु के विभोर में जो मानव जागरूक रहता है वह याग कर्म करता है। यागी कौन है? मेरे पुत्रो !यागी कहते हैं जो याग करता है और याग कौन करता है बेटा ! जो ब्रह्म का चिन्तनकरता है। ब्रह्म का मनन करता है। मेरे पुत्रो मुझे स्मरण आता ! रहता है एक समय महाराजा अश्वपति के मस्तिष्क में एक वाक्य आया कि मुझे अपने राष्ट्र को स्वर्गमयी, आनन्दमयी बनाने के लिए एक याग करना है। मुनिवरों उन्होंने ! ऋषि मुनियों की सभा एकत्रित की और उन ऋषियों में बेटा एक ऋषि का नाम ! हमें !था महर्षि कुकरोटक ऋषि महाराज। कुकरोटक ऋषि महाराज ने कहा राजन् किस प्रकार तुम ने एकत्रित किया। उन्होंने कहा कि मैं अपने राष्ट्र में याग करना चाहता हूँ क्योंकि मेरा जीवन ही याग है। मैंने अपने में यह विचार लिया कि मेरे जीवन में याग ही होते रहते हैं। यदि मैं वास्तव में याग को करना चाहूँगा मेरा याग इतना महान हो सकता है कि मैं संसार का याज्ञिक बन करके प्रभु को समर्पित कर सकता हूँ। मेरे पुत्रो जब उन्होंने यह कहा तो ऋषि कहते हैं महर्षि विभाण्डक और महर्षि ! कुकरोटक एक स्वर में बोले। हे अश्‍वपतिआप याग तो करना चाहते हैं !, याग की आपको कल्पना है परन्तु आप ब्रह्मयाग भी जानते हैं अथवा नहीं? उन्होंने कहा प्रभु ! ब्रह्मयाग तो मैं कुछ जानता हूँ कुछ नहीं जानता। ऋषियों ने कहा कितना जानते हो? उन्होंने कहा मैं इतना जानता हूँ कि प्रातःकाल, सायंकाल को मैं जब भी जागरूक होता हूँ। मैं जब भी अपने को जागरूक करना चाहता हूँ तो प्रभु में ध्यानावस्थित हो ! जाता हूँ। प्रभु की महिमा पर विचार विनिमय करने लगता हूँ और प्रभु का विचार विनिमय करने से मेरा याग मेरे को आनन्दित कर देता है। मैं इतना याग करना

जानता हूँ केवल।

परन्तु ऋषि विभाण्डक कहते हैं। हे राजन् तुम वास्तव में याग के मार्ग को जानना ! चाहते हो। तुम्हारा यह जो याग है वह ब्रह्म जो याग है जो मानव करता है जिसमें मानव की एक एक इन्द्रिय इसमें समर्पित होती है। प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को जानना हो तुम्हारा याग कहलाता है क्योंकि प्रत्येक इन्द्रियों को जो विषय है जैसे, रूप, रस, गन्ध कहलाता है, इन विषयों में सर्वत्र मानव की आभा निहित रहती है और यही याग का साकल्य कहलाता है और यही ब्रह्मयागी बनने के लिए साकल्य कहलाता है। उन्होंने कहा प्रभुकैसे !? कहा जैसे नेत्र हैं, जैसे घ्राण इन्द्रियां हैं यह एक एक विषयों में ब्रह्म की गाथा गा रही हैं। सूर्य और चन्द्र हैं यह भी गाथा गा रहे हैं। एक अश्वनी है, घ्रति है, जमदाग्नि इत्यादि भी गाथा गा रही है विश्वामित्र भी ब्रह्म की गाथा गाते हुए विषयों को जानना हमहान प्रतिभाओं को जानना, तेजोमयी का इनमें रहस्य भरा हुआ है। साकल्य को जानना उनको जान करके अग्नाध्यान करना है। अग्नाध्यान करके जो उसमें आहुति देता है, स्वाहाः कहता है वह ब्रह्मयाग कर रहा है। वह देव याग नहीं वह ब्रह्मयाग कर रहा है। क्योंकि ब्रह्मयाग मानव अपनी इन्द्रियों से करता है वह इन्द्रियों में जो साकल्य है। इन्द्रियों का साकल्य क्या है? मेरे प्यारे नेत्रों का साकल्य रूप है ! अग्नि इत्यादि हैं। इस !श्रोत्रों का शब्द है। त्वचा का वायु है इसी प्रकार मेरे प्यारे सर्वत्रता को जानना ब्रह्माण्ड का साकल्य कहलाता है। ऋषि मुनि इस साकल्य को एकत्रित करके ब्रह्मयाग करते हैं ब्रह्म आहुति देते हैं। ब्रह्म में आहुति क्या? प्रत्येक इन्द्रियों को ब्रह्म में, आत्म तत्त्व में समर्पित करके ब्रह्म की आभा में ले जाना ही मेरे प्यारे ब्रह्मयाग कहलाता है। !

आओ बेटामैं आज तुम्हें यह चर्चा प्रकट करने नहीं आया ह !ूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हमें ब्रह्मयाग करना है। हम ब्रह्म का चिन्तन करने वाले बनें। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले स्वर्ग में जाते हैं। ब्रह्म लोक में जाते हैं। वह इस ब्रह्माण्ड को अच्छी प्रकार जानते रहते हैं। आओ मेरे प्यारे सबसे प्रथम हमारे यहाँ !ब्रह्म का चिन्तन हो। ब्रह्म के चिन्तन के साथ ही हमारा आत्म चिन्तन भी प्रारम्भ होता है। परन्तु आत्म चिन्तन

और ब्रह्म चिन्तन दोनों एक ही सूत्र में पिरोने से ब्रह्मयाग बन जाता है। उसके पश्चात् द्वितीय जो याग है हमारे यहाँ देवयाग कहलाता है। देवयाग करने वाला बेटा मैं ! अश्वपति की चर्चाएं कर रहा था। महाराजा अश्वपति को जब विभाण्डक आदि ऋषियों मैं ऐसा ही प्रयत्न कर रहा हूँ। भगवान !ने यह निर्णय कराया तो राजा ने कहा प्रभु मनु ने जब राष्ट्र का निर्माण किया था। मैंने इस विद्या को श्रवण किया है और अध्ययन किया है। मैंने यह जाना है कि जब तक राजा स्वयं याज्ञिक नहीं होगा। मांगलिक नहीं होगा वह प्रजा को सुन्दर कदापि नहीं बन सकेगा। क्योंकि कर्तव्य में लाने के लिए मानव को मानव बनाने के लिए मानवीयता, राष्ट्रीयता हो क्योंकि दोनों का सम्बन्ध, दोनों एक ही सूत्र के मनके कहलाते हैं। तो मेरे प्यारे इसीलिए ऋषि मुनियों ने यह कहा ! है कि राष्ट्र को राजा ऊचा बनाना चाहता है तो स्वयं ऊचा बनने का प्रयास करे। प्रजा को सुखद बनाना चाहता है तो याग कर्म करने वाला हो। क्योंकि जिस कर्म को महापुरुष करते हैं उसी कर्म में प्रजा लग जाती है और जिस कर्म में प्‍रजा लग जाती है वह उसका कर्म और कर्त्तव्य बन जाता है और वही स्वर्ग और नरक कहलाता है। स्वर्ग तो इसलिए है कि जो राजा याग करता है और कहता है कि ऋण से उऋण होना है। प्रत्येक मानवप प्रत्येक देव कन्या से यह कहा जाता है कि तुम्हें ऋण से उऋण होना है।

ऋणों की विवेचना तो मैं कल के काल में दूंगा। केवल अब तो परिचय दे रहा हूँ। परिचय क्या है कि ऋणों से उऋण होना है। जब ऋणों से उऋण होने के लिए राजा प्रेरित होता है। प्रजा में कर्त्तव्य का पालन करता है तो जब राजा ऋणों से उऋण होने का प्रयास करता है तो प्रजा भी करती है। जब एक दूसरे का मानव ऋणी नहीं रहता है तो मानवप में सुखद और शान्ति की स्थापना हो जाती है। क्योंकि मानव जब तक ऋणी बना रहता है तो सुखद और शान्ति की स्थापना नहीं होती। सुखद और शान्ति वही मानव प्राप्त करता है जो कर्त्तव्यवादी होता है, महान होता है। तो इसीलिए ऋषि मुनियों ने कहा, हे राजन यदि तू अपने को और प्रजा को महान बनाना चाहता है तो ! तुझे महान बनना ही होगा और महान तू कैसे बनेगा? महान उस काल में बनेगा

जिस काल में तू याज्ञिक होगरा, मांगलिक होगा क्योंकि याग कर्म करना ही तेरा मुख्य उद्देश्य है जैसे राजा का एक एक श्वास, एक एक शब्द प्रजा के लिए होता है। जैसे राजा का एक एक कर्म, विचार ब्रह्म विचार होगा तो वह राष्ट्र के लिए होगा। देखो, यदि याग कर्म होगा तो वह भी राष्ट्र के लिए होगा क्योंकि राजा जैसा बरतता है वैसा ही प्रजा बरतती है। जैसे प्रजा बरतने लगती है वैसा ही राज्य मण्डल होता है, वायु मण्डल होता है और जैसा ही वायु मण्डल होता है वैसे ही देवता होते हैं जैसे देवता होते हैं वैसे ही यह ब्रह्माण्ड, यह विचार एक सूत्र में पिरो करके बेटा परम आनन्द ! को प्राप्त होता है।

आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को ब्रह्म चिन्तन करना चाहिए, ब्रह्म मनन करना है। जब ऋषियों ने राजा को यह कहा तो राजा ने कहा मेरे राष्ट्र में आप भोजन करो। मेरे राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं है, न मैं किसी का ऋणी हूँ। उन्होंने कहा कि कैसे स्वीकार करें? राजा ने कहा प्रभु मैं प्रातःकाल ब्रह्म का चिन्तन करता हूँ। उसके पश्चात् देवपूजा ! करने लगता हूँ। उसके पश्चात जब देवपूजा समाप्त होती है तो अतिथि पूजा में लग जाता हूँ। देव याग करता हूँ, पितर याग करता हूँ। यह पञ्च याग सदैव मेरे राष्ट्र में होते हैं। जब मेरे गृह में होते हैं और जब मेरी प्रजा में होते हैं तो मेरे राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं है। मैं भी ऋणी नहीं हूँ। मैं ऋषियों के द्वारा अपना याग कर्म करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे जब ऋषियों से यह !निर्णीत कराया तो मुनिवरों उन्होंने कहा याग किया जाए। ! तो याग करने के लिए यज्ञशाला का निर्माण करने लगे। उन्होंने एक यज्ञशाला का निर्माण किया। जब यज्ञशाला का निर्माण किया तो नाना ब्राह्मणों का निर्वाचन हुआ। यज्ञमान का निर्वाचन किया गया।

याग जब प्रारम्भ होने लगा तो एक ऋषि ने राजा से, प्रश्न किया और यज्ञमान से कहा हे यज्ञमानयह जो अग्नि में आहुति दी जाती घृत की !, साकल्य की यह आहुति कहाँ चली जाती है? तो मेरे प्यारेउस समय यज्ञमान कहता है !, हे ब्राह्मण वह ! आहुति पृथ्वी में विश्राम करती हैं। वह तमोगुण में प्रवेशकर जाती है। यह भिन्न

भिन्न आहुति जो प्रदान करता है वह पृथ्वी के अस्तित्व में चली जाती है। इसके पश्चात् वह मौन हो गये। मौन होने के पश्चात् उन्होंने कहा भगवन मैं आपसे यह जानना ! चाहता हूँ कि यह आहुति कहाँ जाती है? उन्होंने कहा यह तीन धारा वाली आहुति बनती है। यह पृथ्वी में प्रवेश कर जाती है। यह एक आभा में प्रवेश कर जाती है। यह सतोगुणी आहुति कहलाती है और एक आहुति अग्नि तत्त्व कहलाती है तीन धारा वाली यह जो अग्नि में तीन धारा वाली आहुति आभा में प्रकट हो जाती है। इसके पश्चात् ऋषि कहता है एक आहुति में तीन तीन धाराएं स्थापित हो जाती हैं। तीन धाराएं प्रारम्भ होती हैं। उनमें से तीन तीन धाराएं प्रारम्भ हो करके वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है िकि जब तीन तीन धाराएं प्रारम्भ होती है। एक एक में से तो जब ब्रह्म तत्त्व में जाती हैं तो 72 तरंगें उत्पन्न हो जाती हैं और वह 72जो 72 तरंगें उत्पन्न 72 होती है। तीनों में से यदि इनके ऊपर अनुसन्धान किया जाता है तो एक एक में से 199 तरंगों का जन्म हो जाता है। और वह वायुमण्डल में प्रवेश कर जाती हैं। 199 वायु मण्डल में जितनी गति परमाणुवाद की हो रही है। अणुवाद लोक लोकान्तर अपनी आभा में परणित हो रहे हैं मेरे प्यारे इन्हीं तरंगों के आधार पर यह ब्रह्माण्ड ! गति कर रहा है। अपनी आभा में रमण कर रहा है।

तो परिणाम क्या है बेटा इन वाक्यों का कि यह सूक्ष्म तम एक यज्ञमयी स्वरूप माना ! वायु मण्डल में रहते हैं। हम श्वास लेते !है। यही विचार बन करके बेटा हैं, प्राण की गति कर रहे हैं। हम जीवन को ऊचा बना रहे हैं। मुनिवरोंदेखो !, राजा का राष्ट्र महान बन गया। राजा ने कहा धन्य हो भगवन् याग कर्म करने के पश्चात् यज्ञमान ! उनको उत्तर दे करके मौन हो गया। ऋषि मुनि सन्तुष्ट हो गये। उन्होंने कहा यज्ञमान तो महान और विशाल हैं। मुनिवरों उसके पश्चात् उन्होंने एक प्रश्न और किया। पूर्व ! दिशा में तुम्हारा मुख है उन्होंने कहा इससे प्रकाश आता है। हम प्रभु से याचना करते ऊर्ध्वा में अध्वर्यु रहता है। पूर्व दिशा में प्रकाश !हैं कि हमें प्रकाश प्रदान करो। मेरे पुत्रो आता है। साकल्य का भण्डार पूर्वाअस्ति है यह वाक्य तो कल ही प्रकट करूंगा।

आज का विचार तो मैं केवल यह देने के लिए आया हूँ कि प्रातःकालीन मेरे पुत्रो !

ब्रह्म का चिन्तन करना चाहिए। ब्रह्म का चिन्तन जो करते हैं वह आत्म तत्त्व को प्राप्त करते हैं और जो आत्म तत्त्व वेत्ता होते हैं वह ब्रह्म को पाकर के वह उस महा आभा में परणित हो जाते हैं। उस आभा में परणित होने के पश्चात् देवतव उन्हें प्राप्त हो जाता है। वह देवता बन जाता है। वह ब्रह्म जिज्ञासु बन जाता है। ब्रह्म की आभा में रमण करने लगता है। आओ मेरे प्यारेआज मैं तुम्हें गम्भीरता ! में ले जाना नहीं चाहता हूँ। केवल विचार यह कि माता पिता हों, पति पत्नी हों, उनको आत्म चिन्तन करना चाहिए। ब्रह्मयाग करना चाहिए और याग कहते हैं चिन्तन को, मनन को और उन विचारों को ऊर्ध्वा में ले जाएं जैसे अग्नि साकल्य को ले करके, सूक्ष्म बना करके, अग्नि देवताओं का रूप बन करके सर्वत्र देवताओं को वितरण कर देता है, इसी प्रकार अपने विचारों को ले करके द्वितीय विचारों को देता चला जाए। देखो, उन्हीं विचारों से यह संसार ! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने के लिए नहीं आया !ऊचा बनता है। आओ मेरे प्यारे हूँ। विचार यह देनेके लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या का कर्त्तव्य है कि हम परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सदैव जानते रहें और उस आभा को जानते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। क्योंकि प्रत्येक मानवप यह चाहता है कि मेरा जीवन स्वर्गमय हो, मेरा जीवन आनन्दमय हो। आनन्द कैसे प्राप्त होता है? बेटा जो राजा करता है वह प्रजा करती है। माता पिता करते हैं उसे बाल्य बालिकाएं ! जो इनको जानता रहता !करती हैं। आचार्य करता है उसको ब्रह्मचारी बरतता है। बेटा है, इन वाक्यों के ऊपर चिन्तन और मनन करता है वही इस संसार में महत्ता और स्वर्ग के लाने का प्रयास करता है।

आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की आभा में रमण करते रहें और उसकी आभा को जानते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। यह है बेटाआज का वाक्। आज के व !ाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम एक दूसरे के ऋणी न रहें। मानवता हमारे जीवन में हो और इस संसार सागर से पार हो जाएं। तो मान अपमान का सागर है। कल मुझे समय मिलेगा तो कल अतिथि के सम्बन्ध में, एक दूसरे का जो ऋणी बना

हुआ मानव है वह एक दूसरे ऋण की चर्चाएं हम कल करेंगे। आज का वाक् अब हमारा समाप्त हो गया है।
आज के विचार विनिमय करने का अभिप्राय यह है कि आज हमने अपने विचारों की भूमिका बनायी है इस भूमिका के सन्दर्भ की चर्चाएं हमें इससे पूर्व के कालों में करेंगे। आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है। आज का विचार यह क्या कह रहा है कि हमें एक दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए और वह मानव स्वर्गमय रहता है जो एक दूसरे का ऋणी नहीं रहता। ऋणों की चर्चाएं कल करेंगे कितने प्रकार के ऋण होते हैं? इन ऋणों की चर्चा करने के लिए हमें सदैव अपने में मनन करते रहते हैं। प्रत्येक मानव को भी मनन करना है। यह है मुनिवरों आज का वाक्। समय मिलेगा तो शेष ! हम कल प्रकट करेंगे। यह आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पाठ !चर्चाएं बेटा होगा। लाक्षागृह, बरनावा समय बजे 3 दोपहर :

३ 18 03 1978 पुष्प 41 राष्ट्र कल्याण

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक !्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का हमने पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वदेवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह परमात्मा वरणीय माना गया है। मानो प्रत्येक मानव उसे वर्णन करता रहता है, और मानव की यह कल्पना रहती है ि मेरा जो वरणीय देव है, जो विचित्रता में संसार का नियन्ता है, अथवा निर्माण करने वाला है उस निर्माण वेत्ता के दर्शनों के लिए उत्सुक रहता है। तो हम उस प्यारे महान् देव के दिग्दर्शन करना चाहते हैं।
परन्तु यह विचार विनिमय कर लेना चाहिए कि परमात्मा का जो दिग्दर्शन है, वह क्या है? जितना भी यह ब्रह्माण्ड क्रिया में दृष्टिपात आ रही है। जड़ वस्तु है। परन्तु वह वस्तु ब्रह्माण्ड क्रिया में दृष्टिपात आ रही है। वह मेरे प्यारे प्रभु का कैसा अनुपम दिग्दर्शन ! तू उस महान् अपने प्यारे प्रभु को दर्शन करना चाहता है। उसकी जो !है। हे मानव

रची हुई वस्तुएं हैं, अथवा मानव शरीर है कैसा अनुपम है। प्रत्येक मानव इसी में लगा हुआ है कि मैं अपनी अन्तरात्मा को जानूं। मैं इस चेतना को जानना चाहता हूँ परन्तु यह एक विचित्रतामय जगत् है।

बेटा हम प्रभु को साधना के द्वारा प्राप्त करना चाहते हैं। साधक भयंकर वनों में ! विद्यमान है। कल्पना कर रहा है, वह अभ्यास करता हुआ अभ्यस्त हो रहा है, पर्वतों की कन्दराओं में विद्यमान है। वह कैसा प्रिय अनुसन्धान कर रहा है। अपने देव विश्व कर्मा के सम्बन्ध में अपने हृदय में नमस्कार कर रहा है। नमः हो रहा है और अपने को उस आभा में पहुंचाता रहता है। जैसे सूर्य की नाना किरणें सायंकाल में सूर्य में समहित हो जाती हैं। इसी प्रकार जितना भी यह अमूल्य जगत् यह अमूल्य आभामय एक अनुपम जगत् माना गया है, हम अपने इस देव को उसमें ही दिग्दर्शन करते चले जाएं। इसमें जब मानव दिग्दर्शन करता है तो उसे कण कण में प्रभु का दिग्दर्शन होता है।

विचार विनिमय यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को ऊँचा बनना है। प्रत्येक मानव ऊँचा बनना चाहता है परन्तु मानव कैसे ऊँचा बने? मानव उस काल में ऊँचा बनता है जब परमपिता परमात्मा को अपना वरणीय स्वीकार करता है और अपनी महान् तरंगों में प्रभु को तरंगित करता रहता है और चित्त में समावेश हो जाता है। इस प्रकार करने से मानव को एक अनुपम अनुभव होता है, पवित्रता उसे प्राप्त होती है। परन्तु आज समय इतनी आज्ञा नहीं दे रहा है आज मैं तुम्हें साधना के सम्बन्ध में विचार विनिमय करता चला जाऊँ।

शून्य प्रकृति से इस साधना के सम्बन्ध में परम्परा से मानव ने चिन्तन किया है। कोई मानव कहता है कि निद्रा को इसमें समावेश किया, इसकी जानने की उत्सुकता रही परन्तु प्रायः ऐसा नहीं। मानव जीवन में एक जीवन की तरंगें एक महत्ता में परणित होती रहती हैं। आओ मेरे प्यारेआज का हमारा यह विचार क्या कह रहा है !? आज का हमारा यह मानवत्व क्या कहता हे कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते रहें और उस महान् देवतव को धारण करते हुए इस संसार सागर से पार होते रहें। अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपनी कुछ धाराएं प्रकट करेंगे। क्योंकि इनका कल का !

एक विषय है उसको अधूरेपन में शान्त कर दिया है। उसके ऊपर अपना कुछ विचार देना चाहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः ओं तनुमां विद्या विच्यां त्वा मनअसी देवाः। अस्वश्चम् रुद्रा भद्रा विश्वा पुत्रा लोकाः।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी कुछ !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! वार्त्ता प्रकट कर रहे थे और वह वार्त्ता थी कि मानव को अंधकार के मार्ग से प्रकाश के मार्ग को जाना है। अंधकार के मार्ग से प्रकाश के मार्ग को जाना ही मानव का कर्तव्य है। चाहे वह किसी भी क्षेत्र में कार्य कर रहा हो चाहे वह छात्र हो चाहे गृहस्थ आश्रम का पालन कर रहा हो, चाहे वानप्रस्थ में रहने वाला हो, चाहे वह संन्यास में परणित होने वाला हो। परन्तु प्रत्येक मानव के लिए एक ही वर्णात्य है, एक ही प्रभु सबका वरणीय माना गया है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी कुछ साधना के ऊपर और प्रभु को अपना वरणीय स्वीकार कर रहे थे।

मानव का जीवन क्या कहता है कि हे मानवतू अपने जीव !न को आभा में युक्त कर और आभा में युक्त करता हुआ जीवन की महान् तरंगों में तरंगित हो जा। वास्तव में मैं आज यह विचार देने के लिए नहीं आया हूँ। यह मैं पूज्यपाद गुरुदेव के विचारों पर टिप्पणियां करने आया हूँ। केवल विचार विनिमय यह देने के लिए आया हूँ कि मानव समाज कैसे ऊँचा बनेगा। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने वाक्य प्रकट करते हुए कहा था हे मानव तेरा जीवन एक महान् और पवित्र होना चाहिए। मानव विज्ञान के क्षेत्र ! में प्रवेश कर रहा है, विज्ञान में ही जाना चाहता है। आधुनिक जगत् का वैज्ञानिक कहता है कि मैं प्रत्यक्षवादी हूँ और प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष्वा दोनों को मैं प्रत्यक्षता में ही अपने जीवन की महत्ता को ले जाना चाहता हूँ। विज्ञान जितना है प्रत्यक्षवाद में ही विज्ञान कहाता है। परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में अपना विशेष विचार विनिमय देने नहीं आया हूँ। केवल विचार यह प्रकट करने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव के हृदय में एक वेदना लगी हुई है। वह वेदनित हो रहा है। विज्ञान के युग में कि विज्ञान कैसा होना चाहिए। जिस भी काल में संसार के वैज्ञानिकों का समूह एकत्रित होता है तो एक

दूसरा दूसरे प्राणी प्राणी के सम्बन्ध में ऊँची उड़ान तो रहती नहीं। परन्तु नष्ट करने में लगा हुआ है प्राणी और यह उड़ान उड़ रहा है। यह परमाणुवाद के द्वारा संसार में एक राष्ट्र ने दूसरे राष्ट्र के उफपर आक्रमण किया। मानो उन पर अनुशासन किया जाना चाहिए। ऐसा आज का विज्ञान है आज के विज्ञान में प्रायः विज्ञान का दुरूपयोग हो रहा है।

पुरातन काल के वैज्ञानिकों को आधुनिक काल का वैज्ञानिक यह कहता है कि वह गो घृत को पान करने वाले वैज्ञानिक नहीं थे। मैं यह कहा करता हूँ कि हमारे यहाँ जितनी भी भू गर्भ और जितना भी आकाश गंगा के नाना लोक लोकान्तर हैं उनका हमारे ऋषि मुनियों का अध्ययन रहा है। परन्तु जितना भी विज्ञान रहा है वह मस्तिष्कों में नहीं परन्तु वह पोथियों में और प्रायः बाह्य जगत् में आता रहा है। मैं यह जानना चाहता हूँ। जब यह विज्ञान नहीं था, तो यह विज्ञानपूर्व ऋषियों ने, पूर्व आचार्यों ने नहीं जाना तो आज यह कैसे जाना गया? आज संसार की कौन सी ऐसी पोथी है, ऐसा कौन सा विचार है, जो विज्ञान में आज के मानव ने जाना है। परन्तु पुरातन काल में मैंने यह कहा कि विज्ञान इतना ऊँचा है, इतना महान् है कि जहाँ यन्त्र अन्तरिक्ष में गति कर रहा है, आज का जो विज्ञान है वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने के लिए तत्पर विचार विनिमय कर रहा है। परन्तु यहाँ जो पृथ्वी का वैज्ञानिक मंगल की कल्पना कर रहा है, और मंगल का वैज्ञानिक पृथ्वी की कल्पना कर रहा है, और ध्रुव का वैज्ञानिक जेठाय नक्षत्रों की कल्पना कर रहा है। कल्पना ही नहीं परन्तु वह वैज्ञानिक अपनी जीवनी शक्ति को लेकर वह विज्ञान की तरंगों को लेकर के तरंगित हर रहा है। यहाँ प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकांक्षा बनी हुई है कि मंगल में जीवन नहीं है, चन्द्रमा में जीवन नहीं है। आज का वैज्ञानिक कहता है कि इन लोगों में जीवन का कोई आभास प्रतीत नहीं होता। परन्तु कहीं कहीं इन लोकों में वह जीवन स्वीकार करने लगा है। परन्तु में यह विचारता रहता हूँ कि जो विज्ञान ही अधूरेपन में परणित है तो यह कैसे जाना जाए। मैं यह कहा करता हूँ कि जहाँ यह पृथ्वी है, जहाँ जल है, जहाँ वायुगति कर रहा है, अग्नि की तरंगें विद्यमान हैं वहाँ जनजीवन अनिवार्य होगा। चाहे

कोई भी लोक लोकान्तर हो, यह पृथ्वी है और कोई पृथ्वी हो, मंगल हो, चन्द्रमा हो चाहे वह सूर्य मण्डल क्यों न हो, बृहस्पति और जेठाय नक्षत्र क्यों न हो।
आधुनिक काल का वैज्ञानिक दो प्रकार की वार्त्ता प्रकट कर रहा है। कहीं वह विज्ञान को स्वीकार कर रहा है, कहीं विज्ञान को स्वीकार नहीं कर रहा है। मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें यह प्रकट करना चाहता हूँ कि प्रत्येक मण्डल में जीवन है और नाना प्रकार के मानो जैसे पञ्च महाभूत हैं यह पञ्च महाभूतों वाले प्राणी रहते हैं। कहीं अग्नि प्रधान है जो कहीं जल प्रधान है और कहीं यह पार्थिव तत्त्व प्रधान हैं। यह अपनी अपनी आभा में आभायित हो रहा है। जब मैं यह विचारता हूँ कि आधुनिक काल के वैज्ञानिक ने एक यन्त्र का निर्माण किया है और वह यन्त्र क्या है वह मानव को मृत्यु दे सकता है, परन्तु जीवन नहीं दे सकता। अरे, यही तो विज्ञान का दुरूपयोग है।
मैंने पुरातन काल में कहा कि आधुनिक जगत् में जहाँ नाना प्रकार की चित्रावलियों का दिग्दर्शन हो रहा है परन्तु इन चित्रावलियों में मेरी पुत्रियो की अश्लीलता के चित्र आ रहे हैं। इससे यह विज्ञान का दुरूपयोग हो रहा है। उन्हीं चित्रावलियों में, उन्हीं यन्त्रों में यदि महापुरुषां के जीवन चरित्र प्रारम्भ हो जाएं मानव जीवन की निर्माण चर्चाएं होने लगेंगी तो मानो यह विज्ञान का सदुपयोग है। इस विज्ञान का दुरूपयोग होना ही इस संसार को, समाज को, मानव को, रसातल में ले जाता है इसकी ध्रवुगति बन जाती है। उर्ध्वा न रह करके धुर्वा बन जाती है। और वह मानव मानव नहीं रह पाता। परिणाम क्या? जब मैं यह विचारता रहता हूँ कि आधुनिक काल का वैज्ञानिक क्या विचार रहा है। कि हम चन्द्रमा में चले गए हैं। मानो चन्द्रमा भी कोई लोक ऐसा है जहाँ मानव नहीं जा सकता। परन्तु यह विज्ञान ऐसा अनुसंगत है, इसमें मानव परम्परा से गति करता रहा है। मंगल में जाता रहा है और भी नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में गति करता रहा है।
मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था कि प्रभु यह विज्ञान क्या है? इसके सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि ऐसे ऐसे यन्त्र अन्तरिक्ष में गति कर रहे हैं लोकों की परिक्रमा कर रहे हैं जिनकी आयु दो सौ लाख वर्षों की है। ऐसे यन्त्र गति कर रहे

हैं। वायु मण्डल में, अन्तरिक्ष की आभा में गति कर रहे हैं। आधुनिक काल का वैज्ञानिक कहता है कि मैं प्रत्यक्ष वाद को स्वीकार करूंगा। जहाँ हमारे यहाँ दर्शनकार यह कहता है कि विज्ञान ही मानव का जीवन है, जहाँ विज्ञान में अज्ञानता रही है, विज्ञान में राष्ट्रीयता रहती है, धर्म की आभा समाप्त हो जाती है। धर्म उससे लुप्त हो जाता है, और जहाँ धर्म नहीं होता वहाँ विज्ञान भी कुछ समय के पश्चात् अग्नि के मुखार बिन्दु में परणित हो जाता है।

जब मैं यह विचारता हूँ कि नाना प्रकार की चित्रावली पुरातन काल में थीं। आधुनिक जगत् के वैज्ञानिकों ने भी जान ली हैं, शब्दों के साथ में जो विज्ञान गति कर रहा है मानो यह विज्ञान यह तो प्रभुके विज्ञान से को !ई विज्ञान नहीं है। प्रभु का विज्ञान कैसा अनुपम है। नाना प्रकार के प्राणी हैं परन्तु उन प्राणियों की भिन्न भिन्न प्रकार की गतियां होती रहती हैं और वे जो नाना प्रकार की गतियां हैं उन्हीं गतियों से वैज्ञानिकों ने उड़ान उड़ी है। उसी आभा से उड़ान उड़ी है और उड़ान उड़कर उन्होंने यन्त्रों का निर्माण किया है। इन पञ्च महाभूतों से ही जाना है, नाना प्रकार के प्राणी इनसे शिक्षा ले रहे हैं विज्ञान को जान रहा है। कैसा अनुपम विज्ञान है? उस प्रभु का ही विज्ञान एक महान् विज्ञान है।

यदि आज कोई राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होना चाहिए। जिस काल में विज्ञान का दुरूपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है, मेरी पुत्रियां अपने श्रृङ्गार को हनन करके अपने उदर की पूर्ति करती हों नृत्य का आयोजन करके यह कोई राष्ट्र राष्ट्र नहीं होता। वह मानव के चरित्र की आभा को नष्ट करने वाला एक विचार मानव की मृत्यु होता है, यह विज्ञान का दुरूपयोग है। विज्ञान के दुरूपयोग में मानव को आभा में परणित होना चाहिए। आज विज्ञान कहाँ आया है? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रकट कराया कि महाराजा उद्धालक गोत्र में पनदेत ऋषि हुए हैं। उद्धालक ! गोत्र विद्यमान हो करके एक यन्त्र का निर्माण करते हैं, और उस यन्त्र में अपने षोडश महापिता के दर्शन कर रहे हैं। आज का विज्ञान तो यह कल्पना भी नहीं कर रहा है। अभी उनके मनोनीत हृदयों में यह विचार भी नहीं आया है कि ऐसा भी कोई यन्त्र

निर्मित हो सकता है। जो सहस्त्रों वर्षों पूर्व जो सोलहवे महापिता मेरे समाप्त हो गएं हैं, लाखों वर्ष पूर्व जो हो चुके हैं उनका चित्र भी हम दिगदर्शन कर सकते हैं। अरे, ऐसा विज्ञान कहाँ आया है? आधुनिक काल में तो मानो अभी उस विज्ञान का जन्म हुआ है। औश्र विज्ञान के जन्म लेने के पश्चात् ही उसका दुरूपयोग होना प्रारम्भ हो गया। तो यह विज्ञान कौन सी स्थली पर स्थिर रह सकेगा? इसलिए मैं कहा करता हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रार्थना की है कि आधुनि काल का जो जगत् है इसमें विज्ञान का राष्ट्र में दुरूपयोग नहीं होना चाहिए। विज्ञान महान है। विज्ञान में जाने के पश्चात् आत्मतव में प्रवेश करता है, विज्ञान जानना बहुत अनिवार्य है। परन्तु विज्ञान का दुरूपयोग होना, यह मानवता नहीं कहलाती है। इसीलिए आज मैं अपने विचारों को देने के लिए आया हूँ।

मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह परिचय देना चाहता हूँ कि जैसे आधुनिक काल के वैज्ञानिक ने मानव के मर जाने के पश्चात् चित्रण करने के यन्त्र को जाना। परन्तु रक्त के बिन्दु से चित्रां का चित्रण आज का विज्ञान अभी तक नहीं कर पाया हैं कितना अधूरापन है विज्ञान में। इसीलिए मैं आज उड़ान उड़ने के लिए तत्पर हूँ। यहाँ भौतिक संसार में एक मंगल लोक का वैज्ञानिक है। उसका यान इस पृथ्वी मण्डल पर आता रहता है। यहाँ से चित्र ले जाता है चला जाता है। कोई यन्त्र यहाँ दृष्टिपात भी किया गया है, परन्तु यह मंगल लोक का वैज्ञानिक है। एक बृहस्पति मण्डल का वैज्ञानिक उड़ान उड़ रहा है और वह यह चाहता है कि मैं ध्रुव लोक में जाना चाहता हूँ। परन्तु आधुनिक काल का जो विज्ञान है वह इतना अनुपम है परन्तु जब मैं यह विचारता हूँ कि आधुनिक काल का वैज्ञानिक समुद्रों की यात्रा कर रहा है, समुद्रों के गर्भ में यात्रा कर रहा है इस अन्तरिक्ष के गर्भ में यात्रा कर रहा है और भी निचले स्थलों में यात्रा कर रहा है, लोक लोकान्तरां में जाना चाहता है और भी यात्रा कर रहा हैं परन्तु जब यह वाक्य आता रहता है, मेरा अन्तरात्मा यह कहता है कि अभी यह विज्ञान तो अधूरेपन में है।

आज के विज्ञान ने अभी तक यह नहीं जाना है कि कोई ऐसा यन्त्र भी होता है जैसे

सूर्य की किरणों आती हैं, प्राण नाशक औषधियों किरणों को साथ लाती रहती हैं उनसे प्राणों की रक्षा कैसे होती हैं? यहाँ प्राण नाशक मानो उनको जानकर के वह जो किरण है, वह जो एक रेखा है पृथ्वी के मध्य में वह परमाणुओं को शीतल बनाती है और पृथ्वी पर आती है वह प्राण पति वर्धक कहलाती है। अनुसन्धान करने से प्रतीत हुआ कि साकल्य आदि ऋषियों से कि एक यन्त्र दृष्टिपात कर रहा हैं और उस यन्त्र में यह विशेषता है कि मैं हूँ, ऐसा जो संसार को नष्ट कर सकता हूँ, मानो वह यन्त्र होने से तरंगों को एकत्रित करता रहता है, और यन्त्रों में जब वह प्राण वर्धक तरंगें ओत प्रोत हों जाती हैं, तो परिणाम यह कि यह रेखा नग्न रह जाती है। औश्र नग्न रह करके जिस राष्ट्र को नष्ट करना हो वह राष्ट्र परमाणुओं को अपने यन्त्र में धारण कर लेता है औश्र रेखा नग्न रह जाती है, सूर्य की किरणों अग्नि वाहनी उसी राष्ट्र को नष्ट कर सकती हैं जिस राष्ट्र के ऊपरले भाग में उस रेखा के परमाणुओं को अपने में धारण कर लेती है। तो परिणाम क्या कि यह विज्ञान है। आधुनिक जगत में तो इस विज्ञान का प्रारम्भ ही नहीं हुआ है। आधुनिक जगत् तो मेरे पूज्यपाद विज्ञान इतने अधूरेपन में है कि उसका अभी विचार भी नहीं आया। मैं यह नहीं कहता हूँ कि विज्ञान नहीं हैं, विज्ञान है। परन्तु विज्ञान के सदुपयोग राजा की एक सभा में होना चाहिए, और राजा की सभा में इसी प्रकार की आभा रहनी चाहिए।

एक यन्त्र हमारे यहाँ महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि ने निर्मित किया था। जो यन्त्र वायुमण्डल में गति कर रहा हैं परन्तु पृथ्वी के अन्तरिक्ष में परमाणु गति कर रहे हैं। उन परमाणुओं को एकत्रित किया और सौ सौ वर्ष परमाणु स्थिर कर दिया और उसी से यान गति कर रहा है। ऐसे भी परमाणु हैं परन्तु आज अन्तर्द्वन्द्व आ रहा है। आज जो विज्ञान की उड़ान उड़ी जा रही है पृथ्वी के गर्भ में जितना खनिज का निर्माण हो रहा है उसको मानव निकालता जा रहा है। अरे, मानव वह समय दूर नहीं है यदि और कोई धातु ! का निकास वैज्ञानिकों ने नहीं किया तो एक समय वह आने वाला है कुछ ही समय पश्चात् कि मानव की स्वांस लेते ही उसकी मृत्यु हो जाएगी।

परिणाम क्या मुनिवरों आपको तो सर्वत्र प्रतीत ही है कि पृथ्वी !मेरे पूज्यपाद गुरुदेव !

में जो जीवन शक्ति है वह एक एक परमाणु के समन्वय भी तो कहलाता है और जिसको मानव आंतरिक्ष में भिन्न रूपों में परणित कर रहा है। तो इससे यह प्रतीत होता है कि

कोई समय है उस समय की आभा में वह रमण कर रहा है, आभायित हो रहा है परणित हो रहा है, आनदित हो रहा हैं तो इसीलिए हमें विचार विनिमय करना हैं हमें अपने में ही विज्ञान को जानना है। विज्ञान है क्या? विज्ञान है इस प्रकृति के तत्त्वों को जानना और विज्ञान में अपने को रमण करना।

वैज्ञानिक मानव यह कहता है कोई चेतना है कोई कहता है नहीं है। परन्तु उस चेतना पर आश्रित हो करके मानव कर्म कर रहा है। आज का वैज्ञानिक यह नहीं जान पाया है कि इस शरीर को त्याग करके यह आत्मा कहाँ जाता है? आधुनिक जगत का वैज्ञानिक यह नहीं जान पाया है कि माता के गर्भ स्थल में एक बिन्दु से निर्माण होता है बालक पुत्रोंका परन्तु वह निर्माण कैसे हो रहा है !? कौन कर रहा है? यह भी मत कहो कि कौन कर रहाह ै? परन्तु वैज्ञानिक यह कहता है कि निर्माण हो रहा है। मैं यह कहा करता हूँ भोले मानव यह निर्माण तो किसी के करने से निर्माण हो रहा है। ! बुद्धि का निर्माण हो रहा है परन्तु मनस्तत्व यहीं विद्यमान है यह कैसा सुन्दर निर्माण हो रहा है, यह मानव नहीं जान सका है कि यह आत्मा क्या है? आधुनिक काल का जगत् क्या पूर्व का भी यह भौतिक विज्ञान यह नहीं जान पाया था कि यह मन क्या है? जिसकी गति इतनी तीव्र है। आज के वैज्ञानिक ने दूर दर्शन वाले यन्त्रों को जाना है परन्तु मन की यह उड़ान कितनी विचित्र है मन की उड़ान एक क्षण समय में अरबों और खरबों तरंगें उत्पन्न हो करके इस संसार का व्यापक स्वरूप धारण कर लेता है मन के इस तथ्य को नहीं जान पाया। दार्शनिक कहता है कि दर्शनकार कहता है कि यह नहीं प्रकृति का सबसे सूक्ष्म तत्त्व माना गया है। जिसका सम्बन्ध सुन्दर और पवित्रता से रहता है।

परिणाम क्या है आज का वैज्ञानिक जो उड़ान उड़ रहा है, वह प्रिय उड़ रहा है परन्तु जो द्वन्द्व हो रहा है। परन्तु आधुनिक जगत और भौतिक विज्ञान की मैं तुलना कर रहा

हूँ। राजा रावण के विधाता कुम्भकरण महर्षि भारद्वाज शाला में विद्यमान है और विद्यमान हो करके उड़ान उड़ रहे हैं कि स्वर्ण जैसी धातु में सुगन्धि लाना चाहता हूँ। यह सुगन्धि कैसे आएगी, इस सुगन्धि के ऊपर विचार विनिमय कर रहा है वह मुझे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने निर्णय कराया, मुझे भी अनुभव है कि महाराजा कुम्भकरण छह माह तक ! अपनी प्रयोगशाला में रहते और छह माह तक वह विद्यालय में विज्ञान की वैज्ञानिकों को शिक्षा देते रहते। आधुनिक जगत् यह कहता है कि कुम्भकरण तो छह माह तक निद्रा में रहता था मांस का आहार करता था, सुरापान करता था। परन्तु उनके जीवन की बहुत सी विचारधारा मुझे स्मरण हैं, जिन्होंने अपने जीवन में सुरापान नहीं किया। जिन्होंने अपने जीवन में मांस भक्षण नहीं किया। भारद्वाज की शाला में जो वैज्ञानिक हो वह भक्षक होगा या रक्षक होगा? वह रक्षक था भक्षक नहीं था। वह विज्ञान की तरंगों को जानता था, विज्ञान कैसा विशाल था, कि एक एक यन्त्र ऐसा आधुनिक काल में उस यन्त्र का निर्माण भी नहीं हुआ है। निचले स्थान में जलाशय बन गया है ऊपर से अग्नि की वर्षा हो रही है सर्वत्र सेना नष्ट हो जाती थी। इस प्रकार का यन्त्र आधुनिक काल में अभी प्रारम्भ भी नहीं हुआ। आग्नेय अस्त्र हैं परन्तु राम से भारद्वाज कहता है एक यन्त्र मेरा है जो वरुण अस्त्र है ग्नि को शान्त कर देता है इसी प्रकार आधुनिक काल का जो परमाणुवाद है, अणुवाद वह, मृत्यु के अन्वेषणों में चला गया है परन्तु जीवन के अवशेषों में नहीं पहुंचा है।

एक यन्त्र अग्नि प्रवेश कर सकता है, अग्नि जला सकता है परन्तु वरुण शक्ति से अग्नि को शान्त नहीं कर सकता आज का वैज्ञानिक। इसी प्रकार मैं कहता हूँ हे वैज्ञानिक ! तू वरुणास्त्रों का निर्माण कर ये गोष्ठियां होती रहती हैं कि परमाणु शक्ति को समाप्त किया जाए क्योंकि कपर मुनि बना हुआ है आज का राष्ट्रीयत्व बाह्य जगत् में कहता है कि परमाणु शक्ति शान्त हो और जब अपनी राष्ट्रीय गोष्ठी होती हैं तो कहता है कि परमाणु शक्ति ही तो द्रव्य है यही तो धन है संसार का। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि जितना अर्थ है संसार का वह वैज्ञानिक तथ्यों में माना गया है, जितना जिस राष्ट्र में विज्ञान होगा उतनी धातुओं का निर्माण होगा और जितनी धातु होगी उतना ही राष्ट्र का

द्रव्य प्रबल होता चला जाएगा। वह द्रव्रू पति बन जाएगा। परन्तु जो द्दव्य कहते हैं परमाणु शक्ति को तो शान्त करने के लिए क्यों उच्चारण कर रहे हैं।

आज मैं विशेष चर्चा देना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय यह देने के लिए आया हूँ। कि प्रत्येक मानव को विचारना है प्रत्येक मेरी पुत्री को विचारना है कि इस संसार में मानव जीवन को ऊँचा बनाने के लिए हमें प्रभु के समक्ष विनम्र बनना है जैसा पूज्यपाद ने अभी अभी मुझे प्रकट किया।

आधुनिक काल जो विज्ञान है समें विज्ञान का दुरूपयोग हो रहा है उस विज्ञान में ऋषियों के क्रिया कलाप होने चाहिए, यज्ञ इत्यादि होने चाहिए, इसमें समाज में सात्विकता और राष्ट्र अपने कर्त्तव्य का पालन कर सके। आधुनिक काल का राष्ट्र विचार तो प्रिय देता है, परन्तु जब क्रियाओं में नहीं आ पाता तो इससे यह प्रतीत होता है कि राष्ट्र में अपना अस्तित्व और अपनापन नहीं होता। इसीलिए कुछ होता प्रतीत नहीं हो रहा है। मैंने पुरातन काल में कहा है, विज्ञान को जानना चाहिए। विज्ञान होना चाहिए विज्ञान की तरंगें होनी चाहिए परन्तु विज्ञान का दुरूपयोग हो करके यहाँ समाज पतित नहीं होना चाहिए। यह विचार विनिमय करना होगा वैज्ञानिकों को राष्ट्र को। अन्यथा वह समय दूर नहीं है जब मानव मानव अग्नि मुखारबिन्दु में परणित होने वाला है।

आज जब मैं वायुमण्डल की तरंगों को विचारने लगता हूँ तो संसार में त्राहि त्राहि हो रही है। क्यों हो रही है? मूल कारण क्या है कि मानव ने धर्म की अपेक्षा की है। धर्म को नहीं जाना है। मैंने बहुत पुरातन काल में कहा था कि धर्म ही विज्ञान है, धर्म ही मानवता है, धर्म ही कर्त्तव्य का पालन है। आज हमें कर्त्तव्यवादी बन करके धर्म और मानवता को सदैव विचारना चाहिए। विज्ञान होना चाहिए मैं यह नहीं कहता कि नहीं होना चाहिए। परन्तु विज्ञान क्या था? मैंने पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न किया महाराजा हनुमान के सम्बन्ध में। वह हनुमान इतना ऊँचा विज्ञान जानता था कि वह अपने यान से उड़ान उड़ता है और वह सूर्य की किरणों की आभा में रमण कर रहा है और वह किरणां से ही यान की शक्ति को प्राप्त कर रहा है। किरणों से यान

गति कर रहा है और वह गति करता हुआ, सूर्य की किरणों से यान का निर्माण। वह लंका में माता सीता की खोज के लिए उसी यान से आ पहुंचे वह कहाँ है? जब समुद्र से दूर होने लगे तो वह उस यान में गए थे, वह यान सूर्य की किरणों से गति करता था। यहाँ ऐसे यान ऐसी ऐसी विज्ञान की तरंगें को जानना चाहिए, जो महान् सूर्य की किरणों से गति करने वाला हो।

आधुनिक काल का वैज्ञानिक अब तक ऐसा वाहन निर्मित नहीं कर सका है जो सूर्य की किरणों से गति करने वाला हो।

चन्द्रमा की शीतलता के द्वारा उन आभा की किरणों को ले करके गति करने वाला हो। देखो, हनुमान जी सूर्य विज्ञान को जानते थे। आधुनिक जगत् ने जाना नहीं और यह कहने लगा कि सूर्य को हनुमान ने अपने मुखारबिन्दु में धारण कर लिया। कंठ में धारण कर लिया था। अरे, कंठ में नहीं उनके कंठ में सूर्य का विज्ञान और ज्ञान था। वे इसको प्रसारित करते रहते थे, उसी में वे आभायित रहते थे। इसीलिए वह विज्ञान महान कहलाता है।

कौन वैज्ञानिक है जो लोकों की यात्रा कर रहा है? आधुनिक काल का वैज्ञानिक चंन्द्रमा में चला गया, उसी में वह ऐसा हो गया कि संसार को विजयी कर लिया है। यहाँ देखो, ब्रह्मचारी सुकेता अपने यान में विद्यमान हो करके गति करता है। वह अर्ध रात्रि क्या, चार पहर उसके आँगन में चन्द्रमा में गति करने लगता है और इसी प्रकार एक ही यान है और लोकों का भ्रमण करके पृथ्वी मण्डल पर यान आ रहा है। उसका 72 इस प्रकार का विज्ञान अब तक पृथ्वी मण्डल तक नहीं आ !यन्त्र आ रहा है। अहा पहुंचा है। विज्ञान अभी जन्म ले रहा है। विचारक आए हैं। विचारकों की आवश्यकता तो यहाँ सदैव रहती है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे बारम्बार यह वाक्य प्रकट कराते रहते हैं, यह प्रेरणा भी देते रहते हैं हे पुत्र तू वेदनित न हो। मैं वेदना करने नहीं आया हूँ। मैं तो केवल यह ! प्रकट करने के लिए आता हूँ कि मानव समाज को ऊँचा बनाना है। मानव समाज अपनी आभा में आभायित रहता रहे। परन्तु विज्ञान विज्ञान के आँगन में हैं। विज्ञान

होना चाहिए विज्ञान से ही आगे जा करके मानव आध्यात्मिक वेत्ता बनता है। पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल में कहा था कि जब मैंने उनसे यह प्रश्न किया कि भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान में क्या अन्तर्द्वन्द्व है। पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि भौतिक विज्ञान ऐसा आभायित है कि जब आध्यात्मिक विज्ञान में प्रवेश करता हैं तो भौतिकवाद के मार्ग से विचरण करके जाता है। इसीलिए संसार को जानना, परमाणुओं को जानना, तरंगों को जानना, सूर्य लोक में प्रवेश करना और भी नाना लोक लोकान्तरों में यातायात का बनाना और एक बात स्वीकार कर लो कि संसार में जितने भी लोक लोकान्तरां की यात्रा हैं, चाहे वह सूर्य मण्डल, चाहे बृहस्पति हो चाहे शनि हो कोई भी मण्डल हो परन्तु उसमें जीवन है। कुछ लोकों में पार्थिव तत्त्व हैं कुछ लोकों में जल प्रधन प्राणी रहते हैं किन्हीं में अग्नि प्रधान प्राणी रहते हैं। परन्तु जहाँ जीवन है जहाँ, जल है, जहाँ प्राणवादक वायु है वहीं प्राणी का जीवन विद्यमान है। राष्ट्र के राष्ट्र विद्यमान हैं। मंगल का राजा अपने राष्ट्र में शासन कर रहा है, चन्द्रमा का कर रहा है आज इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं।

आज के मानव ने यह जान लिया कि चन्द्रमा मैं जीवन का भाव भी स्वीकार करते हैं और अभाव भी स्वीकार करते हैं, भाव भी, अभाव भी। परन्तु में यह उच्चारण करता हूँ कि जहाँ पार्थिवता है पर्वतों की माला है, वहाँ वृक्ष अवश्य होगा और जहाँ पर्वतों की माला है वहाँ जल भी होगा, जहाँ पर्वतों की माला होगी वहाँ जीवन भी होगा, जहाँ जीवन होगा वहाँ राष्ट्र भी होगा। इसी प्रकार मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा है कि काल में। आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद है उसके राष्ट्र में विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होना चाहिए। यह जो विज्ञान दुरूपयोग हो रहा है इससे समाज पतित होता जा रहा है और जब तक यह विज्ञान का दुरूपयोग होता रहेगा, जब तक मानव अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करेगा और जब कर्त्तव्य का पालन नहीं करेगा तो यह समाज रसातल को चला जाएगा।

आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह निर्णय कराना चाहता हूँ कि यहाँ प्रत्येक मानव को वैज्ञानिक बनना चाहिए। यहाँ प्रत्येक

मानव को मानवता की आभा में रमण करना चाहिए। क्योंकि मानव जीवन ही एक जीवन है आज जिससे मानव बनते हैं। मैं प्रभु की अनुपम कृपा से पूज्यपाद गुरुदेव की शरण में आने से जीवन मुक्त बन गया हूँ। मेरी जीवन मुक्त गति बन गई हैं। यह क्या है? मैं तुम्हें यह परिचय देने आया कि विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए, धर्म का शोधन होना चाहिए धम्र में रूढ़ि न रहने चाहिए राजा तेरे लिए मैंने राष्ट्र उत्थान के लिए चार चरणों निर्णय किए हैं। सबसे प्रथम विज्ञान का सदुपयोग द्वितीय तुम्हारे यहाँ एक धर्म सभा हो और वह केसी हो? जो धर्म के ऊपर राष्ट्र का उससे विनाश न हो रूढ़ि और अज्ञान नहीं रहना चाहिए। अज्ञानता के आधर पर जितना यहाँ गुरुडमवाद का प्रसार होता है उतना ही राष्ट्रीयता का हनन होता रहता है। इसी प्रकार कोई भी साम्प्रदाय हो कोई भी रूढ़ि हो उसको राजा नष्ट करने का प्रयास करे। हे राजा तुझे भय नहीं होना चाहिए। तेरे द्वारा ब्रह्मचर्य होना चाहिए। क्योंकि ब्रह्मचारी को भय नहीं होता ब्रह्मचारी तो एक आभा में परणित रहता है महत्ता में रमण करता है। हे राजन ! यदि तू सैयद मुहम्मद के मानने वालों से भयभीत हो रहा है, कहीं ईसा के मानने वालों से भयभीत हो रहा, कहीं महावीर के मानने वालों से भयभीत हो रहा है, कहीं छात्रों से भयभीत हो रहा है इसका कारण विज्ञान सदुरूपयोग कहलाता है। इसका मूल कारण कि तेरे द्वारा आत्म बल नहीं है आत्म विश्वास नहीं है जिसमें तू अपने राष्ट्र की पद्धति को ऊँचा बना सके। राष्ट्र पद्धति केवल अक्षरों में रह गई है पोथियों में रह गई है। परैन्तु क्रिया नहीं है तो इन पोथियों का कुछ नहीं बनेगा। इसीलिए प्रत्येक मानव विचार विनिमय करना है। इन पोथियों के विचारों का इस बाह्य जगत् में लाना और यह राष्ट्र का कर्त्तव्य है।

एक समय भगवान् कृष्ण ने एक वाक्य बहुत ऊर्ध्वा में कहा था जब उनकी पत्नी ने कहा, प्रभु, जब आप दर्शन को जानते हैं। तो आप क्या करते हैं सूक्ष्म वार्त्ता तो उन्होंने एक वाक्य कहा था? हे देवी जिस कार्य को मैं कर रहा हूँ उस कार्य को जब साधारण ! समाज बरतने लगता है तो उसकी रूढ़ियां समाप्त हो जाती हैं इसीलिए हे राजा? तेरी जो निर्वाचन पद्धति है वह ब्राह्मण के द्वारा त्याग पूर्वक होनी चाहिए और आश्रम संन्यास

आश्रय एक अभावकृत होता जा रहा है। मानो यह जो प्रसार है, एक मानव देखो, ज्ञान की चर्चा कर रहा है एक मेरी प्यारी माता भी प्रभु की चर्चा कर रही है हे राजा हे ! राजा तेरे राष्ट्र है उसका अभाव नहीं होना चाहिए। यह उस काल में होगा जबराजा त्यागी होगा तपस्वी होगा।

एक समाज योगियों का भी होना चाहिए। जिससे योगाभ्यास हो। उनके द्वारा राष्ट्रीय द्रव्य का कुछ भाग होना चाहिए। इस प्रकार राजा के राष्ट्र में एक महत्ता आ सकती है। छात्र ऊँचा बने। एक ही गुरु के शिष्य गुरु के चरणों में विद्यमान हो करके मानव मानव में मानवता का प्रसार करते चले जाएं।

आधुनिक काल का शिक्षक ऐसा बन गया है कि उसके सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं जा सकता। अधूरापन है। द्वितीय एयह कि वर्ण व्यवस्था हो। बिना वर्ण व्यवस्था के इस समाज का आधुनिक समाज का ऐसा संकल्प बन गया है कि बिना वर्ण व्यवस्था के यह जातिवाद समाप्त नहीं हो सकती। इसीलिए विद्यालयों में वर्ण व्यवस्था हो, ब्रह्मचारी का निर्माण विद्यालयों में होना चाहिए। इसी प्रकार राजा के राष्ट्र में त्याग और तप होना चाहिए।

एक समाज बुद्धिमानों का हो जो राजा की अध्यक्षता में जितनी भी रूढ़ियां हैं सम्प्रदाय हैं वह राजा की उनका सम्मेलन हो और विचार विनिमय हो, शास्त्रार्थ हो, जिसको धर्म कहता है इनमें विज्ञान और मानवता आभायें हो वही राजा के राष्ट्र में माननीय धर्म माना गया है। ये विचार संसार को ऊँचा बनाने के हैं। इन विचारों के साथ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

मानो यह प्रजा को ऊँचा बनाने को राजा के राष्ट्र के लिए यह भिन्न भिन्न चरण हैं। सबसे प्रथम चरण राजा के राष्ट्र में त्याग हो और त्याग के साथ में ही जो राजा बना हुआ है वह संन्यास लेकर के संसार में भ्रमण करे। प्रजा को ऊँचा बनाए और उसकी पति संसार अपनाने के लिए तत्पर हो। त्याग हो और छात्रां में बल हो, बल कैसा हो? पवित्र हो और एक छात्र दूसरे से भयभीत न हो, आसक्त न हो। इसी प्रकार उन्हीं छात्रों का निर्माण विद्यालयों में हो, आचार्य वर्ण व्यवस्था करने वाले हों। वर्ण व्यवस्था हो और

एक समाज पद्यति, जिससे नाना प्रकार की रूढ़ियां समाप्त हो जाएं, और विज्ञान हो और विज्ञान का दुरूपयोग न हो, सत्य विज्ञान हो, सत्य का प्रसार विज्ञान के द्वारा हो तो राष्ट्र का कल्याण हो जाएगा। अन्यथा नहीं तो यह राष्ट्र चिन्तित होता चला जाएगा। आज का वाक् क्या कहता है कि हम परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। विज्ञान होना चाहिए। अब मैं गुरुदेव से आज्ञा चाहूँगा।

मेरे प्यारे आज मेरे पुत्र ने कुछ वैज्ञानिक तथ्य वर्णन किए। परन्तु पूर्ण रूपेण !ऋषिवर ! तो इन्होंने वैज्ञानिक तथ्य वर्णन नहीं किये। परन्तु इन वाक्यों में जितना इन्होंने कहा है आधुनिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों का मिलान करने का इन्होंने प्रयास किया है। आज का यह वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। अच्छा भगवान आज्ञा। आनन्द मंगलन स्थान बरनावा समय दोपहर बजे 3

४ 07 03 1979 पुष्प 41 विलासिता

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रां का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा। आज हमने पूर्व से, वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परम पिता परमात्मा के ज्ञान विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परम पिता परमात्मा विज्ञान स्वरूप माना गया है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें यह निर्णय देते हुए कहा था, हमारे यहाँ परम्परा से ही विचार विनिमय होता रहा है, और परम पिता परमात्मा के सम्बन्ध में उन नाना प्रकार का विचार ऋषि मुनियों के मस्तष्क में अथवा उनकी विचारशालाओं में और वैज्ञानिकों की विज्ञानशाला में ये भिन्न भिन्न प्रकार का विचार परम्परा से ही होता रहा हूँ। आज मैं पुत्रों को विशेष्ज्ञ चर्चा प्रकट करने नहीं आया ! हूँ।

विचार देने के लिए आया हूँ कि समाज में और मानव मस्तिष्कों में रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। क्योंकि प्रत्येक मानव को यौगिक बनाना है और अपने विचारों को यौगिकता में

ले जाना है। जिससे उस मानव की मानवता की महत्ता बनी रहे, और परम पिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसके विज्ञान की महिमा और यह नाना प्रकार की आभा में मानो सदैव रमण करता रहे। क्योंकि हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार की विचारधराएं यौगिकता में भी मानी गई हैं।

रूढ़ि भी भिन्न भिन्न प्रकार की हैं। रूढ़ि उसे कहते हैं, जिसमें समाज नियन्त्रण में नियत रहता है। जैसे मानव के मुखारबिन्द से शब्दों की रचना हो रही है। ध्वनि उत्पन्न हो रही है। एक ध्वनि में नाना प्रकार के शब्दों की रचना अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो जाती है। मेरे प्यारे प्रतिशब्द प्रति ध्वनि कंठ से उत्पन्न होती हुई शब्द का आकार बन करके ! ध्वनि आ !कंठ में समाहित होती रहती है। मेरे प्यारे रही ह। ै अब उस ध्वनि की जो विशिष्ट रचना है उसको यौगिकवाद कहते हैं। परन्तु वही जब बाह्य जगत् में प्रवेश करती है और अन्तरिक्ष में रमण कर जाती है, वही अपनी अपनी आभा को प्राप्त होती रहती है।

आओ मेरे प्यारे आज मैं यह उच्चारण करने आया हूँ कि रूढ़ियों का विनाश होना ! चाहिए। मानव की पद्धति विचित्र होनी चाहिए। परन्तु उसमें रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। क्योंकि ईश्वरवाद में जब रूढ़ि होती है वो रूढ़ि मानव को संकीर्ण बना देती है। विशालता नहीं रहने देती। क्योंकि परम पिता परमात्मा का जो मूल विषय है, परमात्मा की जो प्रतिभा है। वह मेरे प्यारेदेखो !, मानव को विशाल बनाने की प्रेरणा देती है। विशाल बनाने के लिए वह अग्रसर रहने के लिए सतर्क होती है। इसलिए प्रत्येक मानव को विशाल बनना चाहिए। और वह विशालता ही समाज और राष्ट्र और मानव को ऊँचा बना देती है। आज मैं विशेष चर्चा इस सम्बन्ध में प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार विनिमय में केवल यह देने आया हूँ। क्या मानव इस प्रकृति के स्वरूप को जानने के लिए आता है?

परन्तु रहा यह वाद की प्रत्येक मानव परम्परा से अनुसन्धान करता रहा है। प्रत्येक वेदमन्त्र पर अनुसन्धान। क्योंकि वैदिक जो शब्द हैं, वेद का जो ऋषि है, वे मानव को यौगिकवाद की प्रेरणा देता रहा है। मुझे स्मरण आता रहता है पुत्रो मुझे वह !बेटा !

काल स्मरण आता रहता है जिस काल में महर्षि यज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने आसन पर विराजमान रहते थे। नाना ब्रह्मज्ञ उनके समीप आते। क्योंकि वे ब्रह्माज्ञों में महान् कहलाते थे। विचार विनिमय ब्रह्म की ही विवेचना पर होता रहता है। तो हमारे यहाँ प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है। क्या वह अपने मानव जीवन को ऊर्ध्व बनाने के लिए ब्रह्म का चिन्तन करने वाला बने। क्योंकि ब्रह्म का चिन्तन एक ऐसा चिन्तन है जो मानव को विशाल बनाता है, जो मानव को यौगिक बनाता है।

रूढ़ियों से भी महान् रूढ़ियों का भी शस्त्र नहीं होता। वह जातिवाद की महत्ता को अपनाता रहता है। मेरे प्यारे आज मैं तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ। ! प्रत्येक मानव का अपने जीवन में एक महत्ता की आभा को रमण करना है। आज का विचार विनिमय क्या है? हम मानवयागों के सम्बन्ध में विवेचन करते रहते हैं। प्रत्येक मानव को यौगिक बनने के लिए हमें याग का अस्त्र लेना होगा। हमें याग करना होगा। मेरे प्यारेमहानन्द जी नाना प्रकार की प्रेर !णा देते रहते हैं। कल समय मिलेगा तो उनसे भी दो शब्दों की विवेचना हो सकेगी। परन्तु आज तो केवल यह उच्चारण करना है। क्या प्रत्येक मानव को यौगिकवादी बनने के लिए याग का अस्त्र लेना होगा। क्योंकि याग का अस्त्र लेना ही ऊँचा बनाना है।

मुझे स्मरण आता रहता है। त्रेता काल में जब महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के आश्रम में एक सभा हुई। सभा में नाना ब्रह्मवेत्ता और ब्रह्म जिज्ञासु भी और राष्ट्र के राजर्षि भी विद्यमान थे। उसमें यह विचारा गया कि समाज में रूढ़ि आ गई है। समाज में रूढ़ि नहीं आनी चाहिए। इससे देखो, रूढ़ियों से एक मानव विलासिता का अपना जीवन बना लेता है। परन्तु विलासिता का जीवन एक रूढ़ि कहलाता है। विलासिता का जीवन मानव का नहीं बनना चाहिए क्योंकि विलासिता के जीवन में रूढ़ियां बढ़ जाती हैं। ! मैंने बहुत पुरा !अग्नि प्रचंड हो जाती है। यह अग्नि प्रचंड नहीं रहनी चाहिए। मेरे पुत्रोतन काल में तुम्हें निर्णय दिया वशिष्ठ मुनि महाराज के एक सभा हुई। सभा में ऋषि याग करने लगे। परन्तु विचारों का याग और अग्नि होत्र का याग। जब अग्नि को अग्नि से प्रदीप्त करने लगे तो अग्नि की उपासना करने वाले नाना ब्रह्मवेत्ता कहते कि अग्नि

यागशाला में प्रविष्ट हो। यदि अग्नि वायु मण्डल में ओत प्रोत हो जाती है। यह अग्नि मानव देवताओं का दूत बन करके देवताओं को द्रव्य प्रदान करता है। यही अग्नि है जो मेरे प्यारे मानव के अन्तः हृदय में प्रदीप्त हो रही है। यही अग्नि है जो लोक नाना ! प्रकार के लोकों में प्रदीप्त हो रही ह ै। तो ये नाना प्रकार की जो अग्नि है ये ही मानव को नाना प्रकार की याज्ञिक बनने की प्रेरणा देती है। अग्ने, तू अग्नि है।

महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज जब याग समाप्त हो गया, तो उसने यह कहा कि समाज में विलासिता की रूढ़ि बन रही है और यह रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। परन्तु इस रूढ़ि के लिए प्रयत्न होना चाहिए, जिससे मानव भयंकर अग्नि से शान्ति को प्राप्त हो जाए। मुझे स्मरण आता रहता है। विश्वामित्र को यह परामर्श दिया कि तुम अयोध्या में प्रवेश करो और अयोध्या में प्रवेश करके तुम रघुवंश राजकुमारों को ऊँचा बनाओ। जिससे विलासिता रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। क्योंकि अयोध्या में भी विलासिता रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। क्योंकि अयोध्या में भी विलासिता की रूढ़ि आ गई थी। इस काल में मेरे प्यारेविलासिता की रूढ़ि को समाप्त करने के लिए और देखो !, राजा राम को राष्ट्र में आत्मा की रूढ़ि आ गई। क्योंकि वह आत्मा की रूढ़ि भी रूढ़ि कहलाती। एक दूसरे को गमन करने की जो विचारधरा भी एक रूढ़ि कहलाती है। इस रूढ़ि का भी विनाश होना चाहिए। ऋषि मुनियां ने अपने धर्मात्मा ब्रह्म लोकों के उस महान् दर्शन का अस्त्र लेकर के उन्होंने कहा कि रूढ़ियां समाप्त होनी चाहिए। मुझे स्मरण आता रहता है वे संभाएं जब स्मरण आती रहती हैं तो हृदय गद् गद् होने लगता है।

मुनिवरोंदेखो !, विलासिता की रूढ़ि को समाप्त करने के लिए, आत्म की रूढ़ि को समाप्त करने के लिए, जीवन की रूढ़ि को समाप्त करने के लिए उन्होंने भगवान् राम को ऊँचा बनाने के लिएः अग्रहर करने के लिए, विचार बनाया। महर्षि विश्वामित्र ने वन में याग की रचना की और याग के द्वारा रूढ़िवादी समाप्त करने लगे। क्योंकि याग के सामने ज्यादा जो रूढ़िवादी होते हैं। उनकी विचारधारा में रूढ़ि बनी रहती है। वे याग को नहीं चाहते। उनकी प्रबल इच्छा बलवती नहीं होती। क्योंकि उनकी गमन करने की प्रवृत्ति होती है, तो बेटा वे उनके याग को नहीं होने देते थे। परिणाम यह हुआ कि !

उन्होंने अयोध्या को गमन किया। वे महाराज दशरथ के समीप पहुंचे। महाराज ने नतमस्तक होकर कहा, प्रभु आप बिना सूचना के मेरे इस अयोध्या में आए हो। मुझे ! सूचना देते मैं आपकास्वागत करता। क्योंकि ब्रह्मवेत्ताओं का स्वागत होना चाहिए। उन्होंने कहा नहीं कोई बात नहीं। महाराज ने मेरी नगरी को कैसे पवित्र किया है? उन्होंने कहा हे राजन्मैं इसलिए आया हूँ !, मैं एक याग कर रहा हूँ, और याग को रूढ़िवादी नहीं होने देते मेरे याग की रक्षा होनी चाहिए। मैं तुम्हारे दो राजकुमारों को ले जाना चाहता हूँ महाराज दशरथ ने कहा प्रभु (नरेश) मैं इस अयोध्या का अग्रेश ! कहलाता हूँ। मैं याग रक्षा करने के लिए अस्त्र धारण करता हूँ किशोर बालक याग की रक्षा कैसे करेंगे। विश्वामित्र ने कहा नहीं मेरी यह इच्छा है। मुझेऋषियों की आज्ञा है और मेरी आत्मा का अन्तःहृदय कहता है कि राम, लक्ष्मण दोनों से याग की रक्षा हो सकेगी।

रघुवंश का यह नियम था। जैसे न्यायालय में राजा न्याय करता था। न्यायाधीश की भांति अयोध्या में देवियां भी न्याय करती रहती थीं। कौशल्या ने यह श्रवण किया कि विश्वामित्र का आगमन हुआ है। वे अपने न्यायालय को त्याग करके भी ऋषि के चरणों में ओत प्रोत होकर के बोलीं प्रभु आज्ञा। उन्होंने कहा देवी मैं राजकुमारों को लेने ! तुम इतने मोह !के लिए आया हूँ। अपने याग रक्षा के लिए। उन्होंने कहा हे राजन ममता में क्यों आ रहे हो? क्षत्रियों का कर्त्तव्य है कि वे ऋषि मुनियों की रक्षा करने वाला हो। वह धर्म और मानवता की रक्षा करने वाला हो। जब उन्होंने ऐसा कहा तो राजा दशरथ मौन हो गए। उन्होंने दोनो राजकुमारों को ले करके वहाँ से गमन किया। वे भ्रमण करते हुए याग की रक्षा करने को दण्डक वन में ले गए। नाना कर्त्तव्यहीन प्राणियों को गमन करते हुए वे उनको शिक्षा देते हुए कुरूक्षेत्रों को समाप्त करते हुए और जहाँ याग होना था, उस स्थान पर पहुंचे।

वहाँ विश्वामित्र याग करने लगे। राम और लक्ष्मण दोनों उनकी रक्षा के लिए सतर्क हो गए। जो आता था, उन्हें या तो वे शिक्षा प्रदान करते, अन्यथा उन्हें अपने अस्त्रों शस्त्रों से सम्पन्न कर देते। तो मुझे स्मरण है जब वह याग चलता रहा, याग की परम्पराएं

उर्ध्वगति को प्राप्त होती रहीं वह याग समाप्त हो गया। याग का अस्त्र ले करके राम और लक्ष्मण दोनों ने ऋषि का स्वागत किया। ऋषि ने मेरे दोनों राजकुमारों को धनुर्विद्या शिक्षा प्रदान करनी आरम्भ की। क्योंकि विश्वामित्र धनुर्विद्या के विशेषज्ञ कहलाते थे। उन दोनों की रक्षा के साथ दोनों को वे अस्त्र शस्त्रों की शिक्षा प्रदान करने लगे। इतनी उर्ध्वगति में उन्हें शिक्षा प्रदान की कि वे धनुर्विद्या के विशेषज्ञ बन गए। अहल्या विज्ञान क्या और भी नाना प्रकार के विज्ञान में रमण करने लगे।

इसके पश्चात् मुनिवरोंदेखो !, वे याग को समाप्त करके वहाँ से महाराजा विश्वामित्र और राम लक्ष्मण तीनों गमन कर गए। जब गमन किया तो मेरे प्यारेमहर्षि भारद्वाज मु !नि की विज्ञानशाला में जा पहुंचे। महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में ऋषि ने तीनों प्राणियों का स्वागत किया और विश्वामित्र से कहा, कहो भगवन् मेरे लिए क्या सेवा ! है? क्या आज्ञा है आपकी? उन्होंने कहा इन दोनों को योग की विज्ञान की शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए। राम और लक्ष्मण दोनों छः छः मास तक उस विज्ञानशाला में बेटा ! विज्ञान की शिक्षा लेते रहे। मुझे स्मरण है। राम को बनाने के लिए महापुरुषों ने रूढ़ि वैसे समाप्त नहीं होती। रूढ़ि उस काल में समाप्त !कितना यत्न किया। मेरे प्यारे होती है जब मानव को त्याग और तपस्या मे ं परिणत होना होता है। त्याग और तपस्या की वेदी पर आ करके अपने को ऊँचा बनाते हैं। राम और लक्ष्मण दोनों राजकुमारों ने रघुवंश ऊँचा बनाने के लिए उन्होंने भारद्वाज के यहाँ शिक्षा पा करके और वहाँ से गमन किया।

उन्होंने याग से निर्मित अस्त्रों में गमन करना, अन्तरिक्ष में यानों के द्वारा भ्रमण करना चित्रावलियों के विज्ञान को जानना आदि उनके यहाँ सर्व विद्याएं थीं। मुझे स्मरण आता रहता है, उन प्राणियों की ऊँची शिक्षा भारद्वाज मुनि से प्राप्त की थी। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था। क्या जब माता सीता को भयंकर वन में जा करके और जब लक्ष्मण राम के समीप आने के लिए सीता की रक्षा के लिए वहाँ एक रेखा उन्होंने देखो, पञ्चवटी पर स्थित कर दी। वह काल मुझे स्मरण है। कोई भी प्राणी आ जाए उस रेखा से भस्म हो जाता है। यह कौनसी विद्या थी? यह विद्या वह कहलाती

जो केवल विज्ञान नहीं केवल आभा कहलाती थी। यह कोई अनुपम विद्या थी। जिसको पान करता हुआ वैज्ञानिक बन जाता है। वह रेखा आभामिक रेखा कहलाती थी। स्वयं स्थित रेखा भी इसको कहते थे। यही विज्ञान अवरोहक कहता है कि मानव की रक्षा विज्ञान करता है। मानव की रक्षा मानव की आभा करती है। मैं यह उच्चारण कर रहा था क्या यह विद्या और शिक्षा का श्रेय विश्वामित्र को रहा ह। ै इन रूढ़ियों को गमन करने की जो मानव की एक रूढ़ि बन जाती है। भगवान् राम ने गमन करने वाले प्राणी को नष्ट करने के लिए अपना क्रम बनाया। जब वे इस शिक्षा को पा करके माता सीता के साथ दण्डक वन में रह रहे थे तो महर्षि लोमश मुनि महाराज और महर्षि अत्रि, माता अनुसूया कर्त्तव्य की शिक्षा देते रहे। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था जब अत्रि मुनि के आश्रम में भगवान् राम पहुंचे तो उन्होंने एक यन्त्र उन्हें प्रदान किया। मेरे प्रूरे वह क्या यन्त्र था? उन्होंने यह कहा था, यह यन्त्र जो मैंने अपनी विज्ञानशाला में निर्माण किया है। इस यन्त्र में चयह विशेषता है। भयंकर एक लाख बावन हजार सेनाएं इस एक यन्त्र से समाप्त हो जाएगी। मेरे प्यारेदेखो !, यह यन्त्र अत्रि मुनि ने उन्हें प्रदान किया। यन्त्र को राम ने स्वीकार कर लिया।

तुम्हें स्मरण होगा। मैंने तुम्हें निर्णय कराया था। क्या ये जो शबरी इन्हें प्राप्त हुई भयंकर वनों में शबरी का मिलन हुआ तो मेरे प्यारे तुम्हें यह काल स्मरण होगा कि ये शबरी ! महर्षि स्यामकेतु मुनि की कन्या कहलाती थी। और भारद्वाज मुनि के यहाँ यह विज्ञान में शिक्षा प्राप्त करती थी। शिक्षाओं को ग्रहण करती थी। विज्ञान में प्रवीण थी। रावण का पुत्र भारद्वाज मुनि का शिष्य कहलाता था। और शवरी को उन्होंने इसलिए गुप्तचर विभाग में स्थापित किया। जितना मेरा विज्ञान का यह कोश है, यन्त्र तन्त्र है, यन्त्र सब राम को शबरी ने प्रदान कर दिए थे।

भारद्वाज के यहाँ ऐसे ऐसे यन्त्र थे। मानव एक रेखा, जो यह रेखा पृथ्वी के मध्य भाग एक प्रति के आँगन में एक रेखा होती है। उस रेखा में जब सूर्य की किरण आती हैं तो वह रेखा सूर्य किरणों को शीतल बना देती है। और देखो, भारद्वाज मुनि के यहाँ एक यन्त्र था। स्वाति यन्त्र, उस स्वाति यन्त्र में यह विशेषता थी कि उस रेखा के प्राणवर्धक

जो शीतल बनाने वाले जो परमाणु थे, वो यन्त्र यह ग्रहण कर लेता था। अब जिस राष्ट्र को भस्म करना हो वह यन्त्र उन परमाणुओं को अपने में आकर्षित कर लेता। वह किरण जब नग्न रह जाती थी। जिस राष्ट्र पर वह रेखा नग्न रह जाती थी वह राष्ट्र का राष्ट्र भस्म हो जाता था। तो मेरे प्यारे भारद्वाज मुनि महाराज के इस प्रकार के यन्त्र निश्चित ! थे। उन्होंने अपनी निर्माण शाला में निर्मित किए थे। वे सब यन्त्र राम को प्रदान कर दिए।

ये विचार इसलिए मैं तुम्हें दे रहा हूँ कि हमें रूढ़ियों को समाप्त करने के लिए कितने त्याग और तप करने की आवश्यकता है। और ऋषि मुनियों का श्रेय बुद्धिमानों कि कितना अपनी बुद्धिमत्ता से कार्य करता है। राम ने उन यन्त्रों को शबरी से लेकर अपने को धन्य स्वीकार किया।

मैं आज तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ। तुम्हें स्मरण होगा जब समुद्र के तट पर भगवान् राम जा पहुंचे थे तो उस समय उन्होंने एक सभा की थी। उस सभा में महर्षियों की जहाँ सभा हुई वहाँ महाराज शिव का उन्होंने अवतरण किया और शिव को निमन्त्रण दिया। इस हिमालय से मानो कैलाश से जब ये आए तो उन्होंने नतमस्तक होकर, कहा प्रभुये राम का भक्त का !, वचन कहलाता है। और यहाँ मैं रावण को संग्राम करने वाला हूँ। अब भगवनमुझे क्या करना है !? आप क्या आज्ञा देंगे मुझे। तो महाराज शिव ने शिवास्तु उन्हें प्रदान किया। मैं इसको स्वीकार नहीं करता हूँ। मैं इसको रूढ़ि स्वीकार करता हूँ। तो राष्ट्रों में जब एक दूसरे को विजय करने की प्रवृत्ति बन जाती है तो यह रूढ़ि कहलाती है। राष्ट्रीय रूढ़ि है। और ये जो राष्ट्र रूढ़ि है। यह समाज का विनाश कर देती है। तो मेरे प्यारेदेखो !, मैं आज तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। ये जो एक दूसरे को नीचा दिखाने की प्रवृत्ति है। एक रूढ़ि कहलाती है। जो राष्ट्र रूढ़ि है। इस रूढ़ि को समाप्त करना चाहिए। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने यह कहा था। एक समय में क्या यह जो धर्म हैं धर्मों ! की रूढ़ि भी कहलाती थी। मानव धर्म के नाम पर नाना प्रकार की रूढ़ियां बन जाती हैं। वे रूढ़ियों को समाप्त करने के लिए राष्ट्र और बुद्धिमानों का कर्त्तव्य है कि इस रूढ़ि

को समाप्त करें। क्योंकि उस धर्म के, धर्म की जो रूढ़ि है। वे राष्ट्रों के राष्ट्रों में अग्नि प्रदीप्त कर देती है। और वे कैसी अग्नि है कि प्राणी प्राणी का भक्षक बन जाता है।

इसलिए देखो, प्रत्येक मानव को आवश्यकता है। आज का वायुमण्डल कहता है। आज के वायुमण्डल में भी रूढ़िवाद आ गया, तो यह रूढ़िवादी विचारों से समाप्त हो जाएगा। मेरे प्यारेजब मैं इस वायुमण् !डल का अध्ययन करने लगता हूँ और वायुमण्डल को विचारने लगता हूँ तो वायुमण्डल में मुझे रूढ़िवाद का एक आभास आता है। एक मानव ऐसी आग्रह दुर्गन्ध जैसे घ्राण में सुगन्ध और दुर्गन्ध दोनों आती रहती हैं। उस दुर्गन्ध का अस्तित्व मानव मस्तिष्क में, हमारी विचारधारा में, अन्तहृदय में वह मिलान करती रहती है। तो विचार विनिमय में क्या है? आज हमें विनाशक और रूढ़ियों को राष्ट्र की रूढ़ियों को समाप्त करना है। अतः त्याग और तप की आवश्यकता है। शिव का पूजन भगवान् राम ने समुद्र के तट पर किया था और शिवपूजा का अभिप्राय यह कि महाराज शिव की प्रार्थना की और यह कहा कि आप इनकी रक्षा करते रहते हैं। मैं ! इसको नष्ट करना चाहता हूँ। रूढ़ियों को नष्ट करना चाहता हूँ।

भगवान् राम ने अनेक समय रावण को शिक्षा देने का प्रयास किया। परन्तु नहीं हो का। क्योंकि जब रूढ़ि आ जाती है तो वो रूढ़िमानव का विनाश कर देती है और जब नाना प्रकार के धर्मों के नाम पर रूढ़ि आ जाती है। धर्म के नाम पर जो नाना रूढ़ियां हैं उस पर हमारे यहाँ कल प्रकाश होगा। उसके ऊपर प्रकाश की आभाओं में क्या ये कैसे मानव सभा समाप्त हो जाती है? मैं आज यह तुम्हें उच्चारण करने के लिए आया हूँ। क्या प्रत्येक मानव को वैदिक परम्परा से लेकर के और वेद की पवित्र धारा को ले करके राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाना है। आज का हमारा अभिप्राय यह है कि हम परमपिता परमात्मा की उपासना करते हुए परमात्मा का अस्त्र लेते हुए, धर्म और मानवता को ऊँचा बनाने के लिए सदैव अपनी मानवता को ऊँचा बनाना चाहते हैं।

आज का हमारा अभिप्राय है। आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। तुम्हें उच्चारण करने आया हूँ। क्या प्रत्येक मानव योगी महापुरुष उन्होंने याग का क्रम क्रिया कलाप जातिवाद में माना है। इसी प्रकार मानव के विचार में भी जातिवाद होना

चाहिए। आज मैं जातिवाद की चर्चा करने जा रहा हूँ। ये जातिवाद ही हमारे एक महान् बना देता है। इसलिए मानव के विचारों में रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। संकीर्णता नहीं रहनी चाहिए। जातिवाद रहना चाहिए और जातिवाद ही समाज को और राष्ट्र को और मानवता को ऊँचा बनाता है।

विशेष चर्चा आज तुम्हें प्रकट करने नहीं आया। तुम्हें यह उच्चारण करने आया हूँ कि प्रत्येक मानव को ऊँचा बनाना है। आज मैं प्रातःकाल की वह वार्त्ता स्मरण करने लगा, जहाँ ऋषि मुनि अपनी विचारधारा को लेकर के रूढ़ियों को समाप्त किया करते थे। हमारे यहाँ यह तपस्वी जन उन रूढ़िवाद को समाप्त करने के लिए तत्पर हैं। यह है हमारा आज का वाक् आज का वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि उसे बनाने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। परमपिता परमात्मा ने इस जगत् को रचा है। जगत् को इसलिए रचा कि प्रत्येक मानव को जातिवाद में रमण करना है। कर्त्तव्य का पालन करना है। और समाज को ऊँचा बनाना है। मानव देखो, जैसे समाज को ऊँचा बनाना है। समाज कर्त्तव्यवाद से ऊँचा बनता है। धर्म और कर्त्तव्य का तप अपना करके मननशील बन के समाज को ऊँचा बनाया जा सकता है। ये आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त होगी। लाक्षागृह बरनावा

५ 09 03 1979 पुष्प 41 महानन्द जी

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रां का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान की प्रायः चर्चाएं होती रहती हैं। क्योंकि मानव का जीवन सर्वत्र विज्ञानमय माना गया है।

विज्ञान में उड़ान उड़ने वाले नाना ऋषि हुए हैं। जिन्होंने बेटाइस परमाणुवाद के ऊपर ! और परमाणुवाद का जो धर्म है अथवा उसमें जो क्रियाकलाप होते रहते हैं उस पर

अनुसन्धान किया था। तो प्रायः परम्परा से अनसंधान होता रहा है।
मुझे वह काल स्मरण आता रहता है। जिस काल में मुनि भारद्वाज, ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धी, ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु, ब्रह्मचारी सुधाग्नि केतु, नाना ऋषियों ऋषि मुनियों के ये पुत्र विज्ञान में पारंगत थे। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना प्रकार के विज्ञान में यन्त्र थे मानो ब्रह्मचारी कवन्धी सूर्य में महान् पण्डित थे। सूर्य की किरणों के साथ ये नाना अपने यान में विद्यमान होकर के जैसे जैसे किरणें प्रातःकाल से सायंकाल तक किरणां का प्रभाव इस पृथ्वी मण्डल पर रहता और किरणें जब चली जातीं, तो इनका यान किरणों के साथ गति करता जाता। बेटा उनके यन्त्रग्रह यान ! कहलाते थे। आज मैं विशेष चर्चा विज्ञान के संबधं में तुम्हेंनहीं करूंगा। क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्दों की विवेचना करेंगे। आज तो मैं केवल इतना उच्चारण ! करने के लिए आया हूँ कि हमारा जो ज्ञान और विज्ञान है परम्परा से ही नाना ऋषि उड़ान उड़ते चले आए हैं।
मेरे प्यारेमैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें यह निर्णय ! देते हुए कहा था कि भारद्वाज ने महाराजा हनुमान जो अंजना के पवन पुत्र कहलाते थे। और उनको सूर्य की सर्व विद्या का ज्ञान था। मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय मुझे वर्णन कराया कि आधुनिक ! जगत यह कहता है। कि हनुमान ने सूर्य को अपने मुखारविंद में अर्पित कर लिया था। प्रायः ऐसा नहीं परन्तु सूर्य की सर्व विद्या उनके कण्ठ में विद्यमान थी। सूर्य की किरणों के साथ महाराजा हनुमान ने अपने पादुकर नाम के एक यन्त्र का निर्माण किया था। सूर्य की किरणों के साथ मानो सूर्य मण्डल की यात्रा करता था। तो सर्व विज्ञान हनुमान जी के कंठ में विद्यमान था।
विद्यांग ग्रहि अस्तानदेवस्य सूर्यः। ये सूर्य कितना महान् विज्ञानमय है। सूर्य की नाना प्रकार की किरणें आती हैं। किस प्रकार की स्वर्ण का निर्माण और भी नाना प्रकार की धातुओं का निर्माण होता रहता है। सर्व विद्या का कैसे निर्माण होता है। कैसे धातु का याग बनता है। कैसे शुष्क होता हैं इस सर्व विद्या को देखो, मुनिवरों पवन पुत्र ! हनुमान जानते थे। वह माता अंजना कितनी सौभाग्य शालिनी थी। उनके गर्भ स्थल

से हनुमान जैसों का जन्म हुआ।
सीता के खोजने के लिए जाने लगे तो अपने यान में विद्यमान होकर के लंका में पहुंच गए। अपना पदकेतु नाम का यन्त्र था। उसमें विद्यमान हो हनुमान वहाँ जा पहुंच। वे कितने विज्ञानमय थे। इसलिए मैं यह उच्चारण कर रहा था पुत्रो क्या यह मानव का ! सौभाग्यशाली गुण रहा है। ज्ञान और विज्ञान में जाना, ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ना, यह हमारे यहाँ बेटा आज मैं !सृष्टि के प्रारम्भ से विद्यमान है। तो मुनिवरों ! तुम्हें नाना प्रकार के विज्ञान की विवेचना करने नहीं आया हूँ। आज अपने पुत्र से कटु उक्तियों को समाप्त करके अपने दो शब्दों की विवेचना करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् तनुमाः हिरणमयः गछायत्यम देवयम सर्वाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे भद्र समाज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! विज्ञान की चर्चाएं कर रहे थे। और हनुमान जी के सम्बन्ध में ये विज्ञान में जाने के लिए तत्पर थे। परन्तु हमारे यहाँ परम्परा से जैसा पूज्यपाद गुरुदेव ने उच्चारण कि िया क्या यह समाज विज्ञान का रहा है क्योंकि हनुमान की चर्चा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव करते चले आ रहे थे। सूर्यकेतु नामक एक पोथी का निर्माण महाराजा हनुमान ने किया था। सूर्य विज्ञान के ऊपर नाना रूपों में उन्होंने उस पोथी का निर्माण किया। पोथी को आधुनिक जगत में महाभारत काल के पश्चात् जैन काल में अग्नि के मुखारबिन्दु में परणित कर दी गई थी। आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह कहा है कि कटु उच्चारण करना हमारा धर्म नहीं। परन्तु सच उच्चारण करना तो हमारा मौलिक गुण कहलाता है। आज मैं यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक धर्म की पुकार है। प्रत्येक मानव के लिए उच्चारण कर रहा है। परन्तु जब मैं यह उच्चारण करने लगता हूँ कि धर्म किसे कहते हैं? धर्म क्या है? पूर्व काल में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने धर्म की विवेचना की कि धर्म मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता हैपर आज धर्म कहाँ र !हता है। कुछ रूढ़ियों में और कुछ मानव देखो, यौगिकताओं में रहता है। आज मैं धर्म की इस प्रकार मीमांसा करने नहीं जा रहा हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि धर्मों में रूढ़ियां हैं। मानो

भिन्न भिन्न प्रकार का मानव धर्म स्वीकार करने लगा है।

धर्म से वैदिक साहित्य में एक ही को धर्म माना गया है। एक ही धर्म है। वह धर्म नाना प्रकार के रूपां में विभक्त हो रहा है। वह विभक्त धर्म नहीं हो रहा है। स्वार्थ वाद हो रहा है। क्योंकि देखो, धर्म का कदापि विभाजन नहीं होता। स्वार्थवाद धर्म को लेकर नाना प्रकार की रूढ़ियों में परणित हो जाता है। यदि यह स्वार्थ न हो तो यह देखो, धर्म को नाना प्रकार की रूढ़ियों में परणित करने वाला प्राणी नहीं होता। हमारे यहाँ नाना प्रकार के महापुरुष हुए हैं। जितने भी महापुरुष हैं उन्होंने देखो, एक ही धर्म की विवेचना की है। परन्तु मानने वालों ने अपना धर्म स्वीकार कर लिया। धर्म रूढ़ियों में परणित हो गया यह क्यों हुआ है? इसका मूल कारण स्वार्थ है इसका मूल कारण मानव की द्रव्य की लालसा है। इसका मूल कारण राष्ट्रवाद है।

एक मानव दूसरे प्राणी का भक्षण कर रहा है। यदि उस प्राणी से कहो कि तुम भक्षण क्यों कर रहे हो? वह कहता है हमारे धर्म में मानो उच्चारण किया है। अरे, धर्म में तुम्हारे कहाँ? धर्म तो एक ही होता है। सत्य उच्चारण करना तो मानव का धर्म है। क्या सत्य में भ्ी हिंसा कहलाती है। बहुत से प्राणियों का यह मत बन गया कि मानो हिंसा से ही प्रभु के दर्शन होते हैं। हिंसा का और प्रभु का क्या सम्बन्ध है? क्योंकि एक मानव प्रभु को पाना चाहता ह। ै वह प्रभु को पान करता हुआ उसको पाना चाहता हुआ हिंसक बना हुआ है। उसका हिंसा से प्रभु से कोई सम्बन्ध नहीं क्योंकि उसे प्रभु की प्राप्ति उस काल में होती है कि मानव धर्म के रहस्यों को जान लेता है वह धर्मज्ञ बन जाता है वह विवेकी बन जाता ह। ै वह महान् बन जाता है। तो उसे प्रभु के दर्शन होते हैं। वह अपनी अन्तरात्मा में प्रभु का दर्शन करता है।

इस राष्ट्रवाद में नाना प्रकार की रूढ़ियां बन गई हैं। स्वार्थ में कोई मुहम्मद के मानने वाला है, कोई ईसा के मानने वाला है। कोई नानक के मानने वाला है। और भी नाना प्रकार की रूढ़ियां बन गई हैं। स्वार्थ में कोई मुहम्मद के मानने वाला है, कोई ईसा के मानने वाला है। कोई नानक के मानने वाला है। और भी नाना प्रकार की रूढ़ियां बनी हुई हैं। क्यों ये रूढ़ियां बनी हुई हैं? रूढ़ियां का अभिप्राय है राष्ट्रवाद स्वार्थवाद। जो

स्वार्थवादी होंगे, महात्मा नानक को मानने वाला कहता है। मैं मानव धर्म को स्वीकार नहीं करता, मेरा धर्म भिन्न है। अरे, भोले प्राणी धर्म तो एक ही कहलाता है।

यदि मुहम्मद के मानने वालों से ये कहा जाय कि तुम हिंसा कर रहे हो, और धर्म में तो यह नहीं होता। हमारे मुहम्मद साहब ने जो कहा, उसको कर रहे हैं। तो देखो, मैं भोले प्राणी से यह जानना चाहता रहता हूँ। कल्पना करता रहता हूँ। यह प्राणी कहाँ चला गया है? अरे, हिंसा का और प्रभु का कोई सम्बन्ध है? परन्तु कोई सम्बन्ध नहीं है। अज्ञान कितना आ गया कि देखो, सत्ता को उच्चारण करने में सत्ता को अपनाने में अज्ञान को स्वीकार करने लगा है। अपने को धनी स्वीकार करने लगा है। ये कैसा समाज बन गया है। इससे इसके गर्भ में इसके सन्दर्भ में देखो, स्वार्थवाद हैं इसमें कोई धर्म नहीं है। धर्म केवल एक कहलाता है। सिर्फ उच्चारण करना मानव का एक धर्म है।

इसी प्रकार ईसा को मानने वाले से कहते हैं। ये क्या कर रहे हो? परन्तु एक ऐटम को लेकर के सबने उस चीज को अपना लिया उसी को धर्म स्वीकार कर लिया। मैं तो यह कहा करता हूँ, कुछ प्राणी ऐसे हैं। जो उनका जन्म नहीं होता, तो अज्ञान नहीं आता, जैसे देखो, मैं अभी उनका नाम और अज्ञान उच्चारण करने के लिए तत्पर नहीं हूँ, केवल देखो, ये कि हमारे यहाँ अग्नि के मुखारविन्द में नष्ट भ्रष्ट सारा सर्व साहित्य हो गया।

हमारे यहाँ नाना प्रकार की विद्याएं थीं। अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करता था। तो नाना प्रकार की विद्याओं का अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त करता रहा। जैसे हमारे यहाँ दीपक राग कहलाता था। हमारे यहाँ यह मलहार गान कहलाता था जिस गान को गाने से वृष्टि प्रारम्भ होती, जिस गान को गाने से दीप दीपमालिकाओं से गृहों में प्रकाश हो जाते।

एक हमारे यहाँ प्राण चिकित्सा कहलाती थी। परन्तु ये पोथी की पोथी सब अग्नि के मुखारविन्द में परणित हो गईं। अरे, लेखनीबद्ध करने वाले लेखनीबद्ध करके चल गए। परन्तु ये स्वार्थी समाज उनकी लेखनियों को भी समाप्त कर गया। ये स्वार्थ कैसा स्वार्थ

आया? आज मैं यह उच्चारण करने आया हूँ। क्या धर्मों को नाना प्रकार की रूढ़ियों में नहीं परिवर्तित कर दिया? धर्म तो केवल एक है।

मैं राष्ट्रवादियों से उच्चारण करता रहता हूँ। मानो यह उच्चारण करता हूँ, अरे, भोले राजा आज तुम जो राष्ट्रवाद को अपनाने के लिए नाना प्रकार के धर्मों की जो रूढ़ियां बना रहे हो। ये क्यों बना रहे हो? मानो यह तुम्हारा स्वार्थवाद है। द्रव्य को एकत्रित करने में आज का राष्ट्रवाद लगा हुआ है। द्रव्य को एकत्रित कर रहा है। मानव धर्म और मानवता की रक्षा करने का कोई विचार कोई सा कार्य, ही नहीं है। क्योंकि वह केवल द्रव्य को एकत्रित करना, अपने गृह को द्रव्य की अग्नि में परणित करना ये आज के राष्ट्रवाद का कर्त्तव्य बन गया है। मानव जहाँ प्राणियों की रक्षा करने वाले बनते वहाँ प्राणी का भक्षण हो रहे हैं तो समाज का क्या बनेगा? मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है। मैंने तो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल में कहा था। क्या देखो, संसार में भयंकर अग्नि प्रदीप्त होने वाली है। तो आज पुनः से यह उच्चारण करने के लिए जा रहा हूँ क्या ये समाज ! अग्नि के मुख में जा ही रहा है। अग्नि, आ ही रही है। मानव की पुकार चल रही है। आज का वैज्ञानिक समाज यह कहता है।

बहुत पुरातन काल में वैज्ञानिक यह कहा करते थे कि हमने विज्ञान को जाना है। मानव का विकास हो गया है। मानव विज्ञान के युग में चला गया है। अरे, उन पोथियों को उन्होंने दृष्टिपात नहीं किया, जिन पोथियों में विज्ञान, जिन पोथियों में वेद के मन्त्रों में विज्ञान ही विज्ञान है आ हा जिन ऋषि मुनियों ने जिन पोथियों को निर्धारित किया। ! परन्तु क्या करें, कुछ तो मानव देखो, मुहम्मद के मानने वाले ने अपने स्वार्थवाद में अग्नि के मुख में परणित कर दीं। कुछ के मानने वालों ने, स्वार्थवाद के मानने वाले ने उनके स्वार्थवाद ने अग्नि में सर्व साहित्य समाप्त कर दिया। परन्तु देखो, हमने कहा इस पोथी का निर्णय प्रस्तुत करता हूँ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यही उच्चारण करता रहता हूँ। क्या इस समाज का जो वास्तविक साहित्य है वह प्राप्त होना चाहिए।

भगवान् राम के सम्बन्ध में और भगवान् कृष्ण के सम्बन्ध में नाना प्रकार की रूढ़ियां बन गई हैं। वो रूढ़ियां समाप्त होनी चाहिए। परन्तु देखो, प्रभु और धर्म के सम्बन्ध में जो ये

रूढ़ियां हैं उनको समाप्त करने का मानव का कर्म बनना चाहिए। राष्ट्रवाद का यह कर्म होना चाहिए कि यह समाज कैसे ऊँचा बनेगा? नहीं तो यह समाज नाना प्रकार की विभक्त क्रियाओं में ये समाज परिवर्तित होता रहता है। केवल धर्म के नाम पर राष्ट्रवाद में स्वार्थवाद की अग्नि पर मानव अपने जीवन, अपने राष्ट्रों का विभाजन करता रहता है मैंने बहुत पुरातन काल में यह कहा था। अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कि समाज को ऊँचा बनाने के लिए धर्म रहना चाहिए। परन्तु रूढ़ियों को समाप्त कर देना चाहिए। हे राजन ! आज यदि कोई अपने राष्ट्र को मानव व्यास और गौतम का राष्ट्र बनाना चाहता है। हे यदि तू राम राज्य की कल्पना कर रहा है तो तुझे नाना प्रकार की ये जो धर्म !मानव के नामों पर नाना प्रकार की जो रूढ़ियां बनती चली जा रही हैं। उन रूढ़ियों में एक राष्ट्र एकता जो चली आ रही है। विभक्त होने की क्रिया बनती चली आ रही हैं। विभक्त होने की क्रिया बनती चली आ रही है। हे राजन तेरे राष्ट्र में यह नहीं होना चाहिए। ! यदि यह नहीं होगा तो राष्ट्रो ं में अग्नि प्रदीप्त रहेगी।

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कई कालों में प्रकट करते हुए, कहा था, एक मानव, एक प्राणी, एक धर्म के नाम पर ही मानव को नष्ट करने के लिए तत्पर हो रहा है। अरे, ये देखो, वेद तो यह नहीं कहता, देखो, तुम्हारी परम्परा यह नहीं कहती, क्या मानव मानव का धर्म के नामों पर भक्षण होना चाहिए। या नष्ट कर देना चाहिए धर्म तो एक ही धर्म है। देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में कहा था।

देखो, महात्मा नानक ने अपने शब्दों में यह कहा था। हे मानव यदि अपने अन्तःकरण ! को तूने ऊँचा बनाना है। एक रक्त का बिन्दु तेरे वस्त्र पर, वो वस्त्र पर से समाप्त नहीं होता। तो तेरा जो अन्तःकरण है। अरे, दूसरे के रक्तों को पान करने वाले प्राणी तेरे अन्तःकरण में क्या वह जो तेरे वस्त्र पर से नहीं जाता वो, तेरे अन्तःकरण पर से कैसे चला जाएगा? यह महत्मा नानक ने कहा था। परन्तु देखो, इसका परिणाम बन भिन्न गया महात्मा नानक के मानने वाले ये कहते हैं क्या यह जो हमें हमारे गुरुओं ने उच्चारण कर दिया है। मानव देखो, गुरुओं ने नहीं किया, तुम्हारी रचना ने कर दिया तुम्हारी रचना इतनी विकृत बन गई है। कि दूसरे के गर्भों को और दूसर प्राणी को नष्ट करने

में और आहार बनाने में तुम्हें प्रसन्नता होती है। तुमने अपने उदर की पूर्ति करने के अपने साधन बनाए हैं।
मैं आज विशेष चर्चा नहीं प्रकट करने जा रहा हूँ। हमारे यहाँ देखो, दैवी सम्पदा वाले ने हमारे यहाँ भी दैवी संपत्ति वालों ने नाना प्रकार की रूढ़ि बनाईं। और रूढ़ि बनाकर के वाममार्ग बन गया। कैसा बना? मानव देखो, देवी के नामों पर वे अपने हिंसा करके अपने उदर की पूर्ति करके पालन करते हैं। हे मानवयह क्या हो रहा है !? क्या यह धर्म के नामों पर कैसा खिलबाड़ हो रहा है। प्रभु के पान करने के लिए कैसा खिलबाड़ है। मैं कहता रहता हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाता हुआ, हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ! ये रूढ़ियां हैं ये रूढ़िया राजा को नष्ट करनी चाहिए। राजा को शक्तिशाली बनना चाहिए और निभ्रांति नेता बनता हुआ, रूढ़ियों को समाप्त करना चाहिए। मैं अपने पूज्यपाद ग 1रुदेव से यह पकट कराता हुआ जा रहा थाक्या हमें ही समाज के लिए क्या देना है? हम समाज को क्या उच्चारण करें? क्यों यह इतना विकृत बन गया है। राष्ट्रवाद में स्वार्थ आने से स्वार्थवाद की वेदी पर प्रत्येक राष्ट्र का प्राणी अपने में कटिबद्ध होता हुआ प्रसन्न हो रहा है। आज मैं इन वाक्यों में जाना नहीं चाहता हूँ।
मैंने बहुत पुरातन काल में यह निर्णय देते हुए कहा था कि हमारे यहाँ ये नाना प्रकार के महापुरुषों के नामों पर ये नाना प्रकार की रूढ़ियां बन रही हैं। ये समाप्त होनी चाहिए। ये रूढ़ियां मानो मानव का भक्षण करने को तत्पर रहती हैं। आज मैं यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ। मैंने पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञा ली ह। े और यह कहा है कि आज का विज्ञान का युग कहता है कि हमने यह विज्ञान जाना है। परन्तु जब मैं ये विज्ञान के युग की चर्चा करता हूँ। हमारे यहाँ भारद्वाज मुनि, अत्रिमुनि और राम पृथ्वी के सर्व गर्भ को जानते थे पृथ्वी के कणों को सुगन्ध से ही यह उच्चारण करते थे कि इसमें कितना खनिज कितनी दूरी पर विद्यमान है। एक केवल गन्ध से ही बता देते थे। यहाँ नाना प्रकार की विद्याएं थीं, उन विद्याओं का लोप हो गया। क्योंकि साहित्य समाप्त हो गया। साहित्य अग्नि के मुख में चला गया।
आज साहित्य की चर्चा करते हैं उसे कहते हैं कि यह पाखण्ड हो रहा है। परन्तु जब

मैं यह उच्चारण करता हूँ तो मुझे अश्रद्धा हो जाती है श्रद्धा नहीं रहती। परन्तु देखो, यहाँ वराहमिहर कृत देवस्यामः। इन रूढ़ियों का परिणाम यह होता है। क्या महापुरुषों को विषों का पान करना पड़ता है। जब विषों का पान करना होता है तो इसको पान करके भी यहाँ महान पुरुष समाज को सुमार्ग देकर चले जाते हैं। परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में कोई विवेचना नहीं करूंगा। विचार विनिमय क्या है? केवल यह है कि हमें अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए और धर्म की रूढ़ियों को समाप्त करना चाहिए। क्योंकि रूढ़ियां समाप्त नहीं हांगी तो धर्म नहीं होगा।

धर्म भी श्रद्धापूर्वक होना चाहिए। धर्म भी बुद्धि को धारण करके होना चाहिए यह नहीं कि देखो, नेत्रों को शान्त करके हम उसको स्वीकार करते चले जाएं। विचार विनिमय क्या? मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बारम्बार वही विज्ञान की चर्चाएं कहीं धर्म की चर्चाएं, राम का साहित्य नाना रूपां में ये उच्चारण करते रहते हैं।

यहाँ तो ऐसे ऐसे महापुरुष हुए हैं। जिन्होंने विज्ञान को लेकर के विज्ञान के ऊपर अपने महापिताओं के दर्शन किए हैं। आज का विज्ञान कहाँ पहुंचा है? मेरे अपने पूज्यपाद गुरुदेव के पिता महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज जब विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करते थे। इन्होंने एक यान का निर्माण किया था। उन्होंने अपने यन्त्र का निर्माण किया था। जैसे विद्यालय में विद्यमान होकर के विद्यार्थी अपने गुरुओं के चरणों में शिक्षा ग्रहण करते थे जो देखो, उनके शब्द हैं वे अन्तरिक्ष में गति करते थे। वे गति करते हुए शब्द और उनके चित्र उतनी पूरी पर विद्यमान होते थे। उतनी दूरी के चित्र वह अपने यन्त्रों में दृष्टिपात करते थे वे जो अपने यन्त्रों में दृष्टिपात करते थे। आज का देखो, मानव कहाँ पहुंचा है। उस विज्ञान पर।

एक समय महर्षि सुकेता, महर्षि सोमकेतु दोनों ऋषि अपने आसन पर विद्यमान थे। दोनों आसन पर विद्यमान होकर के महर्षि विभांडक क्रोधकेतु वहाँ वर्तमान थे। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने स्मरण कराया कि वे जब अनुसन्धान करने लगे, तो उन्होंने यह विचारा कि हम उस राष्ट्र की चर्चा को उस राष्ट्र की चित्रावली लेना चाहते हैं। जो अब

से एक करोड़ वर्षों पूर्व राष्ट्र के राजाओं के जो शब्द थे। वहाँ किस प्रकार का विज्ञान था तो उन्होंने देखो, अपने यन्त्रों में अपनी चित्रावलियों में उस राजा के शब्द, वह कैसे शासन करता था, उस शासन में कैसा विज्ञान था, वह सर्व विज्ञान अन्तरिक्ष में से परमाणुवाद के द्वारा उनके यन्त्रों में साक्षात् दृष्टिपात होता था। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था कहा कि भगवन्यह क्या है !? उन्होंने कहा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह करते थे। क्या यह राष्ट्र राष्ट्रवाद का जो विज्ञान ह। ै अब से करोड़ों वर्षों का जो विज्ञान है। वह अन्तरिक्ष में शब्दावली में विद्यमान है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आपने ही मुझे कृपा की। परन्तु विज्ञान को जानने की आज एक मानव अपनी आभा में यन्त्रों में विद्यमान होकर के वह सूर्य मण्डल में जा रहा है। वह शुक्र में जा रहा है। वह मानव देखो, अरुणि मण्डलों में ग ति कर रहा है। आज का विज्ञान तो आधुनिक काल का विज्ञान तो प्रारम्भ की जैसे वाल्यावस्था में है। जैसे बाल्य अपने गुरु के द्वारा प्रारम्भ की कक्षा में प्रारम्भ होता है। आज का विज्ञान तो प्रारम्भ की कक्षा में है। आज मैं यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ।

मेरे पूज्यपाद गरुदेव राम की चर्चा कर रहे थे। जब महाराज शिव की उन्होंने पूजा की और महाराज शिव से आज्ञा प्राप्त करने लगे, तो महाराजा शिव ने दो यन्त्र दिए। उन्होंने और यह कहा हे राम ये यन्त्र ऐसे है। जिससे इस राजा रावण की सर्व सेना अग्नि ! के मुख में चली जाएगी। परन्तु दूसरा यन्त्र ऐसा है जिससे वृष्टि प्रारम्भ होने लगेगी मैं !और रावण की सेना की सुरक्षा होगी। और तुम्हारी सेना की सुरक्षा होगी। हे राम तुम्ह्हें यन्त्रों को दे रहा हूँ। सचेत कर रहा हूँ। क्या मैंने रावण के पुत्र मेघनाद को पूर्व में शक्ति प्रदान कर दी है। जब राम और रावण का संग्राह हो रहा था, महाराजा मेघनाद ने एक यन्त्र ऐसा आकाशमें त्यागा कि उससे अग्नि की वृष्टि होने लगी। अग्नि की जब वृष्टि होने लगी तो जितनी भी सेना थी भगवान् राम की सेना नीचे जलमग्न हो रही थी और उर्ध्वा में अग्नि की वृष्टि होने लगी तो राम ने देखो, उस यन्त्र का प्रहार, किया जिस यन्त्र से वृष्टि प्रारम्भ होने लगी वो अग्नि शीतल हो गई। और अपनी सेना की रक्षा

कर ली।

आज का विज्ञान क्या है? कि अग्नि के यन्त्र का तो निर्माण हो गया है परन्तु जलवृष्टि के यन्त्र का निर्माण नहीं हो सका अब तक नहीं हुआ है अरे, यह तो विज्ञान ही क्या? अभी वह विज्ञान नहीं आया। आज का वैज्ञानिक संसार को प्रजा को सेना को नष्ट कर सकता है, परन्तु उसकी रक्षा कैसे होगी? वह यन्त्र नहीं उस यन्त्र का निर्माण नहीं तो ये विज्ञान समाज में अधूरा हम स्वीकार करते हैं। परन्तु देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में कहा है। क्या यह विज्ञान होना चाहिए? परन्तु इस विज्ञान की आभा पर प्रत्येक मानव स्थिर रहना चाहता है यह विज्ञान तो मानव को नष्ट करने वाले हैं। देखो, उस यन्त्र का निर्माण हुआ, उसमें चित्रावलियां आई हैं। मेरे पूज्य मेरे विद्यार्थी जो ! छात्र जीवन के हैं। वे उन यन्त्रों को चित्रावलियों को दृष्टिपात करते हैं और उनको देखने की कहते हैं। मनोरंजन को आभा क्यां कहते हो? उसे विनाश की आभा क्यों नहीं उच्चारण करते हो। क्योंकि मैं तो विद्यालय में विद्यार्थी रहा हूँ। और मैं गुरुजन भी रहा हूँ। जब गुरु और शिष्य दोनों नर्तकियं के नृत्यों को दृष्टिपात करते हैं। तो कैसे मैं इस समाज को ऊँचा उच्चारण कर सकता हूँ। परन्तु इस प्रकार का मैं समाज को दृष्टिपात कर रहा हूँ। तो मैं उच्चारण करने के लिए, आज पूज्यपाद गुरुदेव को नहीं उच्चारण कर सकता कि यह समाज क्या है और जब देखो, नर्तकियं की चित्रावलियों से मनोरंजन होता है। उनके महापुरुषों के चित्र नहीं आते हैं। तो इसलिए विज्ञान कहलाता है। इस विज्ञान का क्या बनेगा?

अन्तरिक्ष से परमाणु एकत्र कर लिए हैं। देखो, मानव के श्वास लेने मात्र से प्राणि नष्ट हो सकता है। परन्तु श्वास लेने से मानव को प्राण की प्राप्ति नहीं होती, जीवन की प्राप्ति नहीं होती। तो ये कैसा विज्ञान है? यह तो विज्ञान इकाई में माना है।

मुझे स्मरण है। यहाँ महाभारत के काल की वार्त्ता। मुझे पूज्यपाद गुरुदेव उच्चारण करेंगे तो मैं वैज्ञानिकों की चर्चाएं कल उच्चारण करूंगा। महाभारत के काल की एक वार्त्ता है। एक समय महाराजा भगदत्त ने एक यन्त्र से प्रहार किया। उस यन्त्र में यह था कि श्वास लेने के साथ ही सेना समाप्त होने लगी। परन्तु अर्जुन के पास एक यन्त्र ऐसा था, सुयाती

यन्त्र वह उन्होंने आंतरिक्ष में त्यागा। उसका प्रभाव समाप्त हो गया। उससे सेना की सुरक्षा हो गई। एक सांस लेने से प्राणी मृत्यु को जा रहा है। दूसरे यन्त्र से जब वह त्याग रहा है तो उससे प्राणी की रक्षा हो रही है। तो ये विज्ञान अभी नहीं आया है। मैं वैज्ञानिक के इस युग को दृष्टिपात करता रहता हूँ।

महाभारत काल के पश्चात् जो अज्ञान आया है उस अज्ञान में यह विज्ञान नहीं रहा है। इसलिए आज का मानव कहता है। विज्ञान तो हमने ही जाना है। परन्तु विज्ञान तुमने नहीं जाना। विज्ञान तो वेद का एक एक मन्त्र है। विज्ञान की गति का वर्णन कर रहा है। एक एक शब्द विज्ञान को गति दे रहा है। मानव की वाणी को और सांस को गति दे रहा है। विज्ञान का आज से अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह उच्चारण करने आया हूँ कि प्रत्येक मानव को धर्म को विचारना है। धर्म को अग्रणी बना कर के विज्ञान के मार्ग से होकर आध्यात्मिक मार्ग में प्रविष्ट हो जाओ। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा क्योंकि अपना विचार प्रगट करने के लिए मैं अनुमति ले रहा हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव परम्परा से विज्ञान के विद्यार्थी रहे हैं। विज्ञान को जानना इनका मौलिक कर्त्तव्य रहा है। आज मौलिक विज्ञान की कुछ चर्चाएं सुनिए और देखो, आज मैं विज्ञान का उच्चारण करने के लिए आया हूँ। क्या वैज्ञानिक उस कोटि का निर्माण कर लेते हैं? विज्ञान में रमण करने लगते हं। जब जब मैं विज्ञान की चर्चा करने लगता हूँ और भी देखो, मुझे पूज्यपाद गुरुदेव कल मुझे कुछ समय दंगे, तो मैं कल महाभारत काल के विज्ञान की चर्चा करूंगा। आज का विचार अब मैं समाप्त करने जा रहा हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पा रहा हूँ।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने आज नाना प्रकार !मेरे प्यारे !ऋषिवर !के धर्मों की विवेचना की परन्तु धर्म केवल एक ही कहलाता है। धर्म नाना रूपों में नहीं होता। विज्ञान मानव का धर्म है। विज्ञान के मार्ग से होता हुआ प्राणी आध्यात्मिक वाद में प्रवेश करता है। मैंने बहुत पुरातन काल में ऋषियां से कहा था कि विज्ञान के मार्ग से ही होता हुआ प्राणी इस आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है आध्यात्मिक में जाना हमारा कर्तव्य है। यौगिकता में रमण करना प्राण और मन के विभाजन की क्रिया को जानना और उसको

अपने अन्तः हृदय में उसको चित्त में चिन्तन करना और चित्त में स्थिर करना, उसमें स्थिर हो जाना। उसका मानो योग कहलाता है।

मृत्यु के स्वरूप को जान करके उसके आध्यात्मिक में प्रवेश करता है। इसी प्रकार विज्ञान ये नहीं कहता। क्या प्राणी की मृत्यु हो जाए? विज्ञान की धाराएं यह नहीं कहतीं कि राष्ट्र अग्नि के मुख में चला जाए। विज्ञान कहते हैं प्रत्येक वस्तु को जानना, प्रत्येक वस्तु को अनुसन्धान पूर्वक उसके निर्णय पर जाना परन्तु उसके पश्चात् वो उस मार्ग से होते हुए आध्यात्मिकवाद और मृत्यु को विजय करने में पूर्ण मग्न हो जाता है। यह मानव की भी क्रियाएं रही हैं। देखो, मेरे पुत्र ने उच्चारण किया कि मलहार राग और देखो, दीपक रागों की चर्चाएं थीं। इन्होंने दीप मालिकाओं की चर्चाएं की हैं। मुझे स्मरण आता रहता है कि हमारे यहाँ किसी काल में जो सभाएं होती थीं। ऋषि मुनियों की क्या वे अपनी वाणी द्वारा गान गाते थे। तो दीप मालिकाएं प्रकाशित हो जाती थीं। और दीपक मालिका के प्रकाश में ऋषि मुनि अपना विचरा विनिमय करते रहते थे। हमारे यहाँ यह और परम्परा से विद्या बड़ी प्रसिद्ध रही है क्योंकि वैदिक साहित्य में वैदिकता में वेद में गान विद्या का वर्णन है। परन्तु मस्तिष्क में यह कोई ऐसा रूप नहीं है।

हमारे यहाँ जो वाणी है वह अग्नि का स्वरूप माना गया है। यह अग्नि ही मानी गई है। जो इस वाणी को सर्व विद्या को जानता है जो इस वाणी रूपी अग्नि के रूप को जानता हैं वह दीप मालिका नहीं अपने मानवीय जीवन को प्रत्यक्ष करता है। भुजों से गति करके सूर्य मण्डल में चला जाता है। ये विद्याएं हमारे यहाँ बहुत गम्भीर रूप में रही हैं। मेरे पुत्रोंने आज जो कहा है वो बड़ा प्रिय है और देखो !, यह वाणी शीतल क्रियाओं से शीत मालिका होती है। उससे मलहार गान रूपां में जब गान गाया जाता है तो वो मधुरगान कहलाता है। उससे मेघ मण्डल बन जाते हैं और मेघों से वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। इस विद्या की चर्चा मैं कल करूंगा। आज मुझे इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है। अब हम अपने विचारों को समाप्त कर रहे हैं।

आज मेरे पुत्र ने यह कहा है। राजा का कर्त्तव्य है कि राष्ट्रवाद में रूढ़ियां समाप्त होनी चाहिए। रूढ़ियां नहीं रहनी चाहिए। धर्म केवल एक ही कहलाता है जो बुद्धि पूर्वक है।

विज्ञान जिस पर स्थित रहता है। उसी का नाम धर्म है। और जो आध्यात्मिकवाद में मानव को प्रवेश कराता है। वह ही धर्म है। परन्तु इसके पश्चात में वार्त्ताएं हमारी समाप्त। अब वेदां का पठन पाठन होगा। लाक्षागृह बरनावा

६ 15 07 1979 पुष्प 41 आत्म ज्योति

देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्यों कि वह मेरा देव विज्ञानमय माना गया है। जितना भी ज्ञान और विज्ञान इस संसार में दृष्टिपात आ रहा है, यह उस महान् मेरे प्यारेप्रभु की महत्ता है !, अथवा उसकी की प्रतिभा है।

परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र हमें नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा था। और उन प्रेरणाओं में से अभ्यम् गतिः वृणश्यमतम देवम् अदितिः ऋषि। ब्रह्म ब्राह्मणाः कृतम् देवाः। वेद में ! नाना प्रकार के इस प्रकार के मन्त्र आते हैं। हमारे यहाँ नाना दार्शनिकों का जब समूह विद्यमान होता है तो नाना प्रकार का विचार विनिमय भी होता रहता है। क्योंकि इस संसार के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न प्रकार की विचारधाराएं मानव के मस्तिष्कों में होती रहती हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में बेटा राजा जनक के यहाँ ! ब्रह्मयाग होता रहता था। यहाँ नाना प्रकार के यागों का वर्णन वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे ब्रह्म याग है गो मेध याग है, अश्व मेध याग है, वाजपेयी याग है, अग्निष्टोम याग हैं, और भी नाना प्रकार के यागों का चयन अथवा वर्णन वैदिक साहित्य में आता रहता है। आज मैं यागों का प्रकरण अथवा उसकी आभा का वर्णन करने नहीं आया हूँ।

आज मैं तुम्हें कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय क्या? आज मैं तुम्हें पुत्रो त्रेता काल में ले जाना चाहता हूँ। आज मैं उस काल में ले जाना चाहता हूँ। ! जहाँ ब्रह्म वेत्ताओं का एक समूह विद्यमान था, और वहाँ ब्रह्म की विवेचना होती रहती

थी। और इस महान् जगत् के ऊपर नाना प्रकार की टिप्पणियां प्रारम्भ होती रहती थीं। बेटा मुझे वह काल स्मरण आता रहता है। जिस काल में राजा जनक और उनकी ! एक समय मध्य रात्रि में दोनों !पत्नी अपने यहाँ देव पूजा करते रहे हैं बेटामानो विद्यमान हैं और राजा जनक की पत्नी के स्मरण एक वेदमन्त्र आया, और वो वेदमन्त्र कह रहा था हिरयम् ब्रह्मणों कृतम् बृहिः वृतम् चक्षुः ज्योतिः जिव्याहम् हिरण्यम् ब्रहेः प्रभाः। वेद के विचारकों के समीप ये वेदमन्त्र प्रायः आता रहता है। अब जब ये राजा जनक की पत्नी के ससमीप आया, तो वे मध्य रात्रि में चिन्तन करने लगीं। उसने अपने देव से कहा, पति राजा जनक से कहा कि महाराजयह वेदमन्त्र क्या कह रहा है !? यह वेदमन्त्र यह कह रहा है कि हमारे जो नेत्र हैं हमारे जो चक्षु हैं, वे किसके प्रकाश से प्रकाशमान हो रहे हैं। मेरे प्यारे दोनों विचार !राजा जनक और उनकी पत्नी बेटा ! विनिमय करते थे। मध्य रात्रि से प्रातःकाल हो गया। वे अपने में इसका कोई माना निमटारा नहीं कर सके। जब नहीं कर सके तो दोनों अपने आसन को त्याग करके मानो अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके जहाँ वे याग करते थे, प्रातःकालीन देव पूजा करते थे वे देव पूजा स्थली में जा पहुंचे, और वे याग करने को जब विद्यमान हो गए, तो मेरे पुत्रोमहर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज जो राजा जनक के महान् आचार्य थे !, और गुरुजन थे। मेरे प्यारेचाक्राणी गार्गी और वे महाराजा के पुरोहित !, और भी नाना ब्रह्मवेत्ता जैसे महात्मा दिग्ध महर्षि ब्राह्मण, महर्षि दालभ्य, महर्षि रेवक महर्षि श्वेतकेतु और भी नाना ऋषि बेटादेखो !वहाँ विद्यमान थे अब मुनिवरों !, यज्ञमान ने यह प्रश्न किया कि आज मैं कोई भी प्रश्न मानो आचार्य से नहीं कर पाऊँगा। मेरे प्यारेदेखो !, वे याग करने लगे। जब अग्नि होत्र किया तो दोनों उपासना करने के पश्चात् राजा और उसकी पत्नी मौन हो गए, शान्त हो गए।

राजा जनक को शान्तदृष्टिपात करके महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज बोले, हे राजन् ! आज तुम मेरे से कोई प्रश्न कर सकते हो। वे दोनों अत्यन्त प्रसन्न हो !हे यज्ञमान करके बोले कि हे प्रभु हम यह जानना चाहते हैं कि हमारे जो नेत्र हैं वे किसके ! प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? कौन इनका प्रकाशक है? कौन प्रकाश दे रहा है? तो

मुनिवरोंजब उन्होंने ऐसा कहा तो राजा जनक के वाक्यों को पान करके ऋषि बोले !, हे राजन इसको प्रत्येक मानव !जानता है, प्रत्येक मेरी पुत्री जानती है, प्रत्येक बालक जानता है कि हमारे जो नेत्र हैं वे सूर्य के प्रकाश से प्रकाशमान होता है। प्रातःकाल जब सूर्य उदय हो जाता है तो उसी के प्रकाश से प्रकाशित हो जाता है। और वह प्रकाश देने लगता है। वह संसार का व्यापार, संसार का कार्य प्रारम्भ कर देता है। मानो यह सूर्य अदिति कहलाता है। यह अदिति है। लोक लोकान्तरों को तपाने वाला है। नाना पृथ्वियां इसके आँगन में तपती रहती है। यह सूर्य जब प्रातःकाल में उदय होता है तो यह प्रकाश देता रहता है। इसी के प्रकाश से यह संसार प्रकाशमान होता रहता है। तो हे राजनदेखो !, मानव को यह प्रकाश देता हैं माता के गर्भ स्थल में भी यह ! उन्होंने कहा !मानो सूर्य ही प्रकाशक बना हुआ है और प्रकाश देता रहता है। मेरे प्यारे, क्या जैसे गो नाम का पशु है। गो नाम के पशु के रीढ के विभाग में एक सूर्यकेतु नाम की नाड़ी होती है। उसका ऊर्ध्व मुख होता है और जब सूर्य उदय होता है, सूर्य की किरणें आती है। तो मानो देखो, वह उन किरणों को वह नाड़ी अपने में आकर्षित ! कर लेती हैं, तो मेरे प्यारेदेखो !, जो स्वर्ण की मात्रा इसमें विशेष मात्र होती है। ! वह जो सवर्णकेतु नाम की न !तो मुनिवरोंाड़ी है वह उसी को अपने में ग्रहण कर लेती है। उन परमाणुओं को अपने में सींच लेती है। और वह जो गो नाम के पशु में नाना प्रकार के यंत्रालय विद्यमान हैं उन यंत्रालयों में वह परमाणु जाते हैं। गो के दुग्ध घृत में मानो पीतवर्ण कहलाता है। पीतवर्ण इसीलिए होता है, क्योंकि उसमें स्वर्ण की मात्रा विशेष होती है। हमारे आचार्यों, ने ऋषि मुनियों ने गो नाम के पशु को बेटा ! आग्नेय पशु माना है। ये मानो इसका सम्बन्ध सूर्य से विशेष रहता है। तो विचार विनिमय क्या यह नाना प्रकार की वनस्पतियों को तपाने वाला है। नाना प्रकार के इस पृथ्वी माता वसुन्धरा के गर्भ में नाना प्रकार के खनिज को देने वाला है। खाद्य को प्रदान करने वाला है। मेरे प्यारे पृथ्वी के गर्भ स्थल में कहीं मानो जल को शक्तिशाली ! बनाया जा रहा है, कहीं पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातु का निर्माण हो रहा है। कहीं पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातु का निर्माण हो रहा है। कहीं स्वर्ण का पिपाद

बनाया जा रहा है। ये सब मानो सूर्य की प्रतिभा है। यह महान् सूर्य जो तप रहा है, चक्षुओं का मित्र बना हुआ है। यह उसी की प्रतिभा कहलाती है। मेरे प्यारेदेखो !, ऋषि ने कहा, हे राजनऐसा जो सू !र्य है, जो प्रातः काल होते ही माता अपने पुत्रों को ! जागरूक कर देती है कहता है, हे बालक जागरूक हो जाओ सूर्य उदय हो गया है। ! ऐसा जो सूर्य है उसकी प्रतिभा !मेरे प्यारे, उसकी ऊषा आते ही मानो पक्षी गण भी अपनी आभा का गुणगान गाने लगते हैं। ऐसा जो मानो अदिति है, ऐसा जो सूर्य है मेरे प्यारे वह इन चक्षुओं का मित्र कहलाता है। !

राजा ने कहा हे ऋषिवरइसकी मीमांसा मैं विशेष नहीं चाहता हूँ !, मेरी इच्छा यह है, मैं यह जानना चाहता हूँ, जब सूर्य नहीं होता तो हमारा हमारे नेत्रों का देवता कौन है? प्रभुक्योंकि सूर्य तो अस्ताचल ! को चला जाता है। उसके उपरान्त किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। मेरे प्यारे महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता ने कहा हे ! जब यह सूर्य नहीं होता तो चन्द्रमा के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। यह !राजन चन्द्रमा हमारे नेत्रों का देवता है। यह चन्द्रमाअमृत को बिखरेने वाला है। यह चन्द्रमा हमारा देवता है। आभ्याम् गतम् ब्रह्म लोकाम् अमृताम् देवम् ब्रह्म लोकाः। मानो जब माता के गर्भ स्थल में शिशु होता है। माता के गर्भस्थल में रसना के निचले विभाग में एक चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी होती है। उस नाड़ी का सम्बन्ध मानो माता की पुरीतत् नाम की नाड़ी से होता है और पुरोतत् नाम की नाड़ी का सम्बन्ध माता की लोरियों से होता है। और माता की लोरियों से पञ्चम नागी बन करके चलतीं हैं। और अमृत बहाने वाला चन्द्रमा है। बेटादेखो !,माता की नाभि से बालक का इन नाड़ियां से सम्बन्ध होता है !, तो वहाँ अमृत प्रदान किया जाता वह कौन बहा रहा है बेटा !? वह कौन अमृत दे रहा है? मेरे प्यारे वह चन्द्रमा है वह सोम कहलाता है वह आभा रमण करने वाला है ! देखो !मुनिवरों, वह चन्द्रमा जो कान्ति बन करके रेणुका को रेणुका बना देता है। हमारे यहाँ मुनिवरोंदेखो !, रात्रि को प्रकाश में लाने वाला चन्द्रमा है। अमृत को बहा देता है। नाना प्रकार की वनस्पतियां उसी से रसों का स्वादन लेती हैं। मेरे प्यारे मानव की ! रसना उसी से स्वादन लेती रहती हैं और नाना प्रकार का जो यह सोम चन्द्रमा, चन्द्रमा

सोम बन करके समुद्रों को तपाता रहता है। समुद्रों से नाना प्रकार का जो सोम उत्पन्न होता है उससे मेघ और मेघों से सुन्दर सुन्दर वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। आओ मेरे प्यारेदेखो !, यह चन्द्रमाहमारे नेत्रों का देवता हैं यह चन्द्रमा ही !, अहा अमृत को ! बहाने वाला है। एक नहीं प्रभु के राष्ट्र में नाना चन्द्रमा हैं। एक आकाश गंगा में नाना चन्द्रमा हैं। परन्तु वे चन्द्रमा रात्रि के प्रकाश में अमृत को बहा देते हैं। तो मेरे पुत्रोदेखो !, राजा पुनः मौन हो गए। !
राजा ने नतमस्तक हो करके कहा, प्रभु मैं जानना चाहता हूँ जब ये चन्द्रमा नहीं होता ! तब हम किसके प्रकाश सेभी प्रकाशमान होते हैं। उन्होंने कहा, हे राजन् जब ये ! चन्द्रमा नहीं ाहेता तो हम नाना तारामण्डलों के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ये तारामण्डलों का धीमा धीमा प्रकाश आता रहता है। उसी के प्रकाश में मानो पगडण्डियों प्राप्त कर लेता ह। ै ये नाना प्रकार की आभा मे ं उज्ज्वलता में प्रगट होने वाले ये ना तारा मण्डल कहलाते हैं। मेरे प्यारेदेखो !, एक कैसी प्रिय प्रिय माला बन रही हैं उस माला को जो धारण कर लेता है, वह प्रियता को प्राप्त हो जाता है, मेरे पुत्रो ऋषि ! ये जो नाना प्रकार के चन्द्रमा हैं ये नाना !कहता है। राजन्जो तारामण्डल हैं इनकी एक माला बनी हुई है। यह मालना ही आभा में रमण करने वाली है। उन्होंने वर्णन करते हुए कहा, क्या ये तारा मण्डल एक नहीं मानो एक से एक विशाल कहलाते हैं। हे राजन्) !1) तुम्हें यह प्रतीत है कि नाना पृथ्विएं सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं।)2) यह जो सूर्य है, अरुणि मण्डल में ऐसे सहस्रों सूर्य समाहित हो जाते हैं।)3) सहस्रों अरुणि इस आभा में आभ्याम् गति में धुरुव में समाहित हो जाते हैं हे राजन् !)4) तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए। जैसा यह ध्रुव है ऐसे ऐसे एक सहस्र ध्रुव जेठाय नक्षत्र में समाहित हो जाते हैं)5) जैसा जेठाय नक्षत्र है ऐसे ऐसे एक सहस्र जेठाय नक्षत्र मानो देखो, अरुणधती मण्डल है ऐसे ऐसे एक सहस्र जेठाय नक्षत्र मानो देखो, अरुणधती मण्डल में ओत प्रोत हो जाते हैं।)6) जैसा अरुधन्ति मण्डल है ऐसे एक सहस्र अरुधन्ति पुष्य नक्षत्र में ओत प्रोत हो जाते हैं।)7) जैसा पुष्य नक्षत्र है ऐसे ऐसे एक सहस्र पुण्य नक्षत्र स्वाति् नक्षत्र में ओत प्रोत हो जाते हैं।)8) जैसा स्वाति नक्षत्र

है ऐसे ऐसे एक सहस्त्र स्वाति अचंग लोकों में ओत प्रोत हो जाते हैं।)9) जैसा अचंग है। वे ब्रह्मी लोकों में ओत प्रोत हो जाते हैं। बेटा आज मैं प्रभु की प्रतिभा का वर्णन ! करने नहीं आया हूँ। प्रभु का विज्ञान इतना अनन्त है, इतना महान् है कि उसको मेरे प्यारे कोई सीमा में वर्णन भी नहीं कर पाता। आज मैं तुम्हें ये वर्णन करने आया ! हूँ कि ये नाना प्रकार के तारा मण्डलों का प्रकाश इस पृथ्वी मण्डल पर आता रहता है। मानो इसी के आभा में मुनिवरोंदेखो !, प्रकाशमान हो जाता है। उन्हीं का प्रकाश मानव के नेत्रां का देवता यही तारा मण्डल बन जाता है। नाना सौरमण्डल कहलाते हैं। एक आकाश गंगा में नाना सौर मण्डलों की गणना की गई तो ऋषिवर क्या वैज्ञानिक जन मेरे प्यारे एक आकाश गंगा के मानो चन्द्रमा और सूर्यों की गणना भी पूर्ण रूप ! में नहीं कर पाए अब तक।

आओ मेरे पुत्रो आज मैं सौर मण्डल में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार यह ! तो मेरे पुत्र !देने के लिए आया हूँ कि प्रभु का विज्ञान कितना अनन्त है पुत्रोो ऐसा ! मुझे स्मरण आता रहता है कि राजा जनक ने जब ये मानो सौर मण्डलों की चर्चाएं, लोकों की चर्चाएं सुनीं तो उस समय राजा जनक नतमस्तक हो करके बोले, प्रभु मैं ! यह नहीं जानना चाहता हूँ जब यह सौर मण्डल अथवा ये तारा मण्डल नहीं होते तब हमारे नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। उन्होंने कहा, हे राजन् जब ये ! तारा मण्डल नहीं होते तो हम अग्नि के प्रकाश से ही प्रकाशमान हो जाते हैं। यह अग्नि हमारे नेत्रों का देवता है। अग्नि आभामय कहलाता है। यह अग्नि एक ही प्रकार की नहीं है। कहीं अग्नि वैश्वानर अग्नि बन करके प्रकाश दे रही है। कहीं अदिति बन करके प्रकाश दे रही है। कहीं द्यौ सूर्य बन करके प्रकाश दे रही है। कहीं दाक्षिण्य अग्नि कहलाती है। कहीं मानो गृह पथ्य नाम की अग्नि कहलाती है। कहीं मानो गार्हपथ्य कहलाती है। ये नाना प्रकार की अग्नियां प्रकाश दे रही हैं। और प्रकाश दे करके वेद के ऋषियों ने, आयुर्वेदाचार्य ने तो, अश्वनीकुमार जैसे आयुर्वेदाचार्यों ने प्रकार की अग्नि 85 मानी है। परन्तु जब विज्ञान के युग में प्रवेश करते हैं। विज्ञान में से एक एक अग्नि में सहस्त्रों !से जो तरंगें उत्पन्न होती हैं वे मेरे प्यारे, अरबों खरबों तरंगें हैं। जो गणना में

नहीं आतीं। मेरे पुत्रोदेखो !, अरबों खरबों तरंगों वाली यह अग्नि है, जो मेरी प्यारी माता, अन्धकार छाया हुआ है। गृह को प्रकाशित करती है, वह गृह में इसी अग्नि से प्रकाश को प्राप्त कर अपना व्यापार प्रारम्भ कर लेती है। वह नेत्रों की अग्नि बन करके वे चक्षु मित्र अग्नि कहलाती है। मेरे प्यारे वह अग्नि ही मानव जीवन का क्या वह ! अग्नि ही इस संसार में लौकिक अग्नि बन करके प्रकाश देती है और वही अग्नि मेरे द्यौ सूर्य बन करके सूक्ष्म बन जाती है। वही अग्नि वाणी बन करके मानव को !प्यारे अग्रणीय बना देती हैमेरे प्यारेदेखो !, अग्नि के भिन्न भिन्न प्रकार के रूप माने गए ! हैं। जब ऋषि ने राजा के समीप अग्नि की भिन्न भिन्न प्रकार की मीमांसाएं कींद्ध तो देखो !मेरे प्यारे, अग्रणाम् देवाः अग्निश्चतम् देवाः। !

उस समय उन्होंने कहा, हे प्रभुमैं जानना चाहता हूँ जब ये अग् !नि भी नहीं होती, तब हम किसके प्रकाश से प्रकाश मान होते हैं? उन्होंने कहा, हे राजन् जब ये अग्नि नहीं ! होती मानो उस समय हम इस वाक्य के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ये वाक्यी जो ज्योति है यह विशाल ज्योति कह लाती है। एक मानव अन्धकार में चला जा रहा है, मार्ग में चला जा रहा है। मार्ग से कुमार्ग को चल देता है। जब वह कुमार्ग में अन्धकार में चला जाता है। भयंकर वनों में उस समय वह कहता है, अरे, है कोई हमें चेताने वाला? उस समय मार्ग में जो मानव स्थिर है, वो कह रहा है, आ जाओ मैं मार्ग में ! देखो !स्थिर हूँ। तो मुनिवरों, वह उस वाणी के प्रकाश से उसी मानो मार्ग का पथिक ! बन जाता है। जिस मार्ग से वह मानव विचलित हो गया है। जिस मार्ग से, जिस पथ से वह कुपथ बन गया है। तो मेरे प्यारे वह मानो वाणी का प्रकाश है। एक मानव ! को अज्ञान छा गया है वाणी से एक मानव उसको शिक्षार्थी बन करके शिक्षा दे रहा है। यह वाणी का प्रकाश है, वह उस हृदय के, हृदय रूपी अन्धकार को त्याग करके प्रकाश के मार्ग पर चला जाता है। वह अपने पथ को प्राप्त कर लेता है। मेरे पुत्रो ! जब उन्होंने ऐसा वर्णन किया क्या वाडमय ज्योति मानो देखो, ब्राह्मण वाणी से कहलाता है। यह ब्राह्मण वाक्य पवित्र होता है। यह वाक्य ही है, मेरे प्यारे जितना दार्शनिक !

शब्द होता है, वाक्य होता है, वही मेरे प्यारेदेखो !, अन्तरिक्ष में विद्यमान होता है। मुझे स्मरण आता रहता है, बेटादेखो !, उद्यालक गोत्र में वृण केतु ऋषि महाराज एक समय याग कर रहे थे। और जब वे याग कर रहे थे, याग के सूक्ष्म परमाणुओं को वो एकत्रित करते हुए, उनसे यन्त्रों का निर्माण कर रहे थे। उन्होंने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया, जिस यन्त्र में उनका चित्र उन्हें दृष्टिपात आने लगा। उन्होंने आगे अनुसन्धान किया तो आगे आने उन्हें कुछ चित्रों के दर्शन होने लगे। उसी यन्त्र में। और यन्त्र का विकास किया वो चित्रावली व्रणकेतु यन्त्र था। उनके शब्द अन्तरिक्ष में विद्यमान रहते हैं। क्योंकि शब्द सदैव नित्य रहने वाला है। अन्तरिक्ष में वह गति करता रहता है। और अन्य शब्दों के साथ में गति करता रहता है। तो आओ मेरे अपने 100वें महापिता के आज मैं तुम्हें विज्ञान के युग में ले जाना नहीं चाहता हूँ। !दर्शन होने लगे। प्यारे वाक्य यह प्रकट कर रहा था कि वाक्य के प्रकाश से मानव प्रकाशित होता है। वाक्य से मानव अन्धकार से अन्धकार को त्यागकर के प्रकाश में चला जाता है। मेरे पुत्रो ! जब महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज ने वाक्य की बहुत मीमांसा की। मीमांसा करने के पश्चात् मेरे पुत्रो, देखो, उसके पश्चात् ऋषि कहता है। वृह्मणम् ब्रह्मणाः कृतम् लोकाम् हिरण्यमृथाः दिव्यम् लोकाः।

उन्होंने कहा, हे प्रभुय !मैं जानना चाहता हूँ। जब प्रभु !े वाक्य भी नहीं होता तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा हे राजन जब वाक्य नहीं होता ! तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? यह तुम जानना चाहते हो। जब यह सूर्य भी नहीं होता, चन्द्रमा भी नहीं होता, तारामण्डल भी नहीं होते, अग्नियां भी नहीं होतीं और वाक्य भी नहीं होता, तो हे राजन हम इस आत्मा के प्रकाश से प्रकाशमान ! होते हैं। यह आत्मा हमारे शरीर में गति करता रहता है। यह आत्मा प्रकाश का देने वाला है। आत्म तत्त्व ही मानो जब तक इस मानव शरीर में रहता है तब तक मानव गति करता रहता है। वो गतिशीलताहै। मानो जब यह आत्मा शरीर से निकल जाता है, उस समय यह मानव का शरीर शव रह जाता है। हे राजनजब मानो देखो !, शव रह जाता है यह मानव का शव है नेत्रों के गोलक में भी नेत्र ज्यों के त्यों बने हुए हैं,

परन्तु सूर्य प्रकाश दे रहा है। अरे, मानव क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते? चन्द्रमा अपनी सोम वृष्टि कर रहा है। रसना ज्यों की त्यों बनी हुई है। इस मानव शव में नेत्र भी ज्यों के त्यों हैं। अरे, मानवक्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते !? तारा मण्डलों की माला उसी प्रकार मानो निर्मित हो रही है। प्रभु की विज्ञान उसके साथ साथ है। परन्तु देखो, ! एक आत्मा नहीं है इस मानव शरीर में। अरे, मानवक्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते !? बेटावाक्य भी है !, अग्नि भी है परन्तु क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते? इसीलिए बेटा ! वेद के ऋषि ने आचार्यों ने दार्शनिकों ने कहा है कि हमारे जो नेत्र हैं वे आत्मा के प्रकाश सेप्रकाशमान होते हैं।

इसीलिए हे मानव तुम इस आत्मा को जानने का प्रयास करो। क्योंकि संसार में जैसे ! प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक तुम उदर की पूर्ति का प्रयास करते रहते हो। उदर की पूर्ति करने का प्रयास, मानो उसे भरण करने का। अरे, मानव इस आत्मा ! को भी तो भोजन देने का प्रयास करो। आत्मा को भी तो भोजन दो। आत्मा का भोजन क्या? बैटासत्संग है। आत्मा का भोजन क्या है !? मानो प्रभु का चिन्तन करना है। आओ मेरे प्यारेहम इस आत्मा को जानने का प्रयास करें। अरे !, न यह आत्मा जागृत है, न स्वप्न है, न सुषिप्त है। अरे, यह आत्मा है क्या बेटा !? आज विचारा जाता है, विचारने से प्रतीत होता है। यह आत्मा ने जागरूक जतब ये मानव जागरूक रहता है। तब आत्मा का प्रकाश मानव के नेत्रों के समीप रहता है। नेत्रों से विभाजन करता रहता है। एक मानव अहादेखो !, अपने कुटुम्ब का परिचय देता है ये मेरी माता हैं, ये पिता हैं, यह पुत्री है पुत्र है, यह पौत्र है, यह प्रपौत्र है। कुटुम्ब का परिचय दे रहा है। अरे, वो कहाँ से दे रहा है? आत्मा का प्रकाश मन के ऊपर प्रतिभा ओर मन का सम्बन्ध नेत्रों से हैं विभक्त करने वाला यह मनस्तव माना गया है। परन्तु प्रकाश आत्मा का आ रहा है।

मेरे प्यारेदेखो !, जब यह जागरूक क्या स्वप्न में चला जाता है। अरे, इस मानव के शरीर में राष्ट्र नहीं होते, स्वप्न में राष्ट्रों का निर्माण हो जाता है। परन्तु पत्नियां नहीं होतीं, पत्नियों का निर्माण हो जाता है पति नहीं होते पतियों का निर्माण हो जाता है। नद

नदियां नहीं होते, समुद्र नहीं होता, परन्तु इन सबका निर्माण हो जाता है। वह निर्माण करने वाला कौन है? मानो स्वप्न में, बेटायह मन मानो देखो !, चित्त में जो नाना प्रकार के सूक्ष्म अंकुर विद्यमान होते हैं और वे करोड़ों करोड़ों जन्मों के होते हैं मेरे प्यारे ! देखो, करोड़ों जन्मों के जो संस्कार चित्त में विद्यमान होते हैं मन के समीप होते हैं। मेरे प्यारेआत्मा प्रतिभा !, आत्मा के प्रकाश से यह मन उन सूक्ष्म अंकुरों कोसाकार रूप में, दर्शन करता हुआ यह भोक्ता बन जाता है। यह भोगता रहता है। मानव नदी, नदियां शरीर में नहीं होते परन्तु उनका निर्माण कर लेता है। यह मन ही तो निर्माण करता है आत्मा के प्रकाश में। बेटायह आत्मा मानो देखो !, यह सुषुप्ति भी नहीं है। सुषुप्ति किसे कहते हैं? मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार मेरे प्यारे अपनी साम्य अवस्था में चले जाते हैं ! आत्मा प् !उस समय बेटारणाम उब्रहे देवतम् लोकाः। यह प्राण के साथ में आत्मा गति करने लगता है, और यह मन अपने कुटुम्ब को लेकर के यह सुषुप्ति में चला जाता है। बेटाउस समय मन ऐसा मान लेता है। आज मैं !, ऐसा आनन्दवत् हो गया है कि मुझे संसार का ज्ञान नहीं रहा। , बेटाउसे सुषुप्ति कहते ह !ैं मन, बुद्धि, चित्त अहंकार अपनी साम्यावस्था में जाने का नाम सुषुप्ति कहलाता है। उस समय कौन जानता रहता है? मन। यह प्राण और के साथ में आत्मा का तारम्य प्रत्येक श्वास के साथ में बेटा ! प्रति श्वास प्राणस्वम् ब्रहेः प्राण की !आत्म तत्व विराजमान है मेरे प्यारेध्वनि हो रही है बेटायह आत्मा न जागरूक है !, न स्वप्न है न सुषुप्ति है। यह आत्मा तो बेटा ! तुरीयावस्था में, भी भिन्न भिन्न प्रकार की अवस्था मानी जाती है। उन अवस्थाओं में मेरे प्यारेदेखो !, योगेश्वर बैखरी वाणी भी प्रकट करने लगता है। आज मैं तुरीयावस्था का वर्णा करने नहीं आया हूँ।

विचार यह देने के लिए आया हूँ कि आत्मा बेटा एक रस रहने वाला चेतन है। जो ! शरीर में भास रहा है अथवा गति कर रहा है। जिस आत्मा के रहने से यह मानव शरीर कहलाता है, चेतनित कहलाता है। आत्मा के निकल जाने से मेरे प्यारेदेखो !, यह मानव का शरीर शव रह जाता है। आओ मेरे प्यारे जब महर्षि याज्ञवलक्य मुनि ! महाराज ने यहाँ सब मीमांसा राजा के समीप की तो राजा और उनकी पत्नी प्रसन्न हो

आपने हमारे ज्ञान के चक्षु !गए। उन्होंने कहा धन्य है प्रभु, मानो देखो, आभा में परणित कर दिए हैं। आज हमें यह ज्ञान हुआ है कि वास्तव में आत्मा क्या है? हम आत्मा के प्रकाश से ही प्रकाशमान होते हैं मानव के नेत्रां के प्रकाश का जो मूल है उस मूल में आत्मा है और आत्मा के घेरे में बेटा !यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड कहलाता है और मेरे प्यारे ! देखो, आज हम जब आत्मा के मानो प्रसंग से मध्यम् से लेते हैं तो यह भौतिकवाद आता है और भौतिकवाद वाक् ज्योति से समाप्त होकर के, शब्द नित्य से समाप्त हो करके, बेटा वहाँ से आत्मा का विज्ञान प्रारम्भ होता है। आत्मा के विज्ञान में जब ! मानव प्रवेश करता है, तो धन्य हो जाता है। वह मृत्यु से पार हो जाता है। आओ मेरे प्यारे !देखो, उसे संसार का मानो भय नहीं होता। वह इससे रहित हो जाता है। !

तो मेरे पुत्रोदेखो !, राजा जनक को ऋषि ने ये मीमांसा प्रगट की। महत्ता प्रगट करने के पश्चात् ऋषिवर मौन हो गए। जब ऋषि मौन हो गए तब अव्रतम् देवाः राजा ने कहा प्रभुधन्य हैं। आपने मेरे ज्ञान चक्ष !ुओं को मानो गुणित कर दिया है। मुझे जागरूक कर दिया है। मैं अज्ञान में था, अन्धकार में था। वेद प्रकाश में लाने का आपने मुझे प्रयास किया है आओ मेरे प्यारेआज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है !? कि हमारे जो नेत्र हैं वे किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? मेरे प्यारे वे आत्मा के प्रकाश से ! प्रकाशमान होते हैं। हमें इस आत्मा को जानना चाहिए। क्योंकि आत्म तत्व की एक ऐसा है जो मानव को अज्ञान से दूर कर सकता ह। ै अन्यथा भौतिकवाद के नाना प्रकार के पदार्थों में नाना प्रकार के अणु महाअणु, त्रसरेणुओं में रमण करता रहता है प्रकृति के तत्त्वों को जाना है उनसे उपस्थित हो जाता है। एक तरंग को जाना दूसरी तरंगें उपस्थित हो जाती हैं। एक परमाणु जाना द्वितीय परमाणु उपस्थित है। यन्त्र का निर्माण किया, दूसरे यन्त्र की इच्दा बनी रहती है। परन्तु देखो, केवल विज्ञान के ज्ञान ! वैज्ञा !से बेटानिक समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकृति की आभा को वे नहीं जान पाते। क्योंकि प्रकृति के गर्भ के मूल में चेतना है। और वह चेतना प्रभु है। इसीलिए बेटा ! देखो, प्रभु और आत्म तत्व को जाना जाता। यह है बेटा आज का वाक्। अब मुझे ! समय मिलेगा, मैं बेटाशेष चर्चाएं कल प्रगट ! करूंगा। आज का वाक् हमारा वाक्य

अब समाप्त होने जा रहा है आज का वाक् हमारा कह रहा है कि हम परमपिता ! परमात्मा की आराधना करते हुए, अपनी आत्मा को जानते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएं। यह है बेटाआज का वाक्। आज के वाक्य अब हमारे समाप्त !, अब वेदों का पठन पाठन होगा। अच्छा भगवन्आज्ञा !, श्री महेन्द्रसिंह भाटी तथा हीरासिंह स्थान घंघौला जिला बुलन्दशहर :

७ 08 08 1979 पुष्प 41 मन और प्राण

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रां का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण प्रायः होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं। उस प्रभु की ही महिमा इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड में ओत प्रोत है। कोई भी वैज्ञानिक ऐसा मुझे प्रतीत नहीं हुआ है जिसका विज्ञान इतना महान हो कि प्रभु के विज्ञान से उसकी संतुलना हो सके। क्योंकि उसका विज्ञान और ज्ञान सन्तुलना में नहीं आता। वह एक महान् है। उसका विज्ञान इतना नितान्त है कि कोई भी मानव उसके विज्ञान को सीमा में नहीं ला सका है।

मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें ये निर्णय देते हुए कहा था, कि एक एक परमाणु का विभाजन करने से मानो सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्रण उसमें वैज्ञानिकों को दृष्टि पात हुआ है। उस परमाणु के विभक्त करने से यह प्रायः हमें प्रतीत होने लगता है, क्या उस प्रभु का ज्ञान और विज्ञान इतना महान् और नितान्त है? आज मैं तुम्हें विज्ञान के युग में ले जाना नहीं चाहता हूँ। आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ हमें प्रेरणा दे रहा था। और वह प्रेरणा क्या हैं? जो मानव के जीवन को उत्थान करने वाली हैं। मानव में एक विडम्बना सी उत्पन्न कर देती हैं। जब तक हम इस महिमा में रमण नहीं कर पाते, तब तक हमारे विज्ञान और ज्ञान प्रायः अधूरे पन ही में रहता हैं आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट

करने नहीं आया हूँ।

यज्ञस्यः उद्रम भवितामि देवस्त्याम् लोकाः। वेद का ऋषि यह कहता है कि सृष्टि के प्रारम्भ में प्रभु ने यह जगत् रचा जब सृष्टि का प्रादुर्भाव हुआ तो एक सुन्दर सी यज्ञशाला का भी निर्माण किया। और उस यज्ञशाला के मानो भिन्न भिन्न होता गण वे जब होता गण विद्यमान हो करके आहुति देते हैं। उनका आकार बन करके अन्तरिक्ष में गति करता है, और उसके गति करने के पश्चात् उससे वायु मण्डलन का प्रादुर्भाव हो गया। वायुमण्डल में वह स्थित रहने लगा। मानो यज्ञमय जो शब्द है, वह अन्तरिक्ष में गति करने लगा। वायु मण्डल मबन गया और उस वायुमण्डल से इन नाना प्रकार की सृष्टियों का जन्म हो गया। अब एक सृष्टि है, नहीं नाना सृष्टियां हैं। नाना सृष्टियां क्या हैं? मानो जिस रचना से, जिस शब्द रूपी रचना से, शब्द में से यज्ञ का प्रादुर्भाव हुआ और वह शब्द यज्ञमय बन गया।

वह यज्ञ पितर यागी बन गया। परन्तु यज्ञमान से कहने लगे एक समय ब्रह्मा, हे यज्ञमानतुम याग कर रहे हो। क्यों कर रहे हो !? यज्ञमान कहता है कि यज्ञाम् देवम् व्रतोडसुमम् गल व्रतीः देवाः। मैं प्रभु व्रती हूँ। यज्ञमान कहता है मैं व्रती हूँ और मैं व्रती बन करके यमैं याग को जानना चाहता हूँ, कर नहीं रहा हूँ जानना चाहता हूँ। परन्तु यह याग जाना नहीं जाता। यह याग जाना नहीं गया। वैज्ञानिकों ने जब यह विचारा कि हम याग को जानना चाहते हैं तो वैज्ञानिक भी पुत्रो याग को नहीं जान सके। ! वैज्ञानिकों ने इसके ऊपर बहुत अनुसन्धान किया। और उन्होंने यह विचारा कि हम याग को जानें। परन्तु वह यज्ञमय मानो एक आभामय रह गया। तो वह याग एक आभा के रूप में परणित होने लगा। उससे अश्वमेध, वाजपेय और नाना प्रकार के यागों की रचना में विज्ञान आ गया। और उसको जानने से विज्ञान उत्पन्न हो गया।

आओ मेरे पुत्रो मैं तुम्हें बहुत गम्भीर नहीं ले जाऊँगा। यह विषय बहुत गम्भीर बनता ! जा रहा है। परन्तु विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, उस आनन्दमयी आभा को जानते चले जाएं। इस आभा को जानने के पश्चात् मानव के जीवन में एक नवीन नवीन तरंगों का जन्म होता है। और उन तरंगों

में जब वह रमण करने लगता है, तो उन्हीं तरंगों से मेरे पुत्रो इस संसार में जो गति ! आती है। विज्ञान में जो अन्तरिक्ष में नाना प्रकार के शब्द विद्यमान हो करके वायु मण्डल को, वायु को परिवर्तित कर देते हैं। तो मुनिवरोंदेखो !, इसीलिए हमारे यहाँ ! वैदिक ऋषियों ने, आचार्यों ने यह कहा कि आगाम् देवत्तम् यागाः। कि ये जो याग करने वाले ये सदैव जागरूक रहते हैं।

यागों में दो प्रकार के याग हमारे यहाँ परम्परा से ही माने हैं। एक याग वह है जिसको हम आध्यात्मिक वाद कहते हैं। एक याग है जिसे हम भौतिक याग कहते हैं। आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ता भौतिक के मार्ग से हो करके जाता है। और जब तक आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ता भौतिक मार्ग से हो करके नहीं जाता इस आध्यात्मिकवाद में उसे सफलता प्राप्त नहीं होती।

मुझे स्मरण है उद्दालक मुनि का गोत्र। उद्दालक मुनि के गोत्र में नाना ऋषि हुए। परन्तु आज मुझे महानन्द जी प्रेरणा यही दे रहे हैं कि आगाम् देवत्तम् यागाः। आज मुझे याग की प्रेरणाएं प्राप्त हो रही हैं। परन्तु देखो, यहाँ क्रियात्मक याग कर्म करने वाले नाना ऋषि हुए। तुमने बेटा किसी काल में विभाण्डक मुनि महाराज के दिग्दर्शन किए होंगे। ! ऋषि विभाण्डक मुनि महाराज भयंकर वन में विद्यमान हैं। ये त्रेता काल में हुए हैं। और महर्षि भारद्वाज मुनि के समकालीन हुए हैं। भारद्वाज और ये महर्षि विभाण्डक और सुणेत कृतिका के पुत्र रावण के विधाता कुम्भकरण भी, ये तीनों विद्यमान हो करके याग करते रहे। और याग में विज्ञान की सफलता को प्राप्त करते रहे।

एक समय बेटाये ती !नों वैज्ञानिक रूप में विद्यमान थे। तो इन्होंने विज्ञान को जाना और नाना परमाणुओं के ऊपर अनुसन्धान किया। महाराज यह जो विज्ञान परमाणुवाद ! है। इस विज्ञान से तो हम सफलता को प्राप्त नहीं कर सके। हम सफल नहीं हो सके। विभाण्डक मुनि बोले, तो तुम क्या जानना चाहते हो? उन्होंने कहा, कि हम यह जानना चाहते हैं कि इस वायुमण्डल को हम कैसे परिवर्तित कर सकते हैं? मेरे पुत्रोदेखो !, महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज ने मन्त्र उच्चारण किया कि याज्ञानाम देवत्तम् लोकाम् ब्रहेः वृत्तम् ब्रहीः कृतानि। कि हे ब्रह्मपुत्र, निद्रा को विजयी करने वाले, मानो कुम्भकरण को

बेटा निद्रा के ऊपर बहुत अधिपथ्य था। वे छः छः माह तक अज्ञातवास में रह कर ! !अनुसन्धान ही करते रहते थे। परमाणुवाद के ऊपर उन्हें इतना अधिपथ्य था। बेटा मैं उसका वर्णन करने में भी इतना असमर्थ तो नहीं हूँ, परन्तु कर नहीं पा रहा हूँ। परन्तु विभाण्डक मुनि महाराज का दोनों का उनका विचार विनिमय होता रहा और उनको नाना प्रकार के परमाणुवाद के ऊपर बहुत अधिपथ्य था।

महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज ने एक समय कुम्भकरण से यह प्रश्न किया कि हे ब्रहेः व्रतीमैं ये जानना चाहता हूँ कि हम ने श्रवण किया कि एक ! राजा त्रेतकेतु नाम का राजा एक याग कर रहा है। और याग करके वो अपने पितर लोक को जा रहा है। यह क्या है? मेरे प्यारेकुम्भकरणजी ने कहा !, कि महाराज वह जो राजा याग कर रहा ! है और पितरलोक को जा रहा है। इसके दो स्वरूप हैं। एक याग से मानो पितर यागी बन रहा है। एक याग कर्म करने से पितरलोक को प्राप्त हो रहा है। अब पितर बनना और पितर लोकों को प्राप्त होना ये दो वाक्य बन गए।)1) मानो देखो, यागानाम् पितरश्चतम् देवोः पित्राः। गृह में सन्तान को जन्म देना पितरयाग हो गया।)2) और विज्ञान के द्वारा अपने सूक्ष्म पितरों का दर्शन करना वो पितर लोकों को जाना हो गया। अब दो स्वरूप बन गए हैं। इसमें वेद के नाना मन्त्र हैं इस प्रकार के। मेरे प्यारे ! विभाण्डक कहते हैं, हे राजन्मैं ये जानना चाहता हूँ !व्रत्तम् हे ब्रह्मे5 !, विज्ञान की रीति जानकर यौगिकता के स्वरूप से, क्या वह, जब पितर लोकों में पहुंच गया तो कैसे पहुंचा? अब मेरे प्यारेदेखो !, वह वैज्ञानिक और यौगिक अर्थों में, वह यौगिकता में पहुंच गए बोले, कि महाराज मेरे विचार में तो यह आता है कि वो अपने योगाभ्यास ! के द्वारा पितर लोकों में मन और प्राण को ले गए और वे पितरलोकों में पहुंच गए। परन्तु देखो,उन्होंने कहा !, विभाण्डक कहते हैं, और गम्भीरता में पहुंचो। उनकी पत्नी उनके साथ और पितरलोकों में जा रहे हैं।

मेरे प्यारेअब देखो !, वे दोनों जब ये विचार करने लगे तो वे बोले, कि महाराज मैं ! इस विज्ञान तक नहीं पहुंचा तब महर्षि विभाण्डक मुनि कहते हैं। हे वैज्ञानिक मानो देखो, मेरे विचार में यह आता है कि पितर लोकों को जानो। हमारे यहाँ नाना ऋषि

इस प्रकार के हुए हैं जो इस यज्ञ के द्वारा पितरलोक, पित्तरों के दर्शन करने वाले हैं। वाहन बना दिया है और वाहन में विद्यमान होकर के गति कर रहे हैं। मेरे प्यारेदेखो !,! यह बड़ा गम्भीर वाक्य बन गया है। अब ऋषि इसका उत्तर देने लगा विभाण्डक कि यज्ञमान यज्ञ करता है, याग कर रहा है। अपने विचारों की दुरितानि विचारों की आहुति दे रहा है। और दुरितानि विचारों की आहुति देता हुआ वह जो याग कर रहा है उसमें जो साकल्य अग्नि में प्रवेश हो गए हैं। अब वह यज्ञमान कहता है पत्नी से, हे देवि ! आओ, अब हम याग करेंगे। अब वह देवी के समीप, साकल्यम् देवत्याम्। अग्नि में सांकल्य परणित करने लगे जब वो साकल्य परणित करने लगे अर्थात् अग्नि में अग्नि तेजोमयी बन करके भस्माकृति वह भस्मीभूत बना रही है। वे साकल्य को भस्म बना करके सूक्ष्म बना रही है। उन परमाणुओं को वो एकत्रित कर रहा है, और परमाणुओं को जब एकत्रित कर रहा है। उन परमाणुओं से एक त्रि केतु व्रणा नामक एक परमाणु होता है मनोवंचनि परमाणु। अब दोनों परमाणुओं का उन्होंने मिलान किया। दोनों को मिलान करके, दोनों का संघर्ष हुआ। तो उसमें से कुछ तरंगों का जन्म हुआ। उन तरंगों में से एक चित्र कोई दृष्टिपात हो गया। अब वो वहीं स्थिर हो गए और उन परमाणुओं का मिलान करने लगे। अब उस यन्त्र में उन्होंने अपनी जो आहुति देते थे और आहुति जो शब्द अन्तरिक्ष में जाने लगा तो उसका चित्र उन्हें स्वयं दृष्टिपात आने लगा। उन्होंने विचारा यह तो कोई वस्तु है, यह तो कोई विज्ञान है। आगे उन्होंने अनुसन्धान किया तो उन्हें मेरे प्यारेदेखो !, कुछ और चित्र उनको दृष्टिपात होने लगे। और उन्होंने वैज्ञानिक याग के द्वारा एक यन्त्र का निर्माण किया। उसमें उनके कुछ पिताओं के, दर्शन होने लगे। और जब उन्होंने यन्त्र के ऊपर विचार किया, निर्माण किया तो अपने 50वें महापिता के दर्शन होने लगे। अब वह यज्ञमान पितरलोक को जा रहा है। उसकी 100वें वह और अनुसन्धान किया तो वे !उड़ान पितरलोक में जा रही है। मेरे प्यारे महापिता के दर््शन करके ऋषि मौन हो गए मेरे प्यारेवह कैसे हो रहा था दर्शन !? क्योंकि प्रत्येक शब्छ के साथ में मानव का चित्र और वो चित्र सहित जो शब्द है वह अन्तरिक्ष में ओत प्रोत है। अन्तरिक्ष में से वैज्ञानिक जब अनुसन्धान करता है, याग के

द्वारा परमाणुओं के द्वारा चित्रावलियों का निर्माण करता है तो उसमें शब्दों के साथ में उस मानव के चित्र आने प्रारम्भ हो जाते हैं।

तो मेरे प्यारेयह जो यज्ञमय शब्द है यह कितना वैज्ञानिक है !? इसमें कितना विज्ञान है? परन्तु देखो,जब इसके ऊपर अनुसन्धान किया जाता है !, और गम्भीरता से अनुसन्धान करते हैं तो यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक यज्ञशाला के एक रूप में दृष्टिपात आता है। जैसे मानव के जीवन के 5 (पांच स्तम्भ माने गए हैं। इसी प्रकार ब्रह्माण्ड के भी (स्तम्भ माने गएं हैं। तो ये पांचों खम्भों वाला जगत् है पञ्च महाभूत हैं। पञ्च खंभों 5 वाला यह मानव शरीरजो पञ्च ज्ञानेन्द्रियां कहलाती हैं। ये पञ्च महाखंभ हैं जिनके ऊपर यह ज्ञान, विज्ञान और ब्रह्माण्ड स्थिर हो रहा है। तो इसके ऊपर हमें कितना अनुसन्धान करना है पुत्रो।

विचार विनिमय यह करना है कि मानव के लिए प्रभु ने कितने कार्य में इसको रत्त कर दिया है। मानव को कितना रत्त रहना चाहिए वाणी को अनुसन्धान करने में। क्या इसके मन को कोई शान्ति प्राप्त हो सकती है? क्या विलासिता आ सकती है। इसके मन में? कदापित नहीं आ सकती। क्या इसके मन में एक दूसरे को नष्ट करने की भावना भी नहीं आती। है। यदि वो अनुसन्धान करने वाला है। और यदि वह अनुसन्धान ही नहीं करता इस पञ्च खम्भों वाले इस अपने ही गृह को नहीं जानता तो मेरे पुत्रो यह ! संसार मानो एक केवल खिलवाड़ हो रहा है। वैज्ञानिक जनों को समय प्राप्त नहीं होता। दार्शनिकों को भी प्राप्त नहीं होता। परन्तु आलस्य और प्रमादवादियों को न ज्ञान होता है, न प्रकाश होता है, उनके जीवन में रात्रि होती है। मेरे प्यारेदेखो !, ग्लानि बन जाती है। भय की उत्पत्ति हो जाती है आलस्य प्रमादियों को।

जो मानव अनुसन्धान वेत्ता होता है, जो मानव दार्शनिक होता है, मानो दर्शन के ऊपर चिन्तन करने वाला होता है। वह प्रभु का विश्वासी होता है, और जहाँ प्रभु होता है, वहीं वह होता है। प्रभु के शरण में जा करके वह मानव भयभीत नहीं होता भय उससे दूर हो जाता है। परन्तु देखो, जब हम यह विचार और भी गम्भीरता से करते हैं तो यह ! प्रभु का अमूल्य जगत् है। मेरे पुत्र ने कई कालों में कहा था, कि यह संसार बड़ा

विचित्र है। क्या आज से ही विचित्र है, परम्परा से ही विचित्र है। जहाँ रजोगुण तमोगुण हैं, वहीं विचित्रता है। जहाँ तीनां गुण विद्यमान हैं वहीं तो विचित्रता आएगी। वहीं तो नाना प्रकार की तरंगें उत्पन्न होंगी। और जहाँ केवल सत्य ही सत्य रह जाता है वहाँ तमोमयी तरंगें समाप्त हो जाती हैं।

मेरे पुत्रोविचार विनिमय क्या !? आज मैं तुम्हें कोई विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। केवल तुम्हें यह परिचय देने के लिए आया हूँ पुत्रो प्रत्येक मानव को इस संसार ! में वैज्ञानिक बनना चाहिए और वैज्ञानिक भी अध्यात्मिक विज्ञान में। क्योंकि अध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता जो मानव होता है, जो आध्यात्मिकवादी बन जाता है। उस मानव के जीवन में प्रकाश आ जाता है। और प्रकाश जब आ जाता है तो वहाँ निद्रा नहीं आती है। वहाँ रात्रि नहीं आती, वहाँ अज्ञान नहीं रहता। वह प्रभु के राष्ट्र में चला जाता है। प्रभु के राष्ट्र में पुत्रो जब रात्रि नहीं होती तो मृत्यु भी नहीं होती और जब मृत्यु नहीं होती तो ! अज्ञान भी नहीं होता और जब अज्ञान नहीं होता तो वहाँ मृत्यु भी नहीं होती है वहाँ भय क्यों होने लगा? तो मेरे पुत्रोहमें प्रभु के राष्ट्र पर विचार विनिमय ! करना है। यह संसार तो परम्परा से ही रजोगुण तमोगुण से ही बंध हुआ नृत्य कर रहा है। परन्तु आज से नहीं परम्परा से ही। कहीं देवासुर संग्राम हो रहा है। कहीं एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को नष्ट कर रहा है। कहीं भौतिक विज्ञान विशेष बल वाला हो गया है तो वह विनाश को प्राप्त हो गया। परन्तु वही विज्ञान अध्यात्मिकवाद में परणित हो गया है तो वह प्रकाश में

चला गया। विज्ञान का सुदपयोग उसमें हो गया है। परन्तु विचारना यह है कि हम मानव को अपने कार्य में कितना व्यस्त रहना है। मानव को इस अपने मनराम को सांत्वना नहीं देनी है। ये जब सांत्वना को प्राप्त होता है तब ही यह मानव की मृत्यु ले आता है। मानव की वहीं मृत्यु हो जाती है।

एक वाक्य मुझे स्मरण आ गया पुत्रो जो मैंने बहुत पुरातन काल में भी प्रगट किया ! था। एक समय एक अधिराज थे। एक राजा के यहाँ एक सेवक पहुंचा। राजा ने कहा, अरे, तुम कौन हो? महाराजमैं सेवक हूँ। क्या तुम सेवा करनी चाहते हो !? उन्होंने कहा

कि महाराजमैं सेवा करने के लिए आया हूँ। क्या वेतन लोगे !? उन्होंने कहा, मैं कोई वेतन नहीं लूंगा। मेरी एक प्रतिज्ञा है वह आपको पूर्ण करनी होगी। राजा ने कहा, क्या प्रतिज्ञा है? कि जिस समय मुझे कार्य प्राप्त नहीं होगा उसी समय मैं आपको मृत्यु दण्ड दे दूंगा। तुम्हें मृत्यु दे दूंगा। उन्होंने कहा ये तो बहुत प्रिय है। राजा ने स्वीकार कर लिया अब बेटा राजा कार्य उच्चारण करता और कार्य होने लगा। अब कुछ ही समय ! में राजा के यहाँ कार्य देने के लिए सूक्ष्मता आ गई। अब राजा को अपना स्वास्थ्य बड़ा प्रिय था। अब मृत्यु के भय से मुनिवरोंदेखो !, स्वास्थ्य भी नहीं रहा। वह भयभीत ! होने लगा। उस सेवक से भयभीत थे। मृत्यु दण्ड नहीं चाहता था राजा। एक समय कोई बुद्धिमान पुरुष प्राप्त हुआ। उसने कहा, अरे, राजन्तुम्हारा स्वास्थ !्य बड़ा प्रिय था। तुम कैसे बन गएं हो? उन्होंने सब गाथा उस बुद्धिमान से वर्णन की वे योगेश्वर थे, उन्होंने कहा, कि महाराजमैं मृत्यु से कैसे !, जीवित रह सकूँगा? उन्होंने कहा तुम उसे अपने व्यक्तिगत कार्यों में क्यों लगा रहे हो? उसे संसार के कार्य में परणित कर दो। मेरे प्यारेदेखो !, वह संसार का क्या कार्य? कर्म ब्रह्मेः कृताम्। संसार का भी नहीं, तुम्हें इतना ज्ञान हो तो देखो, एक दण्ड पृथ्वी में स्थापित करो और उससे कहो कि इस पर मानो देखा ऊर्ध्व में ध्रुव में, ऊर्ध्व में ध्रुवा में जाओ। उन्होंने मेरे प्यारेदेखो !,! राजा ने वाक्य स्वीकार कर लिया। और उसने अपनी राज्य स्थली पर एक दण्ड पृवि में स्थापित कर दिया। और मुनिवरोंउससे कहा !, सेवक तुम इस पर आओ जाओ, गमन करते रहो। मेरे प्यारेउन्होंने कहा !, अच्छा भगवन् । तो उस पर गमन करने लगे। और ! राजा उसकी मृत्यु से बच !उसको छुटकारा कहो सेवक को प्राप्त होता था मेरे प्यारे गया। मृत्यु नहीं होने दी।

तो मेरे प्यारेजब यह जो वह सेवक कौन है !? राजा कौन है? बुद्धमान कौन है? इसके ऊपर विचार किया जाए। बेटा राजा तो !यह शरीर है और बुद्धिमान इसमें बुद्धि है, ज्ञान है, परन्तु यह जो मनरूपी सेवक ऐसा विचित्र है। तो उसने कहा कि तुम यह जो प्राणरूपी सेवक ऐसा विचित्र है। तो उसने कहा कि तुम यह जो प्राणरूपी दण्ड है। इस प्राणरूपी दण्ड पर गमन करते रहो। मेरे प्यारेमन और प्राण का म !िलान ही मुक्ति

कहलाती है। मन और प्राण के मेले को योग कहते हैं। मन और प्राण के मिलान को वैज्ञानिक कहते हैं। मन और प्राण के मिलान को ही सृष्टि चक्र को जानना कहते हैं। मन और प्राण की आभा को जानना ही संसार में पितर लोकी बनना है। बेटा जब ! एक सूत्र है और उस सूत्र में यह मनरूपी सेवक कटिबद्ध हो जाता है। एकाग्र बुद्धि होने पर मानव बुद्धिमान क्या योगेश्वर बन जाता है। वह विवेकी बन जाता है। उसे क्रोध अब्रहेः और भी नाना प्रकार की मात्रा नहीं आती।

तो विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रो जो मानव इस संसार में अपना कल्याण चाहता !है, याग चाहता है, अपनी मान वीयता को महान् बनाना चाहता है। वह मनरूपी सेवक को प्राणरूपी स्थली पर ओत प्रोत करा देता है। मुनिवरोंदेखो !, वह, अब्रहाः उसी से ज्ञान का प्रादुर्भावहोता हैं तो विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे आज का हमारा विचार यह ! कि हमारे यहाँ आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ता, इस भौतिकवाद के मार्ग को हो करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है। यह मन का जानना प्राणों का जानना यह मुनिवरों ! देखो, भौतिकवाद है। पञ्च महाभूत इसी से कटिबद्ध हैं और इसको जान करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है।

आज मैं मुनिवरोंदेखो !, मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे कई काल में प्रगट करते ! महानन्द जी कुछ !हुए कहा था। आज मैं पुनः से यज्ञम् ब्रह्मेः कृताम्। मेरे प्यारे उच्चारण करना चाहते हैं दो शब्द।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् त्रिवर्धाः मयाः कृतम् देवाः नमोः हिरण्यम् देवाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी आध्यात्मिकवाद के मर्म की !भद्र ऋषिमण्डल ! चर्चाएं कर रहे थे। इनका आध्यात्मिकवाद तो परम्परा से ही रहता ह। ै जिस स्थली पर हमारी यह आकाशवाणी प्रवेश है, वहाँ एक याग की प्रतिभा है। आज मेरा आत्मा प्रसन्नता युक्त हो रहा था। कैसा प्रिय याग? मैं अपने विचारों से मैं यह उच्चारण करने आया हूँ। मेरी सहानुभूति रहती है यागों में यज्ञमान और उद्गान गाने वाला ब्राह्मण पर और यज्ञमान उनका आयु दीर्घ होना चाहिए। आयु में बलवती होनी चाहिए। हे यज्ञमान ! तू अपनी अन्तरात्मा को उज्ज्वल बनाने में सदैव तेरी भावना रहहनी चाहिए। संसार तो

परंपराओं से ही गति कर रहा है। आज मैं यही उच्चारण करने के लिए आया कि यज्ञमान सपत्नी उनका सौभाग्य अखण्ड बना रहे। उनके जीवन में सदैव सुमति आनी चाहिए। और पवित्र की महान् देवी उनके अन्तरहृदय में प्रवेश की जानी चाहिए। ब्राह्मण अब्रहेः गान गाने वालों की आयु दीर्घ हो और उद्गन गाने वाला मानो देखो, वायुमण्डल में देवताओं के आँगन में विद्यमान हो जाता है। यज्ञमानमैं यज्ञ की चर्चा कर रहा हूँ !, वहाँ आधुनिक काल की भी तो चर्चा करूं।
मैं बहुत पुरातन काल से गुरुदेव को इस संसार का परिचय कराता हूँ कि यह संसार अग्नि वेदी पर आने के लिए जा रहा है। वह समय दूर नहीं रहा जब यह अग्नि के काण्ड में परणित होने जा रहा है। मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आ रहा हूँ। केवल यह कि मैं आज संसार के स्वार्थ वाद को दृष्टिपात करके आश्चर्य कर रहा हूँ। राष्ट्रवाद में स्वार्थ वाद है। प्रत्येक गृह में स्वार्थवाद है। पति पत्नी स्वार्थी बन गए हैं। इस समाज का क्या बनेगा? इसको प्रभु ही जानता है। परन्तु मैं अपने वाक्यों में उच्चारण क्या कर सकता हूँ? केवल स्वार्थवाद ही इस समाज के विनाश का कारण बनता चला आया है परम्परा से।
इसीलिए प्रभु से मेरी प्रार्थना है, कि हे प्रभु तू संसार के प्राणियों को सुमिति दे और ! यह स्वार्थवाद समाप्त हो। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वाक्य उच्चारण करके अपना विराम देता हूँ। क्योंकि मैं विशेष चर्चा प्रगट ही नहीं करना चाहता। वाक्य इतना प्रिय हो रहा था पूज्यपाद का। वह विज्ञान और ज्ञान की उड़ान उड़ रहे थे। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा। पर इस आशीर्वाद के साथ कि यज्ञमान का जीवन दीर्घ हो। आयु में महत्ता आए यह सदैव मैं प्रार्थना करता रहता हूँ।
मेरे पूज्यपाद ब्रही कृताम्मेरे पुत्र ने कुछ वाक्य क !हा है। अग्नि काण्ड की जो इन्हांने चर्चाएं की सूक्ष्म रूप से, संसार चलता ही है। यज्ञमान अपने जीवन में सदैव अखण्डता को प्राप्त हो। धर्म और मानवता ही जीवन में इस समाज में महान् बनाती रहती है। यह

वाक्य आज हमारा समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। बरनावा

८   28 09 1981 पुष्प 40 याग महिमा

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने, पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव जो संसार का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है उस देव की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह मेरा देव यह जो जितना भी जगत् दृष्टिपात आ रहा है यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड के एक एक कण में व्याप्त रहता है। मानो वह जो मेरा प्यारा प्रभु जो इस प्रकृति ! के कण कण में ओत प्रोत है।

आओ आज हम उस अपने देव की महिमा का गुणगान गाते चले जाएं। क्योंकि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर देव की महिमा का गुणगान गाते ही रहते है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनुपम है। वह दृष्टिपात गोचर नहीं होता। परन्तु उसके साकार स्वरूप का जब हम दृष्टिपात करते हैं, यह संसार जो दृष्टिपात आ रहा है। यह उस मेरे ब्रह्म का साकार रूप ही माना गया है। क्योंकि उसी की चेतना से यह जगत् हमें चेतनित दृष्टिपात आता है।

परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र हमें यह वाक् प्रगट नहीं कर रहा है। आज का हमारा वेद का मन्त्र कह रहा है हे मानवत् संसार में दार्शनिक बन !, अपने स्वतः मानवत्व का दर्शन करने वाला बन। क्योंकि प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, इस मानवीय दर्शन के ऊपर चिन्तन करता चला आ रहा है। आज नहीं बहुत परम्परागतों से ही, मानव अनुसन्धान करता रहा है अथवा आत्मा के ऊपर भिन्न भिन्न प्रकार की मानव की उड़ान सदैव रहती रही है। प्रत्येक मानव उड़ान उड़ता रहा है क्या उस प्रभु की प्रतिभा को प्राप्त करने के लिए और उसके साकार और निराकार स्वरूप दोनों का निराकरण करने के लिए वह यह विचारता रहा है कि मैं उसके सम्बन्ध में कुछ जानने के लिए तत्पर

रहूँ।

बेटा उसमें नाना ऋषि इस प्रकार ,हमारे यहाँ एक उद्दालक गोत्र विशाल गोत्र रहा है ! इस संसार में। क्योंकि वैज्ञानिकता में ,के हुए हैं जिनकी बहुत विचित्र उड़ान रही है भी और आध्यात्मिकवाद दोनों में उड़ान रही है। परन्तु आज मैं तुम्हें आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान में तो विशेष ले जाना नहीं चाहता हूँ परन्तु विचार विनिमय क्या? आज का हमारा वेदमन्त्रों यज्ञों के ऊपर अपना विचार अथवा अपनी आभा प्रगट कर रहा है। हे मानवतू य !ाज्ञिक बन। जहाँ मानव दर्शन के सम्बन्ध में, मानवीयता के सम्बन्ध में विचार विनिमय होता रहा वहाँ याज्ञिक बनने का भी प्रसंग आता रहा। प्रत्येक मानव याज्ञिक बन रहा है और बनता रहता है। मुझे स्मरण आता रहता है, हमने तुम्हें कई काल में वर्णन भी कराया है।

वैज्ञानिक भगवान कृष्ण

हमारे यहाँ भगवान कृष्ण और अर्जुन का दोनों का संवाद आता रहता है। उनकी विचारधाराएं आती रहती हैं भगवान कृष्ण और अर्जुन दोनों समुद्र !एक समय बेटा , के तट पर विद्यमान थे। परन्तु दोनों का वैज्ञानिक तथ्यों के ऊपर विचार विनिमय हो बेटा एक ऐसे यन्त्र का निरीक्षण किया था। जिसको वायु में रमण करने मात्र से सूर्य ! की किरणों को वह यन्त्र निगलता था। सूर्य की किरणों को निगल करके द्यौ अथवा विद्युत इस सूर्य में विद्यमान हैं जिस विद्‌या से, जिस प्रकाश से वह इस रात्रि को अपने में धारण कर लेता है अथवा चन्द्रमा के प्रकाश को अपने में धारण कर लेता है। वही सूर्य का प्रकाश भगवान कृष्ण का यन्त्र उस प्रकाश को निगल रहे थे और क्योंकि वह द्यौ का जो प्रतिनिधि माना गया है। हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में अथवा सृष्टि के गर्भ में कुछ ऐसा माना जाता है क्या सूर्य द्यौ का एक प्रतिनिधि है। क्योंकि द्यौ से यह प्रकाश लेता है और उसी प्रकाश को ले करके मानो यह रात्रि को अपने में धारण कर लेता है। चन्द्रमा के प्रकाश को कान्तिमयी बना करके प्रकाश में ले जाता है। परन्तु वही

प्रकाश जो चन्द्रमा को अपने में धारण करने वाला हो रात्रि को अपने गर्भ में प्रवेश कराने वाला हो। परन्तु वही भगवान कृष्ण का यन्त्र था जो सूर्य व्राणकेतु यन्त्र कहलाता था। वह यन्त्र सूर्य की किरणों को निगल रहा था। और निगल करके बेटा वो मानो ! रात्रिमें उस यन्त्र से प्रकाश लिया जाता था। रात्राणि गथं ब्रह्मणा लोकाः वही प्रकाश मेरे प्यारेदेखो !, भगवान कृष्ण ने यन्त्रों में स्थिर कर दिया। उसी यन्त्र से और नाना प्रकार के यन्त्रों का विकास किया जा रहा था। मेरे प्यारे वह यन्त्र वायु मण्डल में ! त्याग दिया जाए तो वायु को दूषित भी कर रहा था। उस समय भगवान कृष्ण ने कहा, हे अर्जुन मेरे यहाँ इस प्रकार का यन्त्र मैंने एक स्थिर किया है क्या सूर्य किरणों को ! धारण करने वाला अथवा निगलने वाला यन्त्र है। मेरा जो मानो पच्चीस राष्ट्रों के मानो देखो, प्राणियों को वायुमण्डल में त्यागते उनके प्राणों का हनन कर सकता है।

मेरे प्यारे जब यह !जब भगवान कृष्ण ने ऐसा कहा तो अर्जुन ने कहा कि प्रभु ! वायुमण्डल इतना दूषित हो जाएगा, वायुमण्डल में इतना दूषितपन आ जाएगा तो प्रभुउसको शोधन करने का भी आपके द्वारा उत्तकृति भी होनी चाहिए। मानो शो !धन करने की क्षमता भी होनी चाहिए। तो उस समय भगवान कृष्ण ने कहा, हे अर्जुन ! इस प्रकार वायु मण्डल दूषित हो जाता है, पृथ्वी के गर्भ से खनिज को वैज्ञानिक अपने में धारण कर लेते हैं अथवा राष्ट्र की सम्पदा बना करके उसे वायु में त्याग करके वायु मण्डल दूषित हो जाता है। प्राण घातक बन जाता है। उस समय हम क्या करते हैं? उसको शोधन करने के लिए हम द्यौ आभां यज्ञनं प्रव्हा हम उस समय याग करते हैं उस समय हम याग करते हैं और अग्नि में घृत को प्रवेश करते हुए अग्नि में सूक्ष्म रूप बना करके वायुमण्डल में प्रवेश करा देते हैं और वह वायुमण्डल में जितने भी दूषित परमाणु हैं। उनको वह परमाणु निगलते रहते हैं और शुद्ध वायुमण्डल बनाते रहते हैं। अथवा निर्माण करते रहते हैं।

तो विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारेवेद का ऋषि कहता है !, वेद का मन्त्र कहता है हे मानवतू याज्ञिक बन तू दूषित कर्म न कर !, याज्ञिक बन और याग कर्म करने वाला बन। मेरे प्यारे हमें याग करना !उस समय भगवान कृष्ण ने यही कहा था हे अर्जुन !

वह याग की प्रतिक्रिया भी जानते थे। तो !चाहिए। मैं याग करता रहता हूँ। मेरे प्यारे मानो देखो, याग एक ऐसा कर्म है इस संसार में प्रायः महान् माना गया है। जो हमारे ऋषि मुनि परम्परागतों से ही, याग कर्म करते रहे हैं। जहाँ भी गुरु शिष्य का संवाद आता है, गुरु शिष्य एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके याग करते हैं। याग क्यों करते हैं क्योंकि याग से वायुमण्डल पवित्र बनता है। गृह में पवित्रता आती है और वायुमण्डल ? को शोधित किया जाता है। क्योंकि हमारे यहाँ वैज्ञानिक तथ्यों में ऐसा माना है कि शब्दों के साथ में मानव के चित्र चित्रण करते रहते हैं। वायुमण्डल में जितने भी शब्द विद्यमान हैं।

क्योंकि मुझे स्मरण आता रहता है, पुत्रो एक समय महर्षि सोमकेतु के द्वारा ब्रह्मचारी ! कवन्धी पहुंचे और ब्रह्मचारी कवन्धी ने सोमकेतु के द्वारा कहा कि महाराज क्या कर ! रहे हो? उस समय सोमकेतु को मेरे प्यारे अनुसन्धान करते हुए बारह वर्ष हो गए थे ! और वह एक विषय पर अनुसन्धान कर रहे थे कि हमारे इस मानव शरीर में जो चित्त है जिसमें बाल्य से युवा कालतक के मानो यन्त्र रूप में संस्कार विद्यमान हैं जिन्हें हम संस्कार कहते हैं अथवा मानव को ध्यानावस्थित होते ही मानव के चित्र समीप आ जाते हैं वह मानव हो या न हो। तो उन चित्रों का वह चित्रण कर रहे थे। सोमकेतु ने कहा, हे ब्रह्मचारी कवन्धीमैं अपने जन्म जन्मान् !तरों के चित्रों के ऊपर अनुसन्धान कर रहा हूँ। जैसे मानव के शरीर के जो चित्र होते रहते हैं, हम स्वप्नावस्था में नाना प्रकार की स्वप्नावस्था को प्राप्त होते रहते हैं परन्तु उनमें चित्र आते रहते हैं उन चित्रों का मैं चित्रण करना चाहता हूँ। अथवा उनको दृष्टिपात करना चाहता हूँ। तो मेरे प्यारे जब उन्होंने ऐसा कहा तो ब्रह्मचारी कवन्धी भी इसी कार्य में रत्त हो गए और ! बारह वर्ष तक चित्रण !वह अनुसन्धान करने लगे। तो विचार करते करते उन्होंने बेटा और याग करते हो गए। मानो यागों के द्वारा वह चित्रों को अन्तरिक्ष में से अपने में

धारणा और प्रवेश स्थित कर रहे थे। उसी के द्वारा वह अपनी आभा को प्राप्त हो रहे थे।

याग से योग सिद्धि

तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरों हमारे ऋषि मुनि परम्परागतों से अनुसन्धान करते ! रहे हैं, और यागों के ऊपर उनका विशेषकर अधिपथ्य रहा है। याग मानव का जीवन है। महर्षि सोमकेतु ने तो यहाँ तक कहा है कि ऋषियों का योग में ले जाने वाला याग है। याग कहते हैं देवताओं को प्रसन्न करना। देवता प्रसन्न कैसे होते हैं? हमारे मानव के शरीर में मानो पञ्च महाभूत विद्यमान हैं और वह हमारे देवता कहलाते हैं। परन्तु पञ्चमहाभूतों का शोधन करना केवल सुगन्ध के द्वारा हो सकता है। वह यागों के द्वारा हो सकता है। वह देवता जब मानव से प्रसन्न हो जाते हैं तो मानव देवता बन जाता है। आत्मा का लोक पवित्र बन जाता है। जब आत्मा का लोक पवित्र बन जाता है गृह पवित्र बन जाता है तो मानव योग की अवस्था में प्राप्त होने लगता है। योग को प्राप्त करने लगता है। योग सिद्ध आत्मा हो जाती है। योग को अपने में सिद्ध कर लेते है।

तो बेटायह कैसा विचित्र विज्ञान है !? आज मैं कौन से विज्ञान में चला गया हूँ। आज मैं याज्ञिक विज्ञान में चला गया जहाँ मानो योगी अपने जन्म जन्मान्तरों के चित्रों को चित्रण करता है अथवा उन्हीं के द्वारा वह विज्ञान को प्राप्त करता है। आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों का समन्वय करता है। दोनों का समन्वय करके एक एक शब्द के ऊपर वह अनुसन्धान करता है। एक एक शब्द पर अनुसन्धान करता हुआ अपने जीवन को महान् और पवित्रवाद में ले जाता है।

तो मेरे प्यारेविचार विनिमय क्या !? आज हम याज्ञिक बनें। जिससे हमारा जीवन पवित्र बन जाए और हमारे जीवन में एक यौगिकता आ जाए। क्योंकि यौगिकता उसी काल में आती है जबकि हमारा जीवन महान् और आभा में परणित करने वाला बन जाता है। मेरे प्यारेमुझे स्मरण आता रहता है !, मैं ऋषि मुनियों की वार्त्ता प्रगट कराता रहता हूँ। मुझे स्मरण आती रहती हैं वह वार्त्ताएं जब बेटादेखो !, याग करने से मानव षोडश

कलाओं का बुद्धिमान, षोडश कलाओं को जानने वाला होता है।

याग से षोडश कलाओं का ज्ञाता

मेरे प्यारे मुझे !स्मरण है त्रेता के काल में जब भगवान् राम महर्षि वशिष्ठ के द्वारा पहुंचे। विद्यालय में जब प्रवेश कराए गए तो मेरे प्यारेदेखो !, भगवान राम को प्रथम वशिष्ठ ने याग की प्रतिक्रिया वर्णित कराई। राम ने उसी प्रतिक्रिया को ले करके, मानो उसी याग को ले करके उन्होंने अपने जीवन में षोडश कलाएं जो मानव में, सुषुप्ति में रहती है उनको जागरूक करने का प्रयास किया।

भगवान राम की वैज्ञानिकता

तो भगवान राम बेटा बारह कलाओं के जानने वाले कहलाते थे और वे बारह कलाएं ! देखो !जिनको धारण करने वाले भगवान राम ने बेटा, राष्ट्र समाज और अपने जीवन को महान् बनाने का प्रयास किया। मुझे स्मरण आता रहता है उनका जीवन बेटा वह ! घ्राण के द्वारा इस पृथ्वी को सुगन्धित करने से उन्हें इतना ज्ञान होता था कि इतनी देखो !दूरी पर इतना खनिज विद्यमान है। मुनिवरों, जब इस विद्या को प्राप्त करने के पश्चात् महर्षि भारद्वाज मुनि के द्वारा जब मुनिवरोंभगवान राम पहुंचे !, विश्वामित्र उनके सहित हैं। विश्वामित्र और भगवान राम जब वह महर्षि भारद्वाज मुनि के द्वारा पहुंचे तो उन्होंने कहा कहो रामआज कैसे आसन को पवित्र किया। उन्होंने कहा !, प्रभु मैं कुछ ! वैज्ञानिक तथ्यों को जानने के लिए आया हूँ। तो मेरे प्यारे उन्होंने वैज्ञानिक तथ्यों ! को जानने के उन्होंने प्रयास किया और प्रयास करने के पश्चात् उन्होंने अहिल्याकेतु व्रणीत नाम के यन्त्र का निर्माण किया, जो ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारिणी शबरी मेरे पुत्रोंदेखो !, उनके द्वारा उन्होंने वैज्ञानिक तथ्यों को जाना और यन्त्र का निर्माण किया जिस यन्त्र में इस पृथ्वी से दस दस योजन मानो पृथ्वी के गर्भ की वार्त्ता मानो यन्त्रों में चित्रण आ जाता था। उस यन्त्र का चित्र आ जाता था कितनी दूरी पर कौन सा खनिज है और कौन सी धातु कहाँ पर नृत्य कर रही है? भगवान राम ने उसी धातु को जानने का अथवा उसी को निकासने का प्रयास किया उन्होंने अपनी विज्ञानशाला दण्डक वन

में जहाँ मुनिवरोंमहर्षि विश्वामित्र ने धनुर्याग किया था !, उसी धनुर्याग की स्थली पर याग किया जिससे उन्होंने धर्नुविद्या और उन्होंने बेटायन्त्रों के द्व !ारा पृथ्वी के खनिजों को जानने का प्रयास किया।

तो मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे एक समय वर्णन कराया था कि आधुनिक काल में ! अहिल्या क्या थी !कहते हैं कि अहिल्या का उद्धारक भगवान राम थे। मेरे प्यारे? वह अहिल्याकेतु नाम के यन्त्रों का उन्होंने निर्माण किया था जिससे भूमि में कौन सा खनिज कहाँ विद्यमान है और भूमि को महान् बनाने के लिए उसका उपयोग करना, खनिजों को पाना और खाद्य पदार्थों को पाना और राष्ट्र को सम्पन्न बनाना यह भगवान राम की विशेषताएं थीं। मानो उन्होंने भारद्वाज मुनि आश्रम में बेटा नाना प्रकार की ! विद्याओं का अध्ययन किया। भारद्वाज मुनि महाराज ने बेटा वर्षों राम उनके आश्रम ! में विद्या अध्ययन करते रहे और विश्वामित्र भी धनुर्विद्या देते रहे। परिणाम उसका यह हुआ कि उन्हें पारायण बनाया।

बेटाकैसा विचित्र काल था !, उस समय कि भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ, एक यन्त्र का निर्माण किया गया था जिस यन्त्र का नाम चन्द्र भानु कृति विश्लेष यन्त्र कहते थे मानो वह चन्द्रमा के जितने खनिज थे मानो चन्द्रमा के गर्भ में जितने खनिज थे उन सब खनिजों को जानकर के उनके चित्र वह पृथ्वी में भारद्वाज की विज्ञानशाला में उसके चित्र आते रहते थे और उसके खनिज आते रहते थे, मानो उस मण्डल में क्योंकि स्वर्ण की मात्रा चन्द्र मण्डल में विशेष मानी गई है। चन्द्रमा में तंब्रेतकेतु नाम की धातु का निर्माण विशेष होता रहा। उस सबके चित्र आते रहे और वैज्ञानिकजन, वहाँ उनका यातायात बना रहा। तो बेटामैं विज्ञान ! के युग में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार तुम्हें यह दे रहा हूँ मेरे पुत्रो याग करना !इन सब कार्यों के लिए हमें सबसे प्रथम बेटा ! होगा। हमें याज्ञिक बनना होगा। याज्ञिक कौन कहलाता है? बेटा जो अपने मस्तिष्क ! से कार्य करता है। जो बुद्धि को कुशल बनाता है, महान बनाने का प्रयास करता है।

तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरोंदेखो !, भगवान राम कैसे वैज्ञानिक थे? बारह कलाओं को जानने वाले। कलाएं किसे कहा जाता है? यह बेटा तुम्हें मैं कल वर्णन करूंगा। !

जो भगवान राम बारह कलाओं को जानते थे उसका विश्लेषण तो मैं कल ही कर पाऊँगा। आज का विचार तो केवल इतना ही है क्या भगवान राम आठ वर्ष की अवस्था से बेटा वो याग करते थे और वह मानो वेदों को ध्वनि रूपों में गाते रहते ! एकान्त स्थली पर विद्यमान हैं !थे। बेटा, वशिष्ठ के चरणों में हैं परन्तु वेद का गायन चल रहा है। रात्रि समय जब भी राम को दृष्टिपात करो वह गान ही गाते दृष्टिपात होते थे। मेरे प्यारेमानो देखो !, माता कौशल्या का जीवन भी सफल था। एक समय भगवान राम से महर्षि व्रतेन्तु ने कहा था हे राम तुम हर समय गाते रहते हो। इसका कारण ! क्या है? यह विद्या तुम कहाँ से प्राप्त करते हो? भगवान राम कहता है मतप प्रमाणं जतप स्वानि असुतम देवा मानो देखो, माता ने मुझे सुयोग्य बनाया है। मैं ऋषियों की कृपा से मेरी माता ने मुझे पाया है, प्राप्त किया है। मैं सदैव उस महान् देव का गान गाता रहता हूँ जिसने वेद जैसी पवित्र विद्या मानो देखो, इस संसार में प्रकाशित की है, उसको पान करता रहता हूँ। आभा में रमण करता रहता हूँ। उसी में मेरी प्रतिष्ठा बनी रहती है। मेरे प्यारे क्योंकि माता ने मुझे मेरा निर्माण किया है। मुझे आभा से ! !युक्त बनाया है। इसीलिए मैं सदैव उसको जानने के लिए तत्पर रहता हूँ। तो मेरे प्यारे देखो, ऋषि व्रतेन्तु मौन हो गए और उन्होंने कहा धन्य है भगवनदेखो !मेरे प्यारे !, भगवान राम का जीवन आठ वर्ष से याज्ञिक बना और तुम्हें स्मरण होगा जब वन में चले गए तो वहाँ भी याग चलता था। समिधाओं के द्वारा अग्नि प्रदीप्त हो रही है। परमाणुवाद से शुद्ध किया जा रहा है।

तो इसीलिए मुनिवरोंविचार क्या !? आज का हमारा वेदमन्त्र कह रहा था हे मानव तू ! याज्ञिक बन। तू कैसा याज्ञिक बन? तेरे श्वास की गति भी याग में परणित हो जाए। तेरी मानवीयता का स्वरूप द्वितीय रूप बन करके यज्ञ के रूपों में सुगन्धि बन करके रहे। तो मेरे प्यारेयह वाक् भगवान राम कहा कर !ते थे कि मानो गान गाना चाहिए और गान कैसा हो? आत्मा से प्रसन्न युक्त हो करके जो मानव प्रसन्न होता है और याज्ञिक होता है वह मेरे प्यारे आज का !से मिलान करता है। यह है बेटा !प्रभु ! वाक् आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए

आया हूँ क्या प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना चाहिए। भगवान कृष्णा, अर्जुन दोनों याग की कल्पना कर रहे हैं। विज्ञान के ऊर्ध्वा स्वरूप में जाना चाहते हैं याग के द्वारा। राम जाना चाहते हैं याग के द्वारा। मेरे प्यारेदेखो !, याग ही एक शब्द है जो मानव के हृदय को व्यापक बनाता है। यह है बेटा आज का वाक् कल मैं तुम्हें बारह कलाओं का ! वर्णन करूंगा जो भगवान राम ने यागों के द्वारा अथवा जिनको प्राप्त किया। आज का वाक् यह समाप्त होने जा रहा है। आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ केवल अपने विचार देने के लिए आया हूँ कि मानव को सदैव ऊर्ध्वा में जाने के लिए ऊर्ध्वा कर्म करने चाहिए। अपनी इन्द्रियों पर संयम करना चाहिए। जिससे मानव धर्म और मानवीयता को जान सके। यह है बेटा आज का वाक्। समय मिलेगा शेष ! चर्चाएँ कल प्रगट करेंगे। ओ३म् गा यनौ सा यम जना प्राची आभ्यां देवं तनु गायाः व्रन्नमः वाचन्न गृहिताः ओ३म् मया सर्वा ओ३म् धी पृप्राचीव वन्धनात् धनात तनु आप्यां लोकं गा ताहाम् ओ३म् ब्रह्मणाः देवं मयाः सर्वं रूद्राः अच्छा भगवन् आनन्द मंगलं ! श्री शिव कुमार : शान्ति निवास स्थान, धनोरा। दिनांक 1981। 09 28

९ 29 09 1981 पुष्प 40 ययज्ञान विज्ञान : गणेश लक्ष्मी पूजन

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर जब विचार विनिमय किया जाता है तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात होने लगता है जैसे एक एक वेदमन्त्र इस ब्रह्म की गाथा गा रहा है। प्रत्येक वेद मन्त्रों में उस ब्रह्म का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है। प्रत्येक वेदमन्त्र उसकी गाथा गाता ही रहता है। उसके गुणों का गुण वादन करता ही रहता है। जिस प्रकार माता का पुत्र माता का गुण वादन करता रहता है क्योंकि वह इसके गुणों की विवेचना प्रायः करता रहता है। इसी प्रकार आज का हमारा वेदमन्त्र हमें उस आभा की याचना कर रहा है। हमें उस मार्ग का प्रदर्शन करा रहा है जिस पथ पर चलने के पश्चात् मानव का जीवन अमृतमयी बन जाता है अथवा ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा में रमण करने लगता है। मुझे बेटा बहुत पुरातन !

काल जब स्मरण आने लगता है तो ज्ञान और विज्ञान की वार्त्ताएं स्मरण आने लगती हैं। क्योंकि ज्ञान मानव को महान् और पवित्र बनाता है। क्योंकिज्ञान नहीं है तो अज्ञानता में रमण करने वाला प्राणी तो पशु के तुल्य कहलाता है। वह चरिवर्द्धन कहलाता है।

परन्तु वेद का मन्त्र मानव को ज्ञान और विज्ञान में ले जाता है। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, दो प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है अथवा विज्ञान भी दो प्रकार का कहलाता है। एक भौतिक विज्ञान और दूसरा आध्यात्मिक विज्ञान। आध्यातिमक विज्ञानवेत्ता प्रभु से मिलन करता है। आध्यात्मिकवादी प्रभु की चेतना को जानता है। आध्यात्मिक विज्ञान जितना ही मानव के समीप होता है उतना ही मानव के जीवन में रात्रि नहीं होती। बेटा ज्ञान में रात्रि होती ही नहीं। विज्ञान ! में प्रकाश होता है। मानव का जीवन अमृत बन जाता है। मुझे महाराजा हनुमान की विवेचना स्मरण आने लगती है। उनका जीवन स्मरण आने लगता है। माता की लोरियों का पान कर रहा है। माता अपने प्यारे पुत्र को उपदेशदे रही है, लोरियां देती हुई हे बाल्यतू महान् बन !, हे बाल्य मुझे स्मरण है !तू ज्ञानी और वैज्ञानिक बन। मेरे प्यारे ! महाराजा हनुमान का जीवन कितना ज्ञान और विज्ञान में रमण करने वाला था। सूर्य की जितनी विद्याएं थीं वह सर्वत्र विद्याओं को निगलने वाला एकांकी हनुमान कहलाता था। मुझे स्मरण है एक समय महाराजा हनुमान और शिव पुत्र गणेश हिमालय कन्दराओं में एक स्थली पर विद्यमान थे। दोनों का विचार विनिमय चल रहा था, कि महाराज ! यह सूर्य क्या है? यह प्रकाश देता ही रहता है। तो वह अनुसन्धान शालाओं में विद्यमान हो करके यह विचारने लगे कि कितने लोकों को सूर्य प्रकाश देता है।

विचार विनिमय दोनों ने विचारा। मनन और चिन्तन करने से उन्हें यह प्रतीत हुआ वैज्ञानिक यन्त्रों से उन्हें यह प्रतीत हुआ कि मंगल और चन्द्रमा, बुद्ध और इससे सम्बन्धित जो लोक हैं उन सबको प्रकाश देने वाला सूर्य ही कहलाता है। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ। उन्होंने सूर्य विद्या पर अनुसन्धान किया। सूर्य क्या क्या करता है? इसी सूर्य विद्या को ले करके भगवान राम महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के चरणों में विद्यमान हो करके

कलाओं के ऊपर विचार विनिमय करने लगे।

मेरे प्यारेहमारे यहाँ सबसे ! प्रथम जो कला है उसका नाम प्राचीदिग् कहलाता है क्योंकि प्रातःकाल सूर्य से प्रकाश आता है और उसी प्रकाश को ले करके मानव अपने कार्यों में रत्त होने लगता है। प्रातःकाल में इस शान से सूर्य उदय क्यों होता है? यह विचार किया गया तो प्रतीत हुआ कि जब सृष्टि का सृजन हुआ था तो प्रभु ने तप ! किया। तीन प्रकार के तप कहलाते हैं। उन तपों की ज्योति कहलाती है अथवा उस तप का परिणाम कहलाता है। सबसे प्रथम द्यौ है इस द्यौ से सहायता ले करके चन्द्रमा प्रकाश देता है। द्वितीय रूपों में हमारे यहाँ वायु मानी गई है जो संसार को प्राण देता है।

तृतीय यह अग्नि कहलाती है लौकिक जो मानव को जन जीवन, समाज को प्रकाशमय अथवा ज्योति और तेजोमय बनाता है। तो मुनिवरों यह प्रभु का जो ते ज है यह सृष्टि ! के प्रारम्भ से उस प्यारे प्रभु का तेज हमें दृष्टिपात आता है। विचार विनिमय करने से प्रतीत होता है वह जो द्यौ मण्डल है उसमें मानव के चित्रों का दिग्दर्शन होता हुआ चित्र शब्दों के साथ में रमण करता हुआ द्यौ लोक में चला जाता है। जो महान् शब्द है, जो विचित्र शब्द है जो दर्शनों से गुथा हुआ सत्यता से गुथा हुआ शब्द है वह गति करता हुआ द्यौ लोक को प्राप्त हो जाता है। उसका चित्रण नहीं हो सकता। बेटा कोई ! यन्त्र का निर्माण नहीं किया गया जो उसको चित्रित करने वाला हो। इसी प्रकार वह द्यौ लोक में रमण करता है। !मुनिवरों

मुझे स्मरण है, वेद के ऋषियों ने ऐसा कहा है कि यज्ञमान जब यज्ञ करता है, अपनी पत्नि से कहता है, हे देवीमैं या !ग कर रहा हूँ। तुम जैसे पृथ्वी बन करके नाना प्रकार की वनस्पतियों को उत्पन्न करती है इसी प्रकार यज्ञशाला में विद्यमान हो करके तुम वन्दनामयी कहलाती हो। देखो, याग दोनों प्रारम्भ कर देते हैं। मेरे पुत्रो यज्ञमान ! कहलाता है कि मैं स्वाहा कह रहा हूँ। हमारा रथ बनत ा है और रथ बन करके द्यौ लोक में रमण करता है क्योंकि शब्दों के साथ में जो शुद्ध, पवित्र शब्द है जिसे हम

स्वाहा कहते हैं वह स्वाहा कहते ही चित्र बन करके द्यौ लोक को प्राप्त हो जाता है।
आज मैं तुम्हें विशेष विज्ञान की चर्चाओं में नहीं ले जा रहा हूँ। विचार विनिमय क्या? हम यह उच्चारण कर रहे थे कि प्रभु ने तप में ही तीन प्रकार के तेजोमयी इस संसार को रचा है, तो छै कलाओं को ले करके भगवान राम अपनी विज्ञानशाला में अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके अनुसन्धान करते रहे हैं। मुझे स्मरण आता रहता है प्राचीदिग् और दक्षिणीदि् कहलाती है वही प्रतीचि है और वही उदीचि कहलाती है। यह चार कलाएं मानव के समीप रहती हैं। इन कलाओं के ऊपर अनुसन्धान प्राचीदिग् सूर्य उदय होता है, दक्षिणिदिग् विद्युत की तरंगें चलती हैं और मुनिवरों प्रतीचिदिग् अन्न ! का भण्डार रहता है। और उदीचिदिग् जहाँ ज्ञान की ज्योति जागृत रहती है। ध्रुवा में मेरे पुत्रो ध्रुवा गति और ऊर्ध्वा गति दो प्रकार की आभा कहलाती है और यह छै ! कलाएं कहलायी गई हैं। इनके ऊपर ऋषियों ने बहुत अनुसन्धान किया अथवा विचार विनिमय किया।
मेरे प्यारेभगवान गणेश जी अपने आँगन में विद्यमान हो करके ह !नुमान के समीप विद्यमान हो करके अनुसन्धान करते रहे। वह सूर्य विद्या पर अपना निरीक्षण करते रहे। मुझे स्मरण आता रहता है महाराज हनुमान ने दो हजार पृष्ठों की एक पोथी का निर्माण किया था जो सूर्य विद्या पर उन्होंने लेखनियां बद्ध कीं। उन लेखनियों में क्या था? कि सूर्य कितना विज्ञानमयी कहलाता है? उन्होंने बेटा यन्त्रों का निर्माण भी किया और ! वह यन्त्र के से? जो सूर्य की ज्योति को ले करके रात्रि काल में उनको जानना और उन्हीं में रत्त रहना। यह जो पृथ्वी है, इस पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार का खनिज और खाद्य विद्यमान है, वह सूर्योमयी कहलाया गया है। तो विचार करने से प्रतीत हुआ कि यह सूर्य ऐसा अनुपम देव है जो प्रातःकाल से सायंकाल तक प्रकाश देता रहता है उसी प्रकाश से प्रत्येक मानव प्रकाशित रहता है। वही प्रकाश तेजोमयी द्यौ कहलाता है।
आओ बेटामैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट क !रने नहीं आया हूँ। आज मैं तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ कि आज हम अपने जीवन को प्रकाशित करने वाले बनें। हमारा जीवन प्रकाशमय हो क्योंकि आत्मा का जो प्रकाश है वह मानव के समीप रहता है।

एक समय बेटागार्गेपथ्य ने ब्रह्मचारी कवन्धि से यह कहा था कि हमारा जो ! अन्तरात्मा है, अनुपम ज्योति है, सूर्य का प्रकाश है वह कोई प्रकाश नहीं है जो आत्मा का प्रकाश सदैव अपने में अनुभव करता रहता है। अन्धकार छाया हुआ है, कोई प्रकाश नहीं है परन्तु आत्मा के प्रकाश से मानव प्रकाशित होता रहता है। इसी प्रकार सूर्य की यह जो कलाएं हैं इन कलाओं के ऊपर जो भौतिकवाद विज्ञान की तरंगें उत्पन्न होती हैं उन्हीं को सदैव मानव जानता रहता है।

मेरे प्यारे आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषियों का ! विचार विनिमय होता रहा है। एक समय महाराजा हनुमान और गणेश जी भ्रमण करते हुएस्वेनात ऋषि के द्वार पर पहुंचे। महाराजा स्वेनात ऋषि अपनी स्थली पर विद्यमान थे। विद्यमान होने के पश्चात् वह अप्रातम् ब्रह्मणः लोकः वह सूर्य के ऊपर अनुसन्धान कर रहे थे। वह सूर्य का प्रकाश आत्मा के प्रकाश से समन्वय कर रहे थे। यह निर्णित किया ऋषि ने कि सूर्य का प्रकाश उस द्यौ के प्रकाश से भी ऊर्ध्वागति वाला प्रकाश है इसको जान करके मानव अनुपमता को प्राप्त हो जाता है। जब मानव अपने प्रकाश में, इस आत्मा के प्रकाश में, भौतिक प्रकाश को अपने में समन्वय करता है तो मानव जीवन में एक अनुपम प्रकाश आ जाता है। वही प्रकाश माता बाल्यकाल में अपने पुत्र को परणित कर देती है।

मुझे स्मरण है मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया। एक समय माता कौशल्या व भगवान राम ने वशिष्ठ मुनि महाराज के आश्रम में श्वेत के तु महाराज के दर्शन किए। उन्होंने राम को पाते ही कहा महाराजराम की बुद्धि इतनी त !ीव्र क्यों है? इसका मूल कारण क्या है? क्योंकि राष्ट्रीयता में इतनी तीव्रता प्राप्त नहीं होती। मेरे प्यारे राम बोले ! कि यह मेरी माता की देन है। मेरी माता ने प्रकाश दिया है। माता क्या प्रकाश देती थी? विचारने से भगवान राम ने यह निर्णित किया कि यह प्रकाश क्या है? माता का दिया हुआ है। माता के गर्भ में जब राम विद्यमान थे तो माता एक महान प्रकाश देती थी और वह प्रकाश क्या था? स्वयं परिश्रम करके अन्न को प्राप्त करती रही और उस अन्न को प्राप्त करके वह उस अन्न को पान करती थी जिससे माता में गर्भस्थल में जो

बालक था उसका निर्माण हो रहा था। क्योंकि मन की जो उत्पत्ति है, मन का जो निर्माण होता है अन्न से ही होता है। अन्नादम् भूतम् ब्रह्मणे लोकः क्योंकि प्रभु ने सृष्टि के प्रारम्भ में देव ने सात प्रकार के अन्नों को उत्पन्न किया उनका परिणाम यह हुआ कि सात प्रकार के अन्नों से ही यह सर्व संसार के प्राणी आच्छादित रहते हैं। मुनिवरों ! अन्नाद से ही प्रत्येक प्राणी के मन की आभा जन्म लेती रहती है इसी प्रकार जो मन की उत्पत्ति मानी गई है वह अन्न से मानी गई है। इसलिए हमारे यहाँ अन्न को विशेष पवित्र माना गया है। माता कौशल्या अपने बालक के मन का निर्माण कर रही है। और के से कर रही है? कला कौशल कर रही है। उसके बदले जो अन्न आ रहा है उसे पान कर रही है।

बालक का निर्माण हो रहा है, बालक पनप रहा है। मेरे प्यारेदेखो !, माता के गर्भस्थल में बालक का निर्माण हो जाता है। वह माता का गर्भाशय विश्वविद्यालय कहलाता है। विश्वविद्यालय में ब्रह्मचारी जो अध्ययन कर लेता है वह अध्ययन की शैली संसार के प्राणियों से प्राप्त नहीं होती। हे मां, तू के सी पवित्र है? तू विश्वविद्यालय बन करके मानव को ऊर्ध्वगति दे देती है और तपोमय बनाती रहती है। मेरे प्यारे भगवान राम ! ने यह कहाकि यह माता की मेरी देन है। जब संसार में माता के गर्भ से पृथक हुए तो माता लोरियों का पान करा रही है। त्याग और तपस्या का उपदेश दे रही है, हे बालकतुझे महान् बनना है !, हे बालक, तुझे राष्ट्र का नायक बनना है और उसमें भी तुझे ब्रह्मवेत्ता बनना है ब्रह्मवेत्ता बन करके यहाँ ऋषि मुनि तेरे से शिक्षा लेने वाले बनें। माता की उपदेश मंजरी चल रही है। इसी उपदेश के द्वारा ब्रह्मचारी माता की लोरियों में पनप रहा है। अपने जीवन को प्राप्त कर रहा है। माता कौशल्या यही चाहती है कि मैं स्वयं परिश्रम करती हुई श्रम के उस बालक को अन्नाद प्राप्त करूं जिससे मेरा गर्भाशय पवित्र हो जाए। मेरे प्यारेमाता कितना प्रिय याग कर रही है !? हे माता तेरा यह याग सफल उस काल में हो जाता है जब बाल्य ब्रह्म का उपदेश देता है। ब्रह्म की आभा में रमण करता है। रमण करता हुआ अपने जीवन को महान् बनाता रहता है।

मेरे प्यारे भगवान राम ने ऋषि से यह कहा कि यह माता की देन है। आज वह माता !

जो ब्रह्म को जानने वाली, ब्रह्मनिष्ठ कहलाने वाली, जो षोऽश कलाओं का ज्ञान मुझे माता ने गर्भाशय में परिणित कर दिया था। वह षोऽश कलाएं, सबसे प्रथम यह छह कलाएं हैं, इसके पश्चात् चार कलाएं एक मन कला, चक्षु कला, श्रोत्र कला, घ्राण कला, और वाणी अत्रिय स्तन कला यह भी कला कहलाती है। इसके पश्चात् हमारे यहाँ एक अग्नि कला कहलाती है। एक ऊर्ध्वा में द्यौ कला कहलाती है। अन्तरिक्ष कला है और समुद्र कला यह बारह कलाएं हमारे यहाँ विशेष कला कहलाती हैं। इनका माता ने अपने बालक को ऊर्ध्वा में पहुंचाने के लिए वर्णन किया। विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारे यह कलाएं हैं जिनमें जाने के पश्चात् मानव प्रभु से मिलान करता है। प्रभु से ! उसका मिलन होता है। आत्मा उसका महान् बन जाता है।

तो मेरे पुत्रोआज का वाक् क्या कह रहा है !? मैं आज तुम्हें महाराजा हनुमान और गणेश जी की चर्चाएं प्रकट कर रहा था। महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनों जब ऋषि के द्वार पर पहुंचे तो ऋषि से उन्होंने यही कहा कि महाराज हम वैज्ञानिक बनना ! चाहते हैं, हम सूर्य विद्या के ऊपर अपना अनुसन्धान करना चाहते हैं। तो महाराजा गणेश जी ने, हनुमान जी ने पादुका नामक एक यन्त्र का निर्माण किया था। उस पादुका यन्त्र में यह विशेषता थी कि प्राण शक्ति का उनमें उन्होंने सृजन किया। जिस पादुका पर विद्यमान हो करके इस पृथ्वी से उड़ान उड़ने लगे और पृथ्वी से उड़ान उड़ते हुए वह मंगल में पहुंच गए। मंगल से उड़ान उड़ी तो बृहस्पति में पहुंच गए और जब पुनः मंगल में आए तो मंगल के वैज्ञानिकों ने उनके यन्त्र को कटिबद्ध करना चाहा। उस समय स्वेत्ताम् वृहीणिम नाम के मंगल मण्डल में एक वैज्ञानिक रहते थे। जब उन्होंने उस यन्त्र को अपने राष्ट्र में, मंगल में रहने के लिए प्रतीति की और अपने यन्त्रों का एक रूपान्तर उसके ऊपर आक्रमण किया तो मुनिवरों हनुमान और गणेश जी दोनों उस ! यन्त्र को ले करके अन्तर्ध्यान हो गए और यन्त्र को ले करके वह पृथ्वी मण्डल पर आ गए।

परिणाम क्या मुनिवरों मुझे एक समय मेरे पुत्र महानन्द जी ने स्मरण !कराया है कि आधुनिक काल में भी ऐसे वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण हो गया है जो यन्त्र इस पृथ्वी

मण्डल पर आते हैं, समुद्र के तटों पर वह यन्त्र प्राप्त होते रहते हैं। परन्तु मैं आज आधुनिक काल के विज्ञान को तो इतना परिश्रमी नहीं जान पाता परन्तु वह यन्त्र जब पृथ्वी पर आ गया। एक समय बेटा दोनों वैज्ञानिक अपनी आभा में रमण कर रहे थे ! उस समय माता पार्वती और शिव दोनों कहीं से भ्रमण करते हुए उनके द्वार पर आ गए, उनकी विज्ञानशाला में आ गए। उन्होंने कहा, हे बाल्यतुम क्या कर रहे हो !? उन्होंने कहा, हे मातेश्वरी, हे पितरजन !हम यन्त्रों का निर्माण कर रहे हैं। आज हमने एक ऐसा यन्त्र निर्माणित करना है जिन यन्त्रों में मानव के जीवनको वायुमण्डल से सहायता प्राप्त होती रहे और उस मानव को शत्रु विजय न कर सके। मेरे प्यारे ! ! उन्होंने ऐसे यन्त्र का भी निर्माण किया जिस यन्त्र में मानव कोसहायता प्राप्त होती थी। संग्राम कर रहा है परन्तु यन्त्र सहायता दे रहा है, दूसरा मानव शत्रु से विजय नहीं हो रहा है तो इस प्रकार के यन्त्रों का भी उन्होंने प्रायः निर्माण किया। परन्तु एक यन्त्र ऐसा निर्माण किया उन्होंने, जिस यन्त्र में विद्यमान हो करके समुद्र के निचले स्थल को माप करके वह तट पर आ जाते थे।

मैं इस विज्ञान में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय क्या? उन्होंने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया, पार्वती और शिव की सहायता से कि यन्त्र को धीमे धीमे अन्तरिक्ष में ले गए और जहाँ इस पृथ्वी की आकर्षण शक्ति समाप्त होती है और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति का मिलान होता है, उस यन्त्र को वहाँ स्थिर कर दिया और उस यन्त्र में विद्यमान हो करके बहत्तर मण्डलों का भ्रमण किया करते थे। आज मैं क्या वर्णन कर सकता हूँ उन महापुरुषों का जिन्होंने अपने जीवन के ऊपर बहुत अनुसन्धान किया और वैज्ञानिक तथ्यों को जानने का उन्होंने प्रयास किया। मेरे प्यारे मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन ! करते हुए कहा है क्योंकि हनुमान जी की मृत्यु नहीं होती थी। हनुमान जी के शरीर की आभा इतनी विचित्र बनी रहती थी और महाराजा गणेश जी मैंने बहुत पुरातनकाल में यह वर्णन किया कि महाराजा गणेश जी ने एक चुंगेत नाम के यन्त्र का निर्माण ! किया था और चुंगेत नाम का जो यन्त्र था उसमें वह विद्यमान हो करके इस पृथ्वी की परिक्रमा करता हुआ, मंगल की परिक्रमा करता हुआ सूर्य की किरणों के साथ सूर्य में

प्रवेश कर जाता था।

बेटा तो विचार करने से यह प्रतीत होता है हमारे यहाँ हमारी वैदिक सम्पदा में वैदिक ! उसमें !विज्ञानशाला में नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण होता रहा है और मुनिवरों ज्ञान और विज्ञान प्रायः ओत प्रोत रहता है। एक समय दोनों वैज्ञानिक सम्भानु ऋषि महाराज के द्वारपर पहुंचे। सम्भानु ऋषि महाराज ने कहा, आओ महावृत्तिः। दोनों आश्रम में विद्यमान हो गए। ऋषि ने कहा, मैंने श्रवण किया है कि तुमने यन्त्रों का निर्माण किया है। तुम यह क्या कर रहे हो? इससे संसार का विनाश होता है। उन्होंने कहा, विज्ञान से विनाश नहीं होता। विज्ञान तो मानव की सम्पदा है। ऋषि ने कहा, अस्त्रों शस्त्रों से तुम विनाश को प्राप्त हो जाओगे। उन्होंने कहा, हम विज्ञान को नष्ट नहीं होने देंगे, न इससे हमारा विनाश होगा। हम प्रातःकाल याग करते हैं और याग के द्वारा, गो घृत के द्वारा हम गो वर्धन याग करते हैं, उससे वायुमण्डल पवित्र बनता है।

तो मेरे प्यारेविचार विनिमय क्या !? हमारे ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में यागों का चलन परम्परागतों से रहा है। वैदिक साहित्य में हमारे यहाँ यज्ञ की प्रतिभा का वर्णन आता है। क्योंकि हमारे यहाँ ऋषिजन योग साधना के लिए यौगिकता को पवित्र बना देते हैं वह याग कहलाता है। माता अपने पुत्र को जन्म दे रही है, वह याग कर रही है। राजा राष्ट्र का निर्माण कर रहा है तो याग कर रहा है। वैज्ञानिक जब विज्ञानशाला में विद्यमान होते हैं तो सबसे प्रथम वह यज्ञशाला का निर्माण करते हैं। महर्षि भारद्वाज के यहाँ बेटाचौबीस प्रकार की यज्ञशाला थीं !, महाराजा गणेश जी के यहाँ चौबीस प्रकार की यज्ञशाला थीं। महाराजा शिव के यहाँ जिन्होंने रुद्रष्टि याग का निर्माण किया। रुद्र क्या है? रुद्र हमारे यहाँ उसे कहते हैं जो रुला न सके। मेरे प्यारे शिव को रुद्र रूपों में ! परणित किया है। वह रुद्रेष्टि याग करते थे। एक सौ ग्यारह यज्ञशालाओं का निर्माण महाराजा शिव के यहाँ होता रहा है। यहाँ संसार को दृष्टिपात करने के पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक मानव इस संसार में याज्ञिक बना हुआ है। माता के द्वार पर जाता हूँ तो माता याग कर रही है। राजा के द्वार पर जाता हूँ तो राजा याग कर रहा है। जो राजा याग नहीं करता है उस राजा के राष्ट्र की सम्पदा समाप्त हो जाती है।

जिस राजा के यहाँ ब्रह्मवेत्ता पुरुष नहीं होते, राजा के राष्ट्र में याज्ञिक पुरुष नहीं होते अग्निष्टो3म् याग के वेत्ता नहीं होते उस राजा का राष्ट्र अन्धकार में चला जाता है।

मेरे प्यारेविचारने से प्रतीत यही होता है !, भगवान् राम अपने यहाँ उपदेश यही देते थे तुम्हारे यहाँ याग होना चाहिए। याग की प्रतिभा मानव के मस्तिष्कों में होनी चाहिए। यह क्रिया देवपूजा कहलाती है और इसी देवपूजा से ही याज्ञिक यज्ञमयी बनता है, वैज्ञानिक विज्ञानवेत्ता बनता है। मुनिवरों मेरी प्यारी माता विदुषी बन जाती है। ! ब्रह्मचारी विद्यालय में ब्रह्मचारी बन रहा है। उसका निर्माण हो रहा है याग के द्वारा। यह संसार एक यज्ञमयी माना गया है। आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रक !मुनिवरोंट नहीं करूंगा। आज मैं विचार यह देने के लिए आया हूँ, यहाँ प्रत्येक मानव, प्रत्येक श्वास के द्वारा याग करता है। मानव की शरीर रूपी जो यज्ञशाला है ऋषियों ने इसकी बहुत ऊची कल्पना की है। इसके ऊपर बहुत ऊर्ध्वा से विचारा है।

मुनिवरों मैं महाराजा हनुमान और गणेश !की चर्चा कर रहा था। गणेश का, लक्ष्मी का, दोनों का समन्वय रहता हैं जहाँ गणेश रहते हैं वहाँ लक्ष्मी रहती है। गणेश जी का अभिप्राय जहाँ महाराजा शिव के पुत्र का नाम गणेश था, वहाँ गणपति मेरे प्यारे जो ! गुणों का स्वामी है, गुणों का स्वामी कौन है? हमारे यहाँ गण नाम प्राण को कहा गया है और जो प्राणों का स्वामी है मानो प्राणेश्वर है, वह गणपति कहलाता है और जहाँ गणपति रहता है मानव के शरीरों में वहाँ लक्ष्मी श्री वास करती है। श्री हमारे यहाँ सरस्वती को कहते हैं, ज्ञान को कहते हैं, विज्ञान को कहते हैं। मेरे प्यारे भिन्न ! भिन्न का प्रकार के इसके स्वरूप माने गए हैं और जिन गृहों में लक्ष्मी का पूजन होता है वह गृह पवित्र बनते हैं। यह चर्चाएं तो बेटा हम पुनः प्रकट करेंगे। !

आज का वाक् हमारा क्या कह रहा है? कि हम इस संसार में महान् बनने के लिए, ऊर्ध्वागति बनने के लिए हम बेटाआप !ने जीवन को महान् बनाना है। विज्ञान में रमण करना है और आध्यात्मिक विज्ञान में प्रवेश करना है जिससे हम प्रभु के राष्ट्र में जा करके प्रकाश को प्राप्त करते रहें और प्रभु के द्वार पर जाने से बेटा रात्रि और अन्धकार ! नहीं रहता। जैसे माता का पुत्र है, माता की लोरियों का जब पान करता है तो संसार

के पदार्थ उसके लिए तुच्छ बन जाते हैं इसी प्रकार जो प्रभु के राष्ट्र में चला जाता है उसे इस संसार का वैभव अमान्य हो जाता है। यह है बेटा आज का वाक्। मुझे ! समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं तो कल प्रकट करूंगा। आज का विचार क्या? आज मैं बेटा तुम्हें यह प्रकट करा रहा था कि विज्ञान कितना ऊर्ध्वागति में मानव के मस्तिष्कों ! में रमण करता रहा है, विज्ञान और ज्ञान मेरे पुत्रो मानव की एक विशेष सम्पदा बन ! करके रहती है और वही सम्पदा इस संसार को ऊर्ध्वा में ले जाती है। राष्ट्र और समाज इसी से निर्माणित होते हैं, गृह इन्हीं से पवित्र बनते हैं। यह है बेटा आज का ! वाक्। मुझे समय मिलेगा, मैं शेष चर्चाएं तुम्हें कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। ग्रामः धनोरा

१० 30 09 1981 पुष्प 42 ययज्ञमय जीवन से तप त्याग द्वारा आत्मबल बढ़ता है

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। हमारे यहाँ आचार्यों ने उस प्रभु के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न प्रकार की उड़ान उड़ी है, भिन्न भिन्न प्रकार का विचार विनिमय होता रहा है। आज का हमारा वेदमन्त्र यह कहा रहा है कि वह जो मेरा देव यज्ञोमयी कहलाता है जिसका यज्ञामेयी शरीर माना गया है, वह मेरा देव कैसा पवित्र है जिसकी महिमा अनुपम मानी गई है। आज का हमारा वेदमन्त्र भिन्न भिन्न प्रकार की प्रेरणा दे रहा है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी भिन्न भिन्न प्रकार की हमें प्रेरणा देते रहते हैं। आ !ज उनकी प्रेरणा है कि याग के सम्बन्ध में कुछ अपना उद्गार प्रकट किया जाए। आज का हमारा वेदमन्त्र भी कुछ याग के सम्बन्ध में अपनी विवेचना करता चला जा रहा था और उच्चारण कर रहा था, हे यज्ञ तू कैसा रथ है जिस पर होताजन विद्यमान हो करके वह रथ द्यौ ! लोक में ले जा रहा है। हे अग्नेय तू !तू यज्ञों का प्रतिनिधि माना गया हैं अग्नेय !

यज्ञोमयी रमण करने वाला है द्यौ लोकों में इस यज्ञमान के रथ को ले जा रहा है और शब्दम् ब्रह्मणा वह रथ में विद्यमान हो करके उसकी द्यौ लोकों में स्थिति हो जाती रथ है !है। वह कैसा महान? जिसके ऊपर विद्यमान हो करके द्यौ लोक को जा रहा है।

मैंने कई काल में तुम्हें भिन्न भिन्न प्रकार की विवेचनाएं दी हैं। आज मैं तुम्हें एक ऋषि के द्वारा पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ एक एक वेदमन्त्र मानव को रथी बना रहा है और मानव को जीवन की आभा दे रहा हैं एक समय महर्षि सोमकृतिभानु अपने आसन पर विद्यमान थे क्योंकि वह उद्दालक गोत्रीय ऋषि थे और उन्हें एक वेदमन्त्र स्मरण आ रहा था और वह वेदमन्त्र यह कह रहा था वेद की एक आख्यिका यह कह रही थी कि यज्ञमान रथ में विद्यमान हो करके द्यौ लोक को जा रहा है। ऋषि इस वेदमन्त्र को विचारने लगा कि यह रथ कैसे बन सकता है? आज मैं इस रथ को कैसे जानूं? वह विचार विनिमय करते रहे अथवा वह उसमें रत्त रहे और विचारते रहे और वह यह अनुसन्धान करते रहे कि मैं इसके कैसे जानूं। उन्होंने अपने आसन को त्यागा। उद्दालक गोत्रीय ऋषि के एक भ्रात थे। उनका नाम था सोम ऋषि महाराज और वह सोम ऋषि आश्रम को दोनों पति पत्नी तृतीय स्वानम ऋषि महाराज वह भ्रमण करते हुए भयंकर वनों में पहुंचे और भयंकर वनों में वह तप कर रहे थे अथवा वह याग कर रहे थे। जब ऋषि महाराज याग कर रहे थे उनकी पत्नी सोम ऋषिवनित कहलाती थी। पति पत्नी याग करते करते उन्होंने कुछ विज्ञान की आभाओं में जाने के पश्चात् एक यन्त्र का निर्माण करने लगे। उस यन्त्र का समन्वय इस अन्तरिक्ष से लग गया। यह वायु अग्नि की तरंगों को ले करके अन्तरिक्ष में प्रवेश करती है और अन्तरिक्ष में जिसकी स्थिति हो जाती हैं अन्तरिक्ष में वह शब्द हैं, वह चित्र हैं। उन चित्रों का शब्दों के सहित ऋषि पत्नी और ऋषि अपनी यज्ञशाला में स्वाहा कृतियों में रमण करने वाली जो तरंगें थीं उन तरंगों को वह अपनी यज्ञशाला में यन्त्रों में तरंगित कर रहे थे और उनमें नाना प्रकार के चित्र आ रहे थे। जो अन्तरिक्ष में मरण करने वाले अनेक पूर्वज थे अथवा पिता, महापिता थे जो इस संसार में शरीर रूपों में नहीं थे उनके चित्र यन्त्रों में दृष्टिपात

आने लगे। वह कैसा विज्ञान मानव के समीप यज्ञोमयी रहा है? मुनिवरों यज्ञमान का ! रथ बन करके द्यौ लोक को प्रवेश कर रहा है।

आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी ! भी भी शब्दों की कुछ विवेचना कर पाएंगे। परन्तु आज का विचार हमारा क्या? कि हम सदैव अपने में अपने को दृष्टिपात करते रहें। आध्यात्मिकवाद में, भौतिक विज्ञान अथवा भौतिक यज्ञ में अपने जीवन को समन्वय करते रहें जिस जीवन का समन्वय करने से हमारे जीवन की धाराएं विचित्रतम बनती हुई अन्तरिक्ष में रमण करती रहती हैं। मुनिवरों कर्म है हमारे यहाँ हमने इससे पूर्व काल !यह जो यज्ञ है यह ऐसा महान ! में तुम्हें यह प्रकट कराया कि हमारे यहाँ विष्णु एक याग कहलाता है। विष्णु कहते हैं पालनकरने वाले को। वह जो पालन करने वाला है वह विष्णु है। वह याज्ञिक कहलाता हैं हमारे यहाँ एक अग्निष्टोम याग होता है। अग्निष्टोम का अभिप्राय अग्नि कहते हैं जो प्रतिष्ठित रहती है और जो एक दूसरे को अपने में धारण करता है वह उसकी प्रतिष्ठा कर रहा है। विचार विनिमय क्या? वह ऋषि अमृताम् अभ्रिणी वृताम् वह जो अग्निमयी है वह नाना प्रकार की तरंगों को ले करके वायु मण्डल में देवताओं को प्रसारित कर देती है। मुनिवरों हम यज्ञोमयी अपने जीवन को बनाते रहें। यज्ञ हमारा ! कर्म करना है। यज्ञ ही हमारा एक कर्म है जिससे मानव का जीवन महान् और पवित्र बनता हैं अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्दों की विवेचना करेंगे। !

पूज्य महानन्द जीः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आज मेरे पूज्यपाद !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! गुरुदेव एक अमृतमयी वाणी उच्चारण कर रहे थे जिससे मुझे यह प्रतीत हो रहा है कि इनकी अमृतमयी वाणी के उद्‍्गार जो हृदय से उत्पन्न होते हैं, वह उद्गार सब अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो जाते हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव विज्ञान की चर्चा करते हैं। आध्यात्मिकवाद की चर्चा प्रकट कर रहे हैं परन्तु आज मैं कोई विशेष पूज्यपाद को वाक्य प्रकट करने नहीं आया हूँ। केवल यह कि जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है वहाँ एक याग पूर्णत्व को, सम्पन्नता को प्राप्त हुआ हैं मेरा अन्तरात्मा प्रसन्न हो रहा था। हे यज्ञमान ! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। हमारे यहाँ उद्गार देने से ही जीवन की आभा

तेरे जीवन में प्रकाश रहना !बनती रहती है। हे यज्ञमान चाहिए। हे यज्ञमान तेरे द्रव्य ! का सदैव सदुपयोग होना चाहिए। क्योंकि जब द्रव्य का सदुपयोग गृह में हो जाता है तो उस यज्ञमान की आयु दीर्घ बना करती है। मेरी यह सदैव कामना है, हे यज्ञमान ! तेरी आयु दीर्घ होनी चाहिए क्योंकि तेरे तीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। यहमेरी सदैव कामना है और वह कामना क्या? कि यज्ञम् ब्रह्मणों यह जो द्रव्य है, जो श्री लक्ष्मी है इसका सदैव सदुपयोग होना चाहिए। जिन गृहों में द्र्व्य का सदुपयोग होता है वह गृह महान् और पवित्र बनते हैं। वह गृह पति, गृह लक्ष्मी बन करके मानव के जीवन को महान् और प्रतिष्ठित बना देती हैं मैं यह वाक्य इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ, हे यज्ञमान मेरे जीवन में नाना प्रकार के यागों का चयन होता रहा है। पूज्यपाद गुरुदेव ! का तो वह काल था जिस समय कजली वनों से लाया जाता था। परन्तु वह समय नहीं रहा। मानव का समय परिवर्तित होता रहता है। समय की परिवर्तिता मानव के जीवन का परिवर्तन कर देती है और मानव की दशा द्वितीय बन जाती है। मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चाएं कोई उच्चारण नहीं कर रहा हूँ।

मुझे स्मरण आता रहता है जब मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय महाराजा अश्वपति के यहाँ एक याग कराया। वह याग क्या था? वह वृष्टि याग था। जब यह चर्चाएं हुई कि वृष्टि नहीं हो रही है, अकाल हो गया है। पृथ्वी विष उगल रही है और सूर्य अपने तेज से इस पृथ्वी में अन्नाद को दग्ध कर रहा है और पृथ्वी के विष को पान करने वाला सूर्य अपने को अपने में धारण कर रहा है उस समय ऋषि मुनियों का एक समूह एकत्रित हुआ और उस समूह में यह चर्चाएं हुईं कि कजली वनों से ऋषि मुनियों को लाया जाए और अमृत की वृष्टि करानी चाहिए। उस समय ऋषि मुनियों ने यही कहा कि महर्षि शृङ्गीजी को लाया जाए और उनके द्वारा याग होना चाहिए। मेरे पूज्यपाद का वह जीवन कितना महत्वदायक था? एक सौ अड़सठ वर्ष का उस समय अग्रीत चल रहा था। तपस्या में तल्लीन, अध्ययन, संसार की आभाओं का ज्ञान नहीं होता था। उस समय राजा ने ऋषि मुनियों से प्रार्थना की कि तपस्वी को तपस्वी को कजली वनों से लाया गया और लाने के पश्चात् याग का आयोजन किया गया और यह याग हुआ।

उस याग में ज्ञानी और वैज्ञानिक सब विद्यमान हुए और विद्यमान हो करके अश्वपति के यहाँ याग हुआ।
आज मैं वर्तमान की चर्चा कर रहा हूँ। यह जो समय चल रहा है यह समय ऐसा विचित्र बन गया है कि याग को पाखण्डता में शब्दों का प्रतिपादन भी करते रहते हैं। मुझे विचार आता रहता है राष्ट्र में जो कर्म की हीनता आ गई है, यागों की हीनता आ गई है, अश्वमेध याग होते थे। अश्वमेध यागों में अश्व को त्यागा जाता। जो राजा अश्व को अपने में धारण करता था, राजा उसको विजय करता था। ज्ञान के द्वारा विजय करो, चाहे अस्त्रों शस्त्रों के द्वारा विजय करो परन्तु विजय करने के पश्चात् स्वर्ण में मढ़ा हुआ वह जो अश्व है उसको, राजा को अर्पित करने के पश्चात् वह याग करना अश्वमेध याग कहलाता था। मुझे स्मरण है मध्यकाल कुछ ऐसा आया। महाभारत काल के पश्चात् कि यहाँ वाम मार्गी बुद्धिमान कहने लगे और उन्होंने अश्वमेध याग के रूप का रूपांतर कर दिया और रूपांतर क्या किया कि अश्व के मांस की आहुति यागों में परणित करने लगे। जब ऐसा होने लगा ते मैं यह कहा करता हूँ पूज्यपाद गुरुदेव से, हे भगवन् ! जब अवश्वमेघ का अर्थ यह नहीं है और मुक्ति का याग एक साधन है, देवपुरी में जाने का सध्य है तो ऐसा क्यों? कि अश्व के मांस की आहुति देना। इसका अभिप्राय यह कि यह अज्ञान हैं यह ऊर्ध्वा मार्ग नहीं है यह ध्रुवा में ले जाने वाला है। यह सूक्ष्मता बुद्धिमानों की अज्ञानता हो जाती है। यह जब अज्ञान आ जाता है तो ध्रुवा कर्म होने प्रारम्भ हो जाते हैं।
मैं आज पूज्यपाद गुरुदेव को यह वाक्य उच्चारण करने आया हूँ कि यहाँ यागों का चयन भिन्न भिन्न प्रकार का हो गया। मं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा करता हूँ कि पुनः से यागों का चयन द्वितीय रूपों में परणित हो गया। आज मैं यह वाक्य इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ पूज्यपाद गुरुदेव को कि आज यहाँ एक याग हुआ। मेरा अन्तरात्मा प्रसन्न हो गया। कल के दिवस में मैं राष्ट्रीयता में वैज्ञानिकों के मध्य समें चला गया। जहाँ हमारा याग हुआ इसके उत्तर में दिशा कोण में एक राष्ट्र है। जब मैंने उस राष्ट्र में प्रवेश किया तो वैज्ञानिकजन इस चिन्ता में चिन्तित हो रहे थे कि यह जो संसार है आधुनिक

काल के वैज्ञानिक पूज्यपादयह उच्चारण कर रहे हैं कि यह समय चलता रहा !, जो समय चल रहा है यह ऐसा समय है कुछ काल के पश्चात् वायुमण्डल इतना दूषित हो जाएगा कि श्वास लेते ही प्राणी नष्ट हो जाएगा। आज का वैज्ञानिक यह कह रहा है। उनके मध्य में यह चर्चाएं हो रही हैं, वैज्ञानिक इमसें लगा हुआ है अब हम क्या करें? वैज्ञानिकों ने कहा है ऐसा एक गो घृत है जिसको अग्नि में प्रवेश करने से अग्नि में स्वाहा करने से वायु मण्डल शुद्ध हो सकता है तो विचार आया कि यज्ञोमयी जो कर्म है यज्ञ से जो सुगन्धि उत्पन्न होती है वह वायु मण्डल में प्रवेश करती है। जो घृत अग्नि में प्रवेश करते हैं। वह वायुमण्डल का शोधन कर रहा है।

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है वह जहाँ इस तथ्यों में लगा हुआ है वहाँ मानव को त्रास भी दे रहा है। नाना प्रकार का त्रास देता हुआ यहाँ जो शिक्षित समाज है वह इतना अकर्मठ बनता चला जा रहा है उसमें विज्ञान की इतनी त्रासता आ चुकी है, उसके द्रव्य में इतनी हीनता आ चुकी है वह अपने को आत्मवेत्ता स्वीकार नहीं करता। यह कैसा विचित्र मैं इस आधुनिक जगत् को दृष्टिपात कर रहा हूँ। आधुनिक जगत् का जो प्राणी है जितना शिक्षित समाज है वह इसमें लगा हुआ है कि याग जैसे कर्म् को पाखण्ड कह रहा है और अपने को इतना हीन स्वीकार कर लिया है कि आत्मा का उसमें बल नहीं रहा। बल क्यों नहीं रहा है? क्योंकि यहाँ आधुनिक काल का जो विज्ञान है यह अग्निमय कहलाता है जिस काल में अग्नि वाला विज्ञान प्रगति करता है उसी काल में मानव हीन बनता चला जाता है। इसलिए अग्नेय यन्त्रों का निर्माण हो रहा है। आज एक वैज्ञानिक एक यन्त्र का निर्माण कर रहा है जिसको वायुमण्डल में त्यागने के पश्चात् वायु मण्डल इतना दूषित हो जाएगा कि श्वास लेने मात्र से प्राणी नष्ट हो जाएगा, प्राणी का ह्रास हो जाएगा।

पूज्यपाद यह जो आधुनिक जगत् है यह विज्ञान में इतना हीन बनता चला जा रहा ! है कि यह मानव के आत्मिक बल को नष्ग्र कर रहा है। आत्मा का बल ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। संसार में यदि कोई बल है तो वह आत्मा का बल है। आत्मा का बल वह बल कहलाया गया है पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय मुझे वर्णन कराया था कि

महाराजानहुष जब तपस्या करके इन्द्रत्त्व को प्राप्त हो गया !, जब इन्द्र बन गया, इन्द्र बन जाने के पश्चात् महाराजा नहुष ने इन्द्राणी को यह सोचा कि यह मेरी पत्नि हो जाएगी तो उस समय वह दुःखित हुई और देवर्षि नारद के द्वार पर आई। देवर्षि नारद मुनि से प्रार्थना की इन्द्राणी ने कि हे भगवन् महाराजा नहुष हमारे सतीत्व को नष्ट ! करना चाहते हैं और हमारा पति इन्द्र कारागार में स्थित हो गया है और स्वतः वह हमारा जीवन कैस !इन्द्र बन गया है। भगवन्े सुरक्षित रह सकेगा? देविर्षि नारद ने कहा हे इन्द्राणी तुम दुःखित न हो। आज जब महाराजा नहुष तुम्हारे द्वार पर आए तो उसे कहो कि ऐसी सवारी पर आओ जिस पर कोई न आया हो तो महाराजा नहुष की ऐसी सवारी को मैं युक्त कर सकता हूँ और तुम्हारे सतीत्व को रक्षा होगी। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया। मुझे स्मरण है जब नहुष आया तो इन्द्राणी ने नमस्कार करके कहाँ कि हे प्रभु हम आपकी इन्द्राणी बन सकती हैं परन्तु आप ऐसे वाहन पर ! आओ जिस वाहन पर कोई न आया हो। महाराजा नहुष ने वहाँ से गमन किया वह प्रसन्न हो करके चले और उन्हें देवर्षि नारद प्राप्त हुए। नारद मुनि ने कहा कहो राजन् इन्द्र विजय करने वाले आज कहाँ रमण कर रहे हो? उन्होंने कहा महाराज मैंने ! इन्द्राणी को अपनाना है और ऐसे वाहन पर आना चाहता हूँ जिस पर कोई न आया हो। विचार रहा हूँ ऐसा वाहन कौनसा हो? उन्होंने कहा, ऐसा वाहन तो चार ऋषि दण्डक वन में तपस्या कर रहे हैं, तुम उन्हें ले आओ। उनके ऊपर सवार होकर चले आओ। ऐसी तपस्वियों की सवारी और ऐसे तपस्वियों का वाहन कोई नहीं बना सकता। कहते हैं महाराजा नहुष उसी समय ऋषि के द्वार पर पहुंचे। चारों ऋषि तपस्या कर रहे थे। श्रुतिकेतु, सामभानु, कवन्धि, त्रिष्टकातु इन चारों ऋषियों के ऊर्ध्वा में एक वाहन बनाया। उस वाहन को ले करके ऋषि चलने लगे, गति करने लगे। राजा नहुष उस पर विद्यमान हो गए। पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा आत्मा के सम्बन्ध में, कि जब वह चलने लगे तो उन्होंने, सर्पगति को कहा तो उन दोनों ने कहा, अरे, नहुष तू सर्प हो जा। ! तो कहते हैं कि उसी श्राप से एक मृत सांप वहाँ था, उसका जीवात्मा, नहुष का उस सर्प योनि में प्रवेश कर गया। प्रवेश कर गया क्योंकि उनके श्राप थे। मुनिवरों !

उनकी आत्मा का बल था, शारीरिक बल नहीं था। आत्मा का बल था इसलिए सर्वश्रेष्ठ संसार में आत्मा का बल होता है। उस समय नहुष ने कहा, हे ऋषियों मैं महान् ! पापी हूँ परन्तु मेरा जीवन कैसे ऊँचा बनेगा? उन्होंने कहा, द्वापर के काल में महाभारत में अग्नि प्रदीप्त होगी और उस समय युधिष्ठिर महाराज को वन में जाना होगा और उस समय सरयू के किनारे जब महाराजा युधिष्ठिर आए तुम उत्तर प्रश्न करना तुम्हारा कल्याण होगा।

मेरे पूज्यपाद यह कहा करे हैं कि आत्मा का बल सर्वश्रेष्ठ बल कहलाता है। आत्मा में जे बलिष्ठता है वह कोई अवृताम नहीं। शरीर की बलिष्ठता भी है परन्तु आत्मा सर्वश्रेष्ठ माना गया है। पूज्यपाद गुरुदेव ने यह प्रकट कराया मुझे कि यह जो आधुनिक भौतिक विज्ञान है यह बुद्धिजीवीयों की आत्मा को हीन बना देता है। आत्मा में हीनता आ जाती है। मैं यह कहता रहता हूँ कि आधुनिक काल के मानव में एक हीनता आ गई है वैज्ञानिक एक यन्त्र बना रहा है। पातालपुरी में एक यन्त्र बन रहा है वह यन्त्र वायु में त्यागा जाएगा तो प्राणी नष्ट हो जाएंगे। इस प्रकार की आभा मानव के विचारों में लगी हुई है। मैं यह कहता हूँ, हे भोले प्राणियों यह यन्त्र जब बन जाएगा शरीर अवश्य ! त्यागा जाएगा, इससे तुम इतने त्रसित क्यों हो रहे हो? तो आधुनिक काल का विज्ञान मानव को त्रास दे रहा है और त्रासी बन रहा है। इसलिए अपने पूज्यपाद गुरुदेव को मैंने यह चित्रण कराया है कि आधुनिक जगत् का जो विज्ञान है वह नाना अशुद्धियों का चित्रण कर रहा हैं विज्ञान आ रहा है, वैज्ञानिक यन्त्रबन रहे हैं, निर्माण हो रहा है। ब्रह्मास्त्र अग्नेय अस्त्रों का निर्माण हो रहा हैं परन्तु यह विज्ञान ऐसा नहीं है जो मानव को त्रसित बना दे। मानव की आत्मा को हीनता में पहुंचा दे। इसलिए मानव को हीन नहीं बनना चाहिए। आत्मा में बलिष्ठता होनी चाहिए।

अरे, जब समय आएगा, भविष्य को प्रभु के ऊपर त्याग देना चाहिए। भविष्य आएगा प्रभु के संरक्षण में वह रहता है पूर्व हम इतने त्रासी क्यों बन जाएं? इसलिए मैं यह कहता रहता हूँ, हे भोले प्राणियों तुम अपने जीवन को यज्ञमय बनाते !हे यज्ञमानो ! चले जाओ। अपने जीवन के सौभाग्य को ऊँचा बनाते चले जाओ। आत्मा को बलिष्ठ

बनाते चले जाओ द्रव्य का सदुपयोग करते चले जाओ। सुरा और सुन्दरी दोनों से दूर होने का प्रयास करो जिससे तुम्हारा जीवन महान् और आत्म बल बलिष्ठ हो करके तुम सागर से पार हो जाओ। पूज्यपाद गुरुदेव से अब मैं आज्ञा पाऊंगा। पुनः से मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ हे यमान तेरे जीवन का सौभाग्य सदा अखण्ड बना रहे, द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। द्रव्य का दुरूपयोग न होते हुए, सदुपयोग होना चाहिए। मैं पूज्यपाद गुरुदेव से अब आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने उद्गार !आज मेरे प्यारे !ऋषिवर ! दिए। उनके हृदय में विज्ञान, समाज और राष्ट्र के प्रति जो वेदना है वह ऐसी वेदना है कि वह विचित्र सी वेदना प्रतीत होती है जिसके ऊपर हम कुछ टिप्पणियां भी नहीं कर पाते। आज मेरे पुत्र ने अभी अभी कहा कि यज्ञोमयी कृतं देवस्याम्। जहाँ मेरे प्यारे ! महानन्द जी आशीर्वाद, अपना उद्गार देते रहते हैं हे यज्ञमान वहाँ हमारा भी यही ! कर्त्तव्य बन जाता है। तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और तेरे जीवन की मानवीयता मानवता में रमण करती रहे। द्रव्य देवताओं को अर्पित करना यह तेरे जीवन का स्वभाव रहे।

आज का हमारा यह वाक्य अब समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय क्या? कि यज्ञोमयी जीवन होना चाहिए और अपने जीवन को सुन्दर और महान् बनाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। स्थान धनौरा :

११ 01 10 1981 पुष्प 42 ययसृष्टि याग : यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे

जीते रहो !देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भांति !, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव जो इस संसार को नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है उस मेरे प्यारे प्रभु का एक एक ! वेदमन्त्र उसकी गाथा गा रहा है। जिस प्रकार माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा

है इसी प्रकार प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्माकी गाथा गा रहा है अथवा उसका वर्णन कर हा है क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर चिन्तन करने से हमें ऐसा प्रतीत होता है जैसे एक एक वेदमन्त्र में सर्वत्र ब्रह्माण्ड का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है। ऐसा हमारे आचार्यों ने माना है कि जब हम एक परमणु का विभाजन करते हैं तो सर्वत्र सृष्टि का चित्रण उसमें दृष्टिपात हाता हैं एक ही परमाणु के विभाजन करने से सर्वत्र सृष्टि की रचना दृष्टिपात आने लगती हैं जिस प्रकार माता के गर्भस्थल में मानव का निर्माण होता है तो माता के गर्भस्थल में निर्माण करने दृष्टि मात्र से ही एक एक आभा में रमण करने वाला इस ब्रह्माण्ड का सर्वत्र विज्ञान है।

आओ मेरे पुत्रोमैं तुम्हें विज्ञान में ले जाना नहीं चाहूँगा। विचार विनिमय क्या !, आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है? इससे पूर्व शब्दों में मेरे प्यारे महानन्द जी ने ! बहुत से विचार दिए। उन्होंने राष्ट्रीय विचार दिए परन्तु अश्वमेध याग का भी वर्णन आ रहा था। बेटावह काल हमें स्मरण आने लगता है जब वृष्टि !, वाजपेयी और अग्निष्टोम यागों का वर्णन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहा है। परम्परागतों से ही, जब गो मेघ याग का वर्णन आता है तो आचार्य के ऊपर उसका अभीष्ट आता है और यह कहा जाता है कि हे आचार्यगो मेघ याग क्या है !? परन्तु जब पुत्रेष्टि योग का वर्णन आता है तो माता को कहा जाता है, हे माता तू पुत्र याग करनाचाहती है परन्तु पुत्रेष्टि याग ! क्या है? भिन्न भिन्न प्रकार के वैदिक साहित्य में वर्णन आते रहते हैं। आज मैं विशेष चर्चा तो प्रकट नहीं करूंगा, केवल विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार के विचार प्रायः आते रहते हैं।

मेरे प्यारेदेखो !, भगवान राम जब विद्यालय में अध्ययन कर रहे थे तो वह प्रातःकालन याग करते थे। याग करने के पश्चात् विज्ञान की तरंगों को जानने लगते थे। क्योंकि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज महान् वैज्ञानिक और ब्रह्मवेत्ता थे। ब्रह्मवेत्ता वही होता है जो आध्यात्मिक विज्ञान के मार्ग से हो करके ब्रह्म में प्रवेश करता है, ब्रह्म में प्रतिष्ठित हो जाता है। वह ब्रह्मवेत्ता कहलाया जाता है। हमारे यहाँ ब्रह्मवेत्ता भी दोप्रकार के होते हैं। एक ब्रह्मवेत्ता वह जो जनता में ब्रह्म को, जनार्दन को स्वीकार कर रहा है, एक वह

ब्रह्मवेत्ता जो एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके समाधिष्ट हो रहा है अथवा वह प्राण और मन को एक सूत्र में लाने का प्रयास करता है। बेटा मैं यौगिक क्षेत्रों में तुम्हें ! ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार क्या चल रहा है? कि हमारे यहाँ, भगवान राम के यहाँ प्रातःकाल याग हो रहा है। याग में उपदेश मंजरियां चल रही है। उपदेश चल रहे हैं। मानव के जन जीवन की आभा कि हमारा जीवन कैसे ऊर्ध्वा बने यह विचार धारा भी याग में परणित होती रहती थी। आओ मेरे प्यारे मैं भारद्वाज मुनि के द्वारा पर ले ! जाने के लिए जब तुम्हें बात करता हूँ तो विचार आता है कि भगवान राम भारद्वाज मुनि के यहाँ विज्ञान की शिक्षा पा रहे हैं। विचार क्या कि मैं आज इस क्षेत्र में ले जाना नहीं चाहता हूँ।

आज मैं तुम्हें एक ऋषि के द्वार ले जाना चाहता हूँ क्योंकि हमारे यहाँ वेद का ऋषि यह कह रहा है, वेद का मन्त्र कहता है कि यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान है और यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जा रहा है। स्वाहा कह रहा है। देव अग्नि, विद्युत् की धाराएं उन शब्दों को, उस मानव के रथ को बनाकर, यज्ञमान को द्यौ लोक में पहुंचा रहा है। वह द्यौ लोक में प्रवेश कर रहा है। द्यौ कहते हैं अस्वतम् या प्रकाश को, तरंगों को। विचार आता रहता है कि जब हम इस प्रकार के रथी बनते हैं तो मुनिवरोंवह रथ क्या है !? मुझे स्मरण आता रहता है भारद्वाज और उद्दालक गोत्र के नाना ऋषि हुए हैं जिन्होंने अपनी अनुसन्धानशाला में विद्यमान होकर यज्ञशाला और अनुसन्धानशाला दोनों का समन्वय किया है। दोनों का समन्वय करते हुए अपने जो महापुरुष थे उनके चित्रों को अन्तरिक्ष में उन्होंने यन्त्रों के द्वारा दृष्टिपात किया है। आज मैं तुम्हें विज्ञान के युग में ले जाना नहीं चाहता हूँ।

आज हमें याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और शिष्यों के सम्बन्ध में कुछ प्रसंग स्मरण आ रहे है, वेद का मन्त्र कह रहा था कि यज्ञमान याग करनाचाहता है। उस याग में कितने होता होने चाहिए। यहाँ होताओं का प्रसंग आ रहा है बेटा महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि ! महाराज विद्यालय में विद्यमान हैं और विद्यालय में जब प्रसंग आया तो ब्रह्मचारियों ने एक प्रश्न किया। उन्होंने एक अलंकारिक रूपक बनाया और केसा बनाया कि एक

यज्ञमान बन गया, एक प्रश्नकर्त्ता बन गया। तो प्रश्न करने वाला कहता है कि हे ऋषिवर ! ऐ यज्ञमान आपकी सभा में विद्यमान है !हे पूज्यपाद गुरुदेव, वह याग करना चाहता है। उस याग में, यज्ञशाला में कितने होता होने चाहिए? तो याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं कि इस यज्ञशाला में चौबीस होता होने चाहिएं। चौबीस होताओं का वर्णन किया। उसके पश्चात् शिष्य कहता है कि महाराज यज्ञमान यज्ञ करना चाहिए है उसमें कितने होता ! होने चाहिए? तो ऋषि याज्ञवल्क्य कहते हैं कि इसमें सत्रह होता होने चाहिए। शिष्य ने पुनः प्रश्न कर दिया कि महाराज यह यज्ञमान आपकी सभा में !विद्यमान है यह कितने होताओं से यज्ञ करने वाला बने? तो ऋषि कहता है, हे ब्रह्मचारियों ग्यारह होता होने ! यज्ञमान याग करना चाहता है कितने होता होने !चाहिएं। उन्होंने कहा कि महाराज चाहिएं? ऋषि कहता है नौ होने चाहिएं। उन्होंने पुनः प्रश्न किया कि हे ऋषिवरयज्ञम !ान आपकी सभा में विद्यमान हैं वह कितने होताओं से याग करने वाला बने? उन्होंने कहा, आठ होने चाहिएं। पुनः प्रश्न किया कि कितने होता होने चाहिएं? उन्होंने कहा कि पांच होने चाहिए। फिर ब्रह्मचारियों ने कहा कि महाराज यज्ञमान याग करना चाहता है ! कितने होता होने चाहिएं। उन्होंने कहा तीन होने चाहिएं। पुनः प्रश्न किया, यज्ञमान याग करना चाहता है कितने होता हो? उन्होंने कहा, दो होने चाहिएं। जब पुनः प्रश्न किया, यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता हों? उन्होंने कहा, एकागी होना चाहिए। एक पर आ करके ब्रह्मचारी मौन हो गए।

पुनः ब्रह्मचारियों ने प्रश्न किया कि महाराज यज्ञशाला में वह चौबीस होता कौन से ! !हैं जो आपने सबसे प्रिम वर्णन किया। याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं कि हे ब्रह्मचारियों सृष्टि के पिता ने सृष्टि के आदि में इस मानव शरीर रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया। इस ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया और दोनों का समन्वय कर दिया। बेटाऋषि क्या कहता है !? ऋषि कितनी ऊर्ध्वामयी चर्चा कर रहा है? हे ब्रह्मचारियों ! चौबीस होता इस मानव के शरीर में हैं जिनसे याग हो रहा हैं दस प्राण हैं, प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान, नाग, देवदत्त, धनंजय, कूर्म और कृकल यह दस प्राण कहलाते हैं, पांच ज्ञानेन्द्रियां हैं, पांच कर्मेन्द्रियां हैं और मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार यह

चौबीस स्थम्भों वाला मानव शरीर कहलता है और चौबीस खम्भे इस ब्रह्माण्ड में जो हमें दृष्टिपात आ रहे हैं नाना लोक लोकान्तरों वाला यह जो ब्रह्माण्ड है अथवा जगत् है यह नाना प्रकाश गंगाओं वाला है यह भी बेटा चौबीस खम्भों का एक जगत् ! कहलाता है।

ऋषि कहता है, याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं कि मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार यह चतुष्करण कहलाता है। ज्ञानेन्द्रियां पचीकरण कहलाता है, उप इन्द्रियां दस इन्द्रियां कहलाती हैं। प्राण संसार में जितनी भी विभक्त क्रिया हो रही है वह सब प्राणी की प्रतिभा कहलाती है। वह जो ब्रह्माण्ड में आभा हो रही है वह इन प्रणों की कहलाई जाती है। विचार विनिमय क्या? यह मानव का शरीर चौबीस स्थम्भों वाला है। माता चाक्रणि से एक समय श्वेत्ता ऋषि ने कहा कि हे चाक्राणि तुम्हारे इस मानव शरीर में कितने स्थम्भ ! हैं? तो चाक्राणि ने कहा, चौबीस खम्बे कहलाते हैं। उन्होंने इसका उत्तर भली भांति दिया। बेटा यह तो हमने !अब मैं आगे जाना चाहता हूँ। ब्रह्मचारी कहते हैं महाराज ! जान लिया परन्तु सत्रह क्यों? उन्होंने कहा, हे ब्रह्मचारियों जिस समय इस मानव ! शरीर को यह आत्मा त्यागता है उस समय उदान प्राण के साथ में मनस्तत्त्व आता है और यह चित्त के मण्डल को ले करके आता है। चित्त के मण्डल को ले करके वह आत्मा के साथ में उदानप्राण के साथ यह मानव शरीर को त्याग देता हैं उस समय मानव का शरीर सत्रह तत्त्वों का सूक्ष्म शरीर कहलाता हैं सूक्ष्म शरीर में सत्रह तत्त्व कहलाते हैं। पञ्च महाभूत हैं, दस प्राण हैं और मन और बुद्धि कहलाती है। यह सूक्ष्म शरीर वाला जो शरीर कहलाता है, जो स्थूल को त्यागता है उसके मण्डल में बेटा ! पञ्चीकरण होता है। उसी में विभक्त करने वाला प्राण होता है। वह उदान प्राण के साथ में गति करता रहता है। इसके पश्चात् ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु यह भी हमने जान ! लिया परन्तु ग्यारह क्यों होता होने चाहिएं? उन्होंने कहा, दस इन्द्रियां और ग्यारहवां मन कहलाता है क्योंकि वह इस मानव शरीर रूपी जो रथ है इसकी इन्द्रियां एक अश्व के रूप में विद्यमान हैं और मन इनका सारथी बना हुआ है। जब यह मन सारथी बन करके गति करने लगता है तो यह रथ गति करता हुआ वह एकोकी कहलाता है।

विचार क्या कि हमारे बुद्धिमानों ने विचार किया, बुद्धिमानों ने अनुसन्धान किया, हमारे यहाँ एकादशी का व्रत कहलाया जाता है। एकादशी के व्रतों में दस इन्द्रियां और ग्यारहवां मन यह ग्यारह कहलाते हैं तो एकोकी एकादशी माना गया है। व्रत किसे कहते हैं? हमारे यहाँ एकादशी के ऊपर बहुत सी विवेचनाएं आती रहती हैं। परन्तु यहाँ एकादशी व्रत के ऊपर बहुत सी विवेचनाएं हैं। विचार क्या है? कि हमारे यहाँ व्रत कहते हैं संकल्प को। मानव संकल्प करता हैं प्रत्येक इन्द्रिय के साथ में एक एक संकल्प लगा हुआ है। जैसे मुनिवरों मानव संकल्प करता है मैं अपने नेत्रों में कुदृष्टिपात नहीं करूंगा। ! देवताओं का होता बना हुआ है। नेत्रों से क्या, श्रोत्रों से भी कोई शब्द अशुद्ध नहीं ग्रहण करूंगा। वाणी से अशुद्ध नहीं उच्चारण करूंगा। इस प्रकार मानव अपने एकोकी धर्म को विचारता है और उनके ऊपर संयम करने वाला सारथी बन करके शरीर रूपी रथ को अग्रणीय बनाता है वही मेरे प्यारेएकादशी व्रत ! कहलाता है। एकादश ग्यारह इद्रियां कहलाती हैं। दस इन्द्रियां हैं, ग्यारहवां मन कहलाता है। दस मन के ऊपर यह रथ का सारथी बना हुआ है। इस रथ को ले जाने वाला है और इन्द्रियों का वह शासक बना हुआ है। इन्द्रियों को वश में करने का नाम हमारे यहाँ एकादशी व्रत कहा गया है।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय मुझे प्रकट कराया कि एकादश व्रत का नाम ! अन्नादाम् त्यागम् ब्रह्मणोकृति मैंने अपने पुत्र से कहा, नहीं पुत्र अन्न को त्यागने का ! नाम व्रत नहीं माना गया है। व्रत कहते हैं संकल्प को, व्रत कहते हैं इन्द्रियों को संयम करना चाहिए। परन्तु अन्न को भी त्यागना चाहिए। मैं यह नहीं कहता हूँ कि अन्न त्यागने की वस्तु नहीं होती वेद के आचार्यों ने अन्न के सम्बन्ध में यह कहा है कि हमारे यहाँ सात प्रकार के अन्नों की उत्पत्ति सृष्टि के प्रारम्भ में हुई। हमें उस अन्न को त्यागना है जिससे हमारे जीवन में अशुद्ध संस्कारों का जन्म होता है। उनको हम त्यागने वाले बनें। अन्न को त्यागने का नाम व्रत नहीं कहलाता क्योंकि अन्न को हमारे ऋषि मुनियों ने यह कहा है कि अन्न को इतना पान करना चाहिए जैसे उसका प्रकरण होना चाहिए। जो योगी बनना चाहता है उसे अल्पाहारी बनना चाहिए। सूक्ष्म आहार करना चाहिए, अन्नाद त्यागने की वस्तु नहीं होती। पश्नतु उसको सूक्ष्म सूक्ष्म पान करते हुए तुम अपने

प्राणों की रक्षा, अन्नाद पर तुम आ जाओगे तो वही तुम्हारे जीवन का एक कृति भोज बन जाएगा।

परिणाम क्या? अन्न को हमारे यहाँ आचार्यों ने बहुत ऊँची कल्पना की है। हमारे यहाँ वह भी अन्नाद है जिससे हमारा आत्मा तृप्त होता है। हम नेत्रों के द्वारा रूप के अन्न को ग्रहण करते हैं। शब्दों के द्वारा श्रोत्रों से ग्रहण करते हैं और वाणी के द्वारा अपने में आभायित करते रहते हैं। हमारी यह स्पर्श क्रियाएं त्वचा के द्वारा ग्रहण की जाती हैं। ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा यह सब आभाएं हृदय में ओत प्रोत हो जाती हैं। हृदय पवित्र हो जाता है, हृदय महान् बन जाता है। इसीलिए प्रत्येक मानव को हृदय को पवित्र बनाना है।

ब्रह्मचारियों ने कहा, हे आचार्य हमने ग्यारह को तो !हे पितर !जान लिया परन्तु हम जानना चाहते हैं कि नौ क्यों? इस मानव शरीर, इस अयोध्यापुरी में बेटा नौ द्वारा ! माने गए हैं। दो नासिका के छिद्र हैं, दो चक्षु हैं, दो श्रोत्र हैं, एक मुख एक गुदा द्वार और एक उपस्थ। यह नौ द्वार कहलाए जाते हैं। इन नौ द्वारों पर नौ देवता विद्यमान हैं। कहीं कहीं दो दो देवता विद्यमान हैं वह अपना कार्य कर रहे हैं। प्रत्येक द्वार पर द्वारपाल बने हुए है। हमें इन नौ जो द्वारा हमारे मानव शरीर में हैं इन नौ द्वारों के ऊपर हमें अनुसन्धान करना चाहिए। जैसे बेटा हमारे प्राणों की गति चलती है छिद्रों ! से, सूर्य स्वर कहलाता है, चन्द्र स्वर कहलाता है इन स्वरों को जानना है। चन्द्र स्वर के जानने से रसों का ज्ञान हो जाता है। सूर्य स्वर के जानने से यह जो तेजोमयी जगत् है इसका सर्वत्र ज्ञान हो जाता है। मुझे स्मरण आता रहता है सूर्य स्वर के जानने वाले महाराजा हनुमान थे। सूर्य की जो नाना किरणें हैं इन किरणों के ऊपर अनुसन्धान करते हुए वह वैज्ञानिकता को प्राप्त होते रहे है। मुझे स्मरण आता रहता है सूर्य विज्ञान को जाने वाला, सूर्य विज्ञान के ऊपर प्राणायाम करने वाला वह सूर्य की किरण के साथ में, सूर्य लोक में पहुंच जाता है। आज मैं इस सम्बन्ध में कोई विवेचना देने नहीं आया हूँ। चन्द्रमा के चन्द्र स्वरों को जानने वाला चन्द्रमा की सर्वत्र कलाओं को जानने लगता है। चन्द्रमा की जो नाना प्रकार की कलाएं हैं वह उसकी कान्ति में छिटकती

रहती हैं। आभा में परणित होती रहती हैं। बेटावह जो चन !्द्रमा है वह रसों का भण्डार है। नाना प्रकार के रस आते रहते हैं।
मुझे स्मरण है भगवान राम इन चन्द्र स्वरों को जानते थे। चन्द्र कलाओं को जानते थे। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन किया कि वह पृथ्वी के विज्ञान को, पृथ्वी की आभा को जानते रहते थे। कितना खनिज, कितनी दूरी पर विद्यमान है? कितना रस वह रहा है? इस रस की कितनी गति है? यह सब चन्द्रमा की कला को जानने से प्राप्त होता है।
मैं आज यह वाक्य तुम्हें प्रकट करा रहा हूँ कि यह दोनों प्रकार के स्वरूप को जानने से सृष्टि का अर्द्ध विज्ञान उस मानव के मस्तिष्क में ओत प्रोत हो जाता है। इसी प्रकार हमारे यहाँ द्वारपाल बने हुए है। हमारे श्रोत्रों का सम्बन्ध शब्दों में है। शब्द जो हमारा जाता है उसके साथ चित्र जाता हुआ अन्तरिक्ष में रमण करता है। यहाँ तक मानव जानने लगता है श्रोत्र विज्ञान वाला अर्द्ध विज्ञान वाला कि यह जो मानव शब्दों को उच्चारण कर रहा है। यह एक क्षण समय में यह एक सौ सत्रह वार पृथ्वी की परिक्रमा कर जाता है। परिणाम क्या? यह अद्भुत विज्ञान है, इसको जानने वाला, स्वरों का जानने वाला क्योंकि इनका अणु से सम्बन्ध है और यह जो विद्युत् की धारा है यह उत्तरायण से दक्षिणायण को गति करने वाली विद्युत् की धाराएं हैं। हम उस विद्युत की धाराओं को जान करके हम श्रोत्र विज्ञान में इतने पारायण बन सकते हैं क्योंकि हमारे यहाँ ऋषि मुनि इन्हीं के द्वारा सर्वत्र विज्ञान का प्रायः अनुभव करते रहे हैं। मुझे स्मरण आता रहता है माता मदालस सतोयुग के काल में हुई। माता मल्दालसा श्रोत्रिय विज्ञान को जानती थीं। प्राणायाम विज्ञान को जानती थीं। माता अपने गर्भस्थल में यह अनुभव कर लेती थीं कि कैसी बुद्धि वाला पुत्र मेरे गर्भ से जन्म लेगा? मता मल्दालसा ब्रह्मवेत्ता बना रही है इस विज्ञान के द्वारा। हमारे यहाँ विज्ञान होना चाहिए। हमारी माताएं, मेरी पुत्रियां जो विज्ञान में रमण करती हैं वह माता अपने बालक की आभा को जानती है। इसके विचारों में, उसकी आभा परणित हो जाती है।
बेटा मैं दूरी चला गया हूँ। मैं भयंकर वन में नहीं जाना चाहता हूँ। यह जो ज्ञान ! विज्ञान है, यह विशाल वन है। इसमें जाने से मार्ग प्राप्त नहीं होता। परिणाम क्या? यह

जो नौ द्वार हैं हमारे मानव शरीर में, इसमें प्रत्येक द्वार पर एक द्वारपाल विद्यमान है। वह देवता कहलाता है। उस देवता के जानने से सृष्टि का सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान मानव के मस्तिष्क में ओत प्रोत हो जाता है। मेरे पुत्रोजहाँ श्रोत्रों का ज्ञान और विज्ञान है !, जहाँ कश्यप और गौत्म की चर्चाएं आती रहती हैं। हमारे यहाँ सप्तर्षि जो मण्डल है बेटासप्तर्षियों का वर्णन आता है। प्रत्येक ऋषि !, प्रत्येक देवता का ज्ञाता था इसीलिए उनका नाम गौतम, कश्यप, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदाग्नि इत्यादि कहलाते थे। बेटा ! वह सप्तर्षि मण्डल कहलाता था। उन ऋषियों का मण्डलों से समन्वय रहता था। आज मैं उस विज्ञान में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय क्या? विचार बेटा मैं ! यह दे रहा था कि हमें नो द्वार के ऊपर संयम करते हुए याग करना है। यह संसार रूपी याग है। हमें इसके ऊपर अनुसन्धान करना है।

परन्तु ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभुआठ होता क्यों होने चाहिएं !? उन्होंने कहा कि आठ वसु कहलाते हैं जिनमें प्राणी रहते हैं अथवा रमण करते हैं वह आठ वसु हैं वह आठ होता होने चाहिएं। इस संसार में आठ वसु कहलाते हैं। एक एक आकाश गंगा है। एक एक आकाश गंगा में करोड़ों करोड़ों स्वाति नक्षत्र कहलाते हैं। करोड़ों करोड़ों सूर्य मण्डल कहलाते हैं। यह आठ वसु कहलाते हैं। आठ की आभा में रमण किया गया है। आठ इसलिए क्योंकि आठ वसु हैं जो पार्थिव तत्त्व वाले लोक हैं, वह आठ वसु कहलाते हैं जिसमें प्राणी रहते हैं। जैसे मंगल है, बुद्ध है, स्वाक्रीति है, शनि है। इसमें सबमें पार्थिव प्राणी रहते हैं और अग्नेय प्राणी शृंगि मण्डल में रहते हैं और जल आभायित परमाणु चन्द्र मण्डल में रहते हैं। आज मैं बेटाइनके ऊपर तुम्हें विचार देने लगूं त !ो वर्षों समाप्त हो जाएं। आज मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें इतनी चर्चा करने आया हूँ कि यह आठ वसु हैं जहाँ बसने वाले प्राणी रहते हैं। ब्रह्मचारी कवन्धि और भारद्वाज मुनि महाराज का जब दोनें का संवाद हुआ ब्रह्मचारी कवन्धि को भारद्वाज मुनि ने यही निर्णय कराया है कि जितने भी लोक लोकान्तर हैं, आकाश गगाएं है, मेरी विज्ञानशाला में यह जो यन्त्र विद्यमान हैं एक यन्त्र के द्वारा तीन सौ बहत्तर आकाश गगाएं मुझे दृष्टिपात आती हैं और इन आकाश गंगाओं का जितना विस्तार है यह वर्णन करते हुए भारद्वाज मुनि

ने कहा है मेरी जो आकाश गंगा है एक समय जब ब्रह्मचारिणी सबरी और ब्रह्मचारी सुकेता एक ही आकाश मण्डल के सूर्यों की गणना करने लगे तो उनको अरबों खरबों एक ही आकाश गंगा में सूर्य दृष्टिपात आने लगे। एक ही आकाश गंगा में जब अरबों खरबों सूर्यों की गणना कर ली तो उन्होंने कहा एक आकाश गंगा में जहाँ इतने सूर्य हैं ऐसी तीन सौ बहत्तर आकाश गंगाएं मेरी विज्ञानशाला में दृष्टिपात आती हैं, विचार आया कि इसमें आठ वसु हैं और आठों से आकाश गंगा को विभक्त कर दिया है। विचार विनिमय क्या? मुनिवरों यह आकाश गंगाएं कहलाती है। आकाश गंगास में ! वर्णन नहीं किया जा सकता कितन‍े अणु चन्द्रमा कहलाते हैं। आज मैं बेटा इस ! विज्ञान के वन में नहीं जाना चाहता हूँ।

ब्रह्मचारियों ने कहा पांच होताओं से याग क्यों? उन्होंने कहा पञ्च महाभूत हैं। जल, पृथ्वी, अग्नि है वायु है और अन्तरिक्ष ब्रह्मणेः। यही पञ्च महाभूत कहलाते हैं। यह मानव के शरीर में गति कर रहे हैं, यज्ञशाला में विद्यमान हैं। इन्हीं से यज्ञमान याग करता है। पञ्च महाभूतों को जानता हुआ वह प्रायः पचीकरण करता रहता है। पञ्च ज्ञानेन्द्रियां हैं पञ्च प्राण हैं। विचार विनिमय यह कि इनको जानने वाला पञ्चीकरण में होता हुआ संसार के परमाणुवाद को, अणुवाद को जानता हुआ वह भौतिक विज्ञानवेत्ता बनता हुआ आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर जाता है। उन्होंने कहा कि महाराजतीन होता क्यों !? उन्होंने कहा कि मानव शरीर तीन गुणों वाला है, जिसे सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण कहते हैं। उन्होंने कहा महाराजदो क्यों !? उन्होंने कहा एक जड़वत् है और एक चेतना है चेतना है। चेतना में ब्रह्म है और जड़वत् में प्रकृति कहलाती है। उन्होंने कहा कि एक क्यों? एक चेतना है। एक ही सूत्र है उस सूत्र में सर्वत्र ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है। कैसे पिरो रहा है बेटाकैसा अनुपम सूत्र है !? ब्रह्माण्ड का एक एक कण उस सूत्र में पिरोया हुआ है। जैसे माला में सूत्र होता है इसी प्रकार उसी सूत्र में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है।

आओ मेरे प्यारेमैं कहाँ चला गया !? विचार यह प्रारम्भ हो रहा था, मैं एक एक मनके ऊपर जब विवेचना करूंगा बेटातब तुम्हें प्रतीत होगा चौबीस ! से ले करके एकोकी

कण तक मानव को चिन्तन करना चाहिए अथवा विचार विनिमय करना चाहिए, जिससे मानव ज्ञान और विज्ञान में रमण करता हुआ संसार सागर से पार हो जाए। यह है बेटाआज का वाक्। यह क्या कह रहा है !? ब्रह्मचारी कहते हैं ऋषि से, हे ऋषि आप ! तो धन्य हैं। आपने हमेंसर्वत्र ब्रह्माण्ड की जो गुत्थियाँ हैं, ब्रह्माण्ड की जितनी भी तरंगें हैं उनमें आपने हमें रमण कराया है। इस मानव शरीर को ब्रह्माण्ड से समन्वय किया है। ऋषियों ने ब्रह्माण्ड को और मानव के पिण्ड दोनों का समन्वय करते हुए एक सूत्र में पिरो दिया है। कैसा सूत्र है बेटावह कैसी चेतना वाला सूत्र है !? जो एक सूत्र में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है। कैसे पिरोया जा रहा है? अणु, परमाणु, त्रिसरेणु कैसे पिरोएं जा रहे हैं? यह कैसे गति कर रहे हैं? उसी माला के मनके हैं। दोनों एक ही माला के मनके उस संसार को आभायित करा रहे हैं।

आओ मेरे प्यारे ब्रह्मचारियों ने आचार्य के चरणों को स्पर्श किया और स्पर्श करके ! !आपने हमें ऊर्ध्वागति में पहुंचाया है। आप तो धन्य हैं। यह है बेटा !कहा धन्य है प्रभु आज का हमारा वाक्य। आज का वाक् क्या कह रहा है? मुनिवरों मानव का जो ! जीवन है इसका समन्वय इस ब्रह्माण्ड से है। इसलिए प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या को, श्रृंगि मण्डल को यह विचारना चाहिए कि हम सब एक सूत्र के मनके हैं और सूत्र को जानना है और अपने को उस सूत्र में पिरो देना है। यह है बेटा आज का वाक्। ! अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। स्थान बजे 8 रात्रि : ग्राम नांगोला समय :

१२ 03 10 1981 पुष्प 42 यज्ञ याग द्वारा मानव देवत्त्व को प्राप्त होता है

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन आता रहता है अथवा उसके गुणों का हम अनुवादन करते रहते हैं। क्योंकि वह सर्वत्र है। इस प्रकृति के कण कण में ओत प्रोत है। यह ब्रह्माण्ड उसकी स्थली

मानी गई है अथवा उसका आयतन माना गया है। इसी रप्रकार यदि संसार प्रभु का आयतन है तो यह ब्रह्माण्ड ब्रह्म का शरीर माना गया है।

परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र जहाँ परमपिता परमात्मा की आराधना कर रहा है, जहाँ परमपिता परमात्मा के गुणों का अनुवादन कर रहा है वहाँ मेरे प्यारे महानन्द जी ! मुझे कुछ प्रेरणा दे रहे हैं इनकी तरंगें विचारणीय मानी जाती हैं। मेरे प्यारे महानन्द ! जी उच्चारण कर रहे हैं कि कुछ याग के सम्बन्ध में अपना विचार विनिमय होना चाहिए। मैंने बहुत पुरातन काल में नाना प्रकार के यागों का चलन, नाना प्रकार के याग हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, ऋषि मुनियों के मस्तिष्क में और क्रियात्मक होते चले आए हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में यह कहा था कि हमारे यहाँ प्रातः स्मरणीय जो प्रायः माताएं होती हैं वह अपने वाल्य को याग में परणित करा देती हैं।

बेटा मुझे स्मरण आता रहता है त्रेता का काल। त्रेता के काल में तुम्हें याद होगा जब ! राजा दशरथ के यहाँ पुत्रेष्टि याग हुआ। पुत्रेष्टि याग के ऊपर माता कौशल्या ने और तीनों राज लक्ष्मियों ने यह संकल्प किया था कि हम याग करेंगी। हमारा जीवन याग है। परन्तु माता कौशल्या का यह संकल्प बन गया। उन्होंने अपने पूज्य गुरुदेव याज्ञिक को जब दक्षिणा प्रदान करने लगीं, तो इन्होंने दक्षिणा में यही कहा कि प्रभु मेरा ! जीवन याज्ञिक हो, मैं अपने जीवन को याज्ञिक बनाना चाहती हूँ। तो आचार्य ने उसे आशीर्वाद दिया। तो मेरे प्यारे माता कौशल्या के गर्भस्थल में राम जैसी पुनीत आत्मा ! का जब प्रवेश हो गया तो माता कौश ल्या याग करती थीं। वर्चसो अग्नि कीपूजा करती थी। आत्मा को चेतनित करने के लिए तपस्या करने लगीं। क्योंकि माता की यह कामना थी कि मेरे गर्भस्थल से पुत्र होना चाहिए तो याज्ञिक होना चाहिए। माता कौशल्य तपस्या में परणित हो गई अपने जीवन को उन्होंने क्रियात्मक बनाना प्रारम्भ किया। वह प्रातःकाल समिधाओं को ले करके जब अग्न्याध्यान करती थीं तो कहती थीं, हे अग्नेय ! तू प्रकाश है तू मेरे अन्तःकरण का प्रकाश है, तू मेरे अन्तःकरण का प्रकाश है। हे अग्नेय तू सप्त जिह्वा वाली !तेरी ही ज्योति जब ऊर्ध्वा में रमण करती है। हे अग्नेय ! अग्नि है। प्रत्येक जिह्वा से तू संसार का कल्याण करती है। माता कौशल्या उस अग्नि

की आराधना करती रहती थीं। बेटा मध्य समय आता तो कला कौशल करती थीं। ! उसके बदले जो द्रव्य आता था उससे अपने उदर की पूर्ति किया करती थीं। राजा ने बहुत विचारा कि राज लक्ष्मी इस राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करने लगे। तो माता कहती है, हे राजन् मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं कर सकती क्योंकि मैंने आचार्यों ! के समीप, बुद्धिमानों के समीप अग्नि को साक्षी करके मैंने प्रतिज्ञा की थी और वह प्रतिज्ञा क्या? कि मैं अपने जीवन को तपस्वी बनाऊं और मेरे गर्भ से जन्म लेने वाला बालक भी तपस्याचर होना चाहिए। मेरे प्यारे राजा की एकोकी वार्त्ता को उन्होंने ! श्रवण नहीं किया।

मुझे स्मरण है पुत्रो जब मुझे वह काल स्मरण आता रहता है तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात ! आता है जैसे कोई संन्यासी यज्ञशाला में विद्यमान है। वह प्रातःकालीन अग्न्याध्यान करतीं, सूर्य की किरणों के साथ अपने नेत्रों में ज्योति का प्रकाश अपने में ग्रहण करती थीं। जब बाल्य गर्भ से पृथक् हो गया तो माता कौशल्या प्रातःकाल याग करने लगीं। बालक को लोरियां देती रहतीं और वर्चोसि का पठन पाठन चलता रहता। आत्मा वर्चोसि है, अग्नेय है, मानो अग्न्याध्यान हो रहा है। अग्नि का चयन कर रहे हैं समिधा के द्वारा। तो मेरे प्यारेउस अग्नि के चयन को कौन कर रहा है ! !? अग्नि का चयन माता कर रही है। बालक दृष्टिपात कर रहा है। हे मेरी मां तू कितनी भोली है। तू अपने जीवन ! को कितना कर्मठ बना सकती है। कितना प्रतिष्ठित बना सकती है। तेरे जीवन की धारा एक महान् बन सकती हैं माता कौशल्या ने बेटा तीन वर्ष्ज्ञ के बाल्य राम को याग ! की सर्वत्र भूमिका वर्णित करा दी थी और वह तीन वर्ष का बालक वेदों की ध्वनि गा रहा है, अर्थात् याग कर रहा है। समिधा के द्वारा अग्न्याध्यान कर रहा है।

मुनिवरोंमाता का कितना सहयोग है !? माता अपने पुत्र को क्या बना सकती है? इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता। इसलिए हमारे आचार्यों ने कहा कि मानव का प्रातःकाल याग करना चाहिए। हमारे यहाँ वैज्ञानिकों का युग था। एक समय मगध राष्ट्र में हम पहुंचे परन्तु महर्षि भारद्वाज ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी शबरी, ब्रह्मचारी श्वेतकेतु, ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी भारतकेतु आदि ऋषिवर विद्यमान थे। वह प्रातःकाल याग

कर रहे थे। प्रश्न किया गया कि महाराजयह जो तुम याग कर रहे हो !, एक समय एक स्थली पर तो घोषणा करते हो कि हम वैज्ञानिक हैं, विज्ञान के तथ्यों को जानते हैं। दूसरी स्थलियों में आप याग कर रहे हैं। महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा, हे ऋषियों ! मैं जो याग कर रहा हूँ यह विज्ञान का आदि श्रोत्र है। विज्ञान में जो दूषितपन आता रहता है, वायुमण्डल को हम अशुद्ध बनाते रहते हैं, उसका शोधन करना हमारा कर्त्तव्य है क्योंकि याग का जो प्रारम्भ होता है वह यज्ञशाला से होता है। यज्ञशाला होनी चाहिए और विज्ञानशाला होनी चाहिए क्योंकि वैज्ञानिकों का कर्त्तव्य है कि वह घृत के द्वारा वायुमण्डल का शोधन करते चले जाएं। जब ऋषि भारद्वाज ने ऐसा कहा तो मध्यान्तर ऋषि ने कहा, हे भगवन्क्या याग का इतना महत्व है कि विज्ञान के प्रभाव को !, परमाणुवाद को समाप्त कर सकता है? ऋषि भारद्वाज ने कहा कि परमाणुवाद को समाप्त नहीं करना है परन्तु परमाणुओं का शोधन करना है अथवा अशुद्ध परमाणुओं को निगल जाता है, पवित्र जो परमाणु होता है। जैसे एक मानव क्रोधित हो रहा है। परन्तु एक मानव शिन्त दुतव बन करके आता है। वह शान्ति प्रिय बेटा क्रोधाग्नि को निगल जाता ! है और उसके हृदय में शान्तना की स्थापना कर देता है। यह क्या है? अशुद्धता को समाप्त करना और शुद्ध वायुमण्डल को बनाना यह हमारा कर्त्तव्य है।

बेटायह यागों का चयन हमारे यहाँ !, परम्परागतों से होता रहा है। मुझे स्मरण है बेटा ब्रह्मचारी कवन्धि याग करता हुआ परमाणुओं का विभाजन कर रहा है। परमाणुओं ! का विभाजन करके सूर्य की किरण जब परमाणुओं को ले जाती है तो उन परमाणुओं को एकत्रित करके वह सूर्य की किरण के साथ सम्बन्ध कर रहा है। सूर्य की किरणों के साथ गमन करने वाला ऋषि, वैज्ञानिक अपनी आभा में रमण कर रहा है। मुझे स्मरण है, चाक्राणि गार्गी एक समय वनों में याग कर रही थीं। एकान्त स्थली पर विद्यमान वह नित्यप्रति याग करती थीं। उस याग की ध्वनि को श्रवण करने के लिए बेटामृगराज !, सिंहराज आसन पर विद्यमान हैं। याग हो रहा है। चाक्राणि बेटा गान ! गा रही है, साम गान गा रही है, उद्गान गान गा रही है उद्गीत गा रही है, उद्गाता बन करके स्वर ध्वनियां हो रही हैं। उस ध्वनि को श्रवण करने वाले मृगराज, सिंहराज

चरणों को स्पर्श करके जा रहे हैं। यह कैसा विचार हैं? अहिंसा करमो धर्मः यह वेद की ध्वनि है जो मानव को उद्गाता बना देती है, मानव को महान् बना देती है।
विचार विनिमय क्या? बेटाचाक्रणि ही क्या !? जितने भी ब्रह्मवेत्ता हैं, ज्ञान का जिनके द्वारा भण्डार हैं, तपस्या में परणित होने वाले हैं उन्होंने याग को सर्वश्रेष्ठ माना है, पवित्र माना है। एक याज्ञिक बन को करके विज्ञानशाला में याग कर रहा है। एक मेरी प्यारी माता अपने विचारों को ले करके पुत्रेष्टि याग कर रही है। पुत्र याग कर रही है, गर्भस्थल में विद्यमान होने वाले को माता मल्दालसा की भांति तीन शब्दों का प्रतिपादन करा रही है। माता मल्दालसा कहा करती थी, अपने बालक को लोरी देती हुई, हे बालक, हे आत्मातू शरीर में रहने वाली आत्मा को शुद्धोऽसि !, बुद्धोऽसि, निरंजनोऽसि बना। शुद्ध, बुद्ध और निरंजन यह आत्मा के पर्यायवाची शब्द हैं अर्थात् यह आत्मा शुद्ध है, निरंजन है, अखण्ड रहने वाली है और बुद्धिमान है। यह तीन शब्द आत्मा के वाची कहलाए जाते हैं। जो माता अपनी लोरियों में बालक को इन तीन वाक्यों का प्रतिपादन करती है, व्याख्या करती है तो वह बालक ब्रह्मवेत्ता बनता है, उसके संस्कार बन जाते हैं। जो संस्करणीय बन जाता है और माता का गर्भाशय पवित्र बन जाता है।
मेरे प्यारे आज मैं तुम्हें यह वाक्य इसलिए प्रकट कर रहा हूँ कि हमारे यहाँ यागों ! का चयन परम्परागतों से ही, माना हैं ऋषि मुनियों ने इसकी प्रशसाएं की हैं। परन्तु याग मानव के लिए एक मार्ग है जो याग के प्रकाश में हम मोक्ष की पगडण्डी को प्राप्त कर लेते हैं। बेटा महानन्द !आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। मेरे प्यारे ! जी भी दो शब्दों का प्रतिपादन करेंगे। आज का विचार क्या? मुनिवरों प्रत्येक मानव ! को याज्ञिक बनना चाहिए और यागों में परणित होतेहुए, अपने जीवन को महान् बनाते हुए चले जाएं। अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्दों की विवेचना प्रकट करेंगे। !
पूज्य महानन्द जीः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी मेरे !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! पूज्यपाद गुरुदेव अमृत की वृष्टि कर रहे थे। इनका वाक्य चल रहा था कि याग वैज्ञानिक कर रहा है, याग माता कर रही है, याग राष्ट्र में होता है। परन्तु मानव का जीवन भी एक याग है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परम्परागतों से ही, प्रकट

कराता रहता हूँ कि हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेवयह जो वर्तमान का काल है !, यह बड़ा विचित्र काल है जहाँ मानव मानव का हनन करने के लिए तत्पर है। आज जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है मुझे प्रसन्नताएं होती रहती हैं जब प्रायः यागों का चयन होता रहता है। हमारी जहाँ आकाशवाणी जा रही है वहाँ एक याग की रचना अथवा एक याग की सम्पन्नता और याग में एक प्रतिभा कृति कहलाई। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव बहुत परम्परागतों की वार्त्ता है, एक समय राज जनक के यहाँ याग हुआ था। उस याग को वृष्टि याग कहा गया और राजा जनक के यहाँ जब याग हुआ तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को कजली वनों में से लाया गया और महामन्त्रों के उच्चारण के बाद वृष्टि हो गई।

परन्तु समय सय का एक गायन है, समय समय की वार्त्ताएं हैं। आज मैं उन कालों में जाना नहीं चाहता हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेवआज का राष्ट्र !, आधुनिक जगत् का मानव याग जैसे कर्म को पाखण्ड कहता है। यह क्यों कह रहा है? क्योंकि मानव मानव का शत्रु बन रहा है। मानव का आहार और व्यवहार अशुद्ध हो गया है। हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेवजहाँ राष्ट्र यह कहता था कि प्राणियों की रक्षा की जाए !, जहाँ राष्ट्र कहता था अहिंसा परमोधर्मः को ले करके याग किए जाएं, वहाँ आज का राष्ट्र कहता है कि प्राणियों का पालन किया जाए। पालन करके भक्षण किया जाए परन्तु आज का राष्ट्रवाद हिंसावाद का प्रतीक बन गया है। जहाँ राष्ट्र पालन करने को कहता है वहाँ भक्षण करने को कह रहा है। अरे, भोले राजन्जहाँ तू पालन करता है !, वहाँ भक्षण की वार्त्ता आती है, तो कहाँ चला गया तेरा वह राष्ट्रवाद? कहाँ वह मनु सिद्धांत चला गया? कहाँ भगवान् राम का यह राष्ट्र चला गया।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आज का आधुनिक काल का जो अपने को शिक्षित समाज कहता है, वह कहता है मैं शिक्षा में पूर्ण हूँ, परन्तु वह अहिंसा का पालन न करता हुआ हिंसक बन रहा है। तो प्रभुकि थ !मूझे तो ऐसा प्रतीत होता है पूज्यपाद !ोड़ा समय रह रहा है कि यहाँ अग्नि प्रदीप्त होने जा रही है। परन्तु आज पूज्यपाद गुरुदेव मैं यज्ञमान को अपने उद्गार प्रकट करने आया हूँ कि हे यज्ञमान तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड !

बना रहे। तेरे जीवन की धाराएं महान् बनी रहें और गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। यह जो याग जैसा कर्म है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तो कई काल में प्रकट कराया। यह याज्ञिक कर्म कहलाता है, जिससे आत्मा में पवित्रता आती है और लक्ष्मी वसुधा मां का पूजन होता है। लक्ष्मी का पूजन होता है और उस लक्ष्मी का पूजन हो करके गृह पवित्र बनते हैं। जिन गृहों में लक्ष्मी का पूजन होता है अथवा वह देवताओं को अर्पित की जाती है लक्ष्मी। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते हैं वह गृह सौभाग्यशाली होता है। वह गृह महान् कहलाते हैं क्योंकि द्रव्य का सदैव सदुपयोग होना चाहिए। जिन गृहों में द्रव्य का, लक्ष्मी माता का तिरस्कार होता है एक समय वह आता है कि माता उस गृह को त्याग देती है। वह लक्ष्मी से दूर हो जाता है। लक्ष्मी उस प्राणी से दूरी हो जाती है। तो परिणाम हमारे यह वाक्य उच्चारण करने का यह है कि हम यज्ञमान को सदैव यह अपनी प्रेरणा देते रहते हं कि हे यज्ञमानतेरे जीवन का सौभाग् !य अखण्ड बना रहे और गृह में सदुपयोग होता रहे लक्ष्मी का।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो याज्ञिक कहलाए गए है। इकत्तर प्रकार के कर्म काण्डों के याग को जानते हैं। परन्तु देखो, कजली वनों से लाया जाता है याग के लिए। जैसे यज्ञ जन्मों में ओत प्रोत रहने वाला हो। परन्तु वृष्टि याग, अग्निष्टम् याग, पुत्रेष्टि याग, ब्रह्मयाग, विष्णु याग, रुद्र याग, हिम याग देवी याग, सम्पत्ति याग, श्रम्कान्त याग, नाना प्रकार के यागों का वर्णन वैदिक साहित्य में आया। परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा ऋषि आते, उन यागों का चयन करा करा कर ले जाते। परिणाम क्या? आज मैं प्रशंसा करना नहीं चाहता हूँ।

विचार विनिमय यह कि आधुनिक काल कैसा है? आधुनिक काल का मानव, बाल्य कैसा बन गया है? आधुनिक काल की माताएं कैसी बन गई हैं। हे मां जब तू कौशल्या ! बनेगी तो राम भी तेरे गर्भ से जन्म लेगा। परन्तु यदि कौशल्या नहींबन पाएगी तो राम कहाँ से आएगा। चेतन बनेगी तो कृतियों में आ जाएगा और हे मां तू भोली बनकर ! के अपने जीवन को सुचरित्रता में धारण कराती हुई ज्ञान की पोथी को ले करके चल। आयुर्वेद तेरे द्वारा होना चाहिए। जिस गृह को तू राष्ट्र की सम्पदा बन करके गृह को

महान् बना सके। आज मैं विशेष्ज्ञ चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। महाभारत के काल में पुत्रियों का जो तिरस्कार हुआ वह तिरस्कार अवरणीय कहलाता है। परन्तु हे माता ! उसमें भी तेरी ही हीनता है। तेरे गर्भ से बालक जन्म लेता हुआ माता को ही कुदृष्टिपात करने वाला बने, यह तेरी ही सूक्ष्मता है। मेरे प्यारेवह माता का बालक !, माता की रक्षा करने वाला बने। उसका भक्षक न बने। महाभारत के काल में भक्षक बन गया, रक्षक नहीं रहा। परन्तु मैं आज पूज्यपाद गुरुदेव से विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यही कि आधुनिक काल का जो विज्ञान है, यह मानव को तिरस्कृत करता रहता है, परेशान करता रहता है। यह महा भ्रान्तियों में रमण करता रहता है। आधुनिक काल का विज्ञान मानव को भयभीत करता रहता है। नाना प्रकार की आभाएं प्रकट कराता रहता है जिससे यह समाज निर्भय न रहे। यह हीनता को प्राप्त होता हुआ अपने को निष्क्रिय बनाने के लिए जा रहा है। आज मैं विशेष चर्चा पूज्यपाद गुरुदेव को प्रकट कराने नहीं आया हूँ। मैं आपको परिचय देने आया हूँ। केवल वाक्य यह कि हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मैं यज्ञमान को अपनी शुभ कामनाएं प्रकट कराने के लिए आया हूँ ! कि इनके जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और द्रव्य का गृह में सदुपयोग होता रहे। यही मेरे पूज्यपाद गुरुदेव हमारा वाक्य है। अब मैं आपसे आज्ञा पाऊंगा। !

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपनी वेदनामयी !आज मेरे प्यारे !ऋषिवर ! चर्चाओं को प्रकट किया। इनकी वेदनाएं बनी ही रहती है। कहीं राष्ट्र के प्रति, कहीं समाज के प्रति। परन्तु यह समाज और राष्ट्र परम्परागतों से ही, चल रहा है। परन्तु जो मानव शोधन करने वाला है, वह शोधन करता रहता है। जो अशोधन करने वाला है वह अशोधन करता रहता है। परन्तु अग्नि प्रदीप्त जब होती है तो वायु मण्डल दूषित हो जाता है। विचारों से दूषित पन आ जाता ह। मुझे भी कोई विशेष चर्चा नहीं देनी है। केवल हमें विचार यह करना है कि प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना चाहिए। प्रत्येक माता का को याज्ञिक बनना चाहिए और जहाँ मेरे प्यारे महानन्द जी यज्ञमान को ! अपनी शुभ वेदना प्रकट कर रहे थे, मेरी भी कामना रहती है कि उनके जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, महान् और पवित्रवत जीवन को प्राप्त होते रहें। यह आज का

वाक् अब समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। स्थान 10 प्रातः : नागोला समय : बजे।

१३ 09 10 1981 पुष्प 40 यरावण का आततायीपन समाप्त करने हेतु

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा का प्रायः वर्णन होता रहा है। तो आओ मेरे पुत्रोआज का हमारा वेदमन्त्र उस परमपिता पर !मात्मा की गाथा गा रहा है जो इस संसार का नियन्ता अथवा निर्माण करने वाला है। आज हम उस देव की महिमा का गुणगान गाते चले जाएं जिस मेरे देव का ज्ञान और विज्ञान नितान्त माना गया है। जिसके विज्ञान को कोई सीमाबद्ध नहीं कर सका है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक नाना वैज्ञानिक हुए। परन्तु उन विज्ञान वेत्ताओं में कोई भी वैज्ञानिक ऐसा नहीं हुआ जो उस परम पिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके क्योंकि उस मेरे देव का ज्ञान और विज्ञान सीमा से रहित है। वह सीमा में आने वाला नहीं है। इसीलिए आज हम अपने देव की महिमा का गुणगान गाते हुए दोनों प्रकार के विज्ञानवेत्ता बनते चले जाएं।

हमारे यहाँ इस संसार में परम्परागतों से ही, दो प्रकार का विज्ञान माना है। एक आध्यात्मिक विज्ञान और द्वितीय भौतिक विज्ञान माना है। परन्तु जहाँ ज्ञान और विज्ञान की वार्त्ताएं प्रत्येक वेदमन्त्र हमें दर्शाता रहता है, वहाँ आज का हमारा वेद का ऋषि, वेद का मन्त्र हमें बेटा कुछ राष्ट्र के लिए विचार विनिमय करने के लिए बाध्य करता रहता ! है। हमने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें यह निर्णय कराया कि हमारे यहाँ विवेकी पुरुष होने चाहिए, क्योंकि राष्ट्र की घोषणा करने वाला मानवप, राष्ट्र के ऊपर इन तथ्यों पर विचार विनिमय किया जाता है तो वहाँ एक ही वस्तु हमें प्राप्त होती है कि समजा में

विवेक होना चाहिए और राष्ट्रीयता में वैज्ञानिक और विवेकी पुरुष होने चाहिए। विवेकी पुरुष उन्हें कहा जाता है बेटाजो नि !ष्पक्ष हो करके अपनी वार्त्ता प्रकट करते हैं और राष्ट्र के सम्बन्ध में ऊँची ऊँची उड़ान उड़ने लगते हैं। विज्ञान की उड़ान उड़ते हैं। वह यह विचारते हैं कि समाज का उत्थान के से हो?

तो बेटाजब हम इन विचारों को ले करके त्रेता के काल में चले जाते हैं !, त्रेता के काल में प्रवेश करते हैं तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात होने लगता है कि उन महापुरुषों के विचार, उनकी निष्पक्षता मानव के हृदय में ग्राही बन जाती है। मुझे स्मरण है, मेरे प्यारेमहानन्द जी ने बहुत पुरातन काल में यह निर्णय कराया कि यह संसार !, यह राष्ट्र जब विज्ञान में प्रवेश कर जाता है और वैज्ञानिक बन जाता है उस काल में मानव के विचारों में एक भिन्नता आनी प्रारम्भ हो जाती है। परन्तु आज मैं उस भिन्नता के सम्बन्ध में कोई वाक्य प्रकट करने नहीं आया हूँ। के वल विचार विनिमय क्या?

मेरे प्यारेदेखो !, राजा रावण और भगवान राम, दो की विवेचना आती रहती है और उन दोनों में एक राशि के नामोकरण कहलाते थे। परन्तु जब राजा रावण का राष्ट्र विशाल बना तो वह धनों से हीन भी नहीं था। परन्तु राजा रावण के यहाँ आततायीपन आ गया। जब आततायीपन आ गया तो उस काल में ऋषि मुनियों ने विचारा और विचारने लगे कि राजा रावण का यह जो आतंक है अथवा यह जो आततायीपन है यह जो मानव को त्रास दिए जा रहा है, इसका कोई न कोई कारण हमें प्राप्त कर लेना चाहिए। अर्थात् इसको के से समाप्त किया जाए? क्योंकि राजा रावण के राष्ट्र में न सूर्य अस्त होता था न उदय होता था। इतना विशाल उनका राष्ट्र था, इतना विशालतम उनके राष्ट्र में प्रायः रहा।

मेरे प्यारे एक सभा अयोध्या के भयंकनर वन में हुई महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज ! का एक आश्रम था जिसमें सभा हुई थी। वह सभा महाराजा शिव और महर्षि विभांडक मुनि महाराज की अध्यक्षता में हुई थी। सभा में देवर्षि नारदमहर्षि वशिष्ठ, महर्षि विश्वामित्र और भी नाना ऋषि थे जैसे जमदग्नि, भारद्वाज, ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी गार्गोपथ्य, चाक्राणि गार्गी, महाराजा अश्वल और याज्ञवलक्य मुनि महाराज भी उस सभा

में विद्यमान थे। जिसमें महाराजा दिग्ध और महर्षि कौशल गोत्र में जन्म होने वाले गार्गीपथ्य, उद्दालक गोत्रीय ऋषि श्वेत्ताश्वतर, सम्भूति ऋषि महाराज, महर्षि सोम कृतिभानु और महर्षि कुक्कुट और भी नाना ऋषि विद्यमान थे। उस सभा में यह विचार विनिमय होने वाला था कि हम इस समाज में रावण के आततायीपन को के से समाप्त कर सकते हैं? क्योंकि जिस राजा का राष्ट्र इतना विशाल बन गया हो, उन्होंने इन्द्र जैसे राजा को विजय कर लिया हो और त्रिपुरी में भी उनका राष्ट्र था जहाँ मेघनाद राज किया करते थे। सोमतिती राष्ट्र राज्य में उनके पुत्र नारायणान्तक, पातालपुरी में अहिरावण और भी नाना राष्ट्र उन्होंने अपना लिए। इसलिए न सूर्य अस्त होता था न उदय होता था।

मेरे प्यारेजब यह वाक्य उनके समीप आया तो ऋषि मुनियों ने विचार विनिमय किया !, हमें क्या करना चाहिए? मुझे स्मरण आता रहता है तो उनका विचार हुआ। महाराजा शिव से प्रश्न किया, महाराजआप उनके वंश के पूज्य गुरु हैं क्योंक !ि उन्हें आपने अस्त्रों शस्त्रों की शिक्षाएं भी प्रदान की हैं महाराजा शिव ने कहा, हां ऐसा तो हुआ है। भारद्वाज मुनि से भी यही कहा गया। तुम क्या सहयोग दे सकते हो? उन्होंने कहा, जो भी हमसे सहयोग प्राप्त करोगे वही प्रदान करेंगे। परन्तु आततायीपन को समाज में समाप्त किया जाना चाहिए। जब वहाँ विचार विनिमय होने लगा तो सब ऋषि मुनियों ने महर्षि विश्वामित्र से यह कहा कि तुम धर्नुयाग करो और अयोध्या में यह जो राजकुमार हैं, राम और लक्ष्मण इन दोनों को धनुर्याग से महान् बनाओ।

उनको बलिष्ठ बनाया जाए। वैज्ञानिकता से, अस्त्रों शस्त्रों से युक्त किया जाए। तो मेरे प्यारे जब यह विचार चला तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि रावण का जितना ! भी वंश है मैं प्रायः उनको शिक्षा देता रहा हूँ, क्योंकि उनके विधाता जो कुम्भकरण हैं वह मेरे यहाँ बारह बारह वर्षों तक विज्ञान की शिक्षा ले करके गए हैं। उनका विज्ञान इतना विशाल है, वह इतने अनुसन्धानवेत्ता हैं कि वह छह मास तक हिमालय में अनुसन्धान करते रहते हैं और छह मास तक लंका में, विद्यालयों में वैज्ञानिकों को

शिक्षा देते रहते हैं। कुम्भकरण का इतना विज्ञान नितान्त था।
एक समय मेरे प्यारे भारद्वाज !मुनि महाराज के यहाँ ब्रह्मचारी सुके ता और महर्षि पन्पेतु मुनि महाराज की कन्या शबरी इन तीनों ने एक यन्त्र का निर्माण किया था। वह यन्त्र इस प्रकार का था कि महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के आश्रम में उसका निर्माण हुआ। उस यन्त्र में विद्यमान हो करके महाराजा कुम्भकरण बहत्तर लोकों का भ्रमण किया करते थे। बेटामुझे स्मरण है वह जब पृथ्वी से उड़ान उड़ते तो चन्द्रमा में जाते !, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी तो मंगल में चले गए, मंगल से उड़ान उड़ी तो बुद्ध में चले गए, बुद्ध से उड़ान उड़ी तो शुक्र में चले गए। एक ही यन्त्र में विद्यमान हो करके बहत्तर लोकों का भ्रमण किया करते थे। कितना विज्ञान महाराजा रावण के यहाँ विशालता में परणित होता रहा है।
मेरे प्यारे एक समय हिमालय कन्दराओं में अनुसन्धान करते हुए यह विचारा क्योंकि ! वह नित्यप्रति याग भी करते थे। वह याग से यह विचारते रहते थे कि यह स्वर्ण की जो धातु है यह विशेष है। परन्तु मैं यह चाहता हूँ कि स्वर्ण में सुगन्धि उत्पन्न हो जाए। वह सुगन्धि के से ला सकते थे? परन्तु वह इसके ऊपर विचार विनिमय ही करते रहे, परन्तु उसमें सुगन्धि नहीं ला सके। विचारते रहे क्योंकि अनुसन्धान उनका एक कर्त्तव्य बन गया था।
एक समय मेरे पुत्र ने मुझे यह वर्णन कराया कि आधुनिक समाज ऐसा स्वीकार करता है कि छह मास तक कुम्भकरण जी निद्रा में रहते थे और छह मास तक वह जागरूक रहते थे। मेरे पुत्र ऐसा नहीं। परन्तु वह छह मास तक हिमालय कन्दराओं में अज्ञातवास में रहते थे और छह मास विश्वविद्यालयों में वह विज्ञान की शिक्षा प्रदान करते रहते थे। मेरे पुत्रो बहुत सी वार्त्ताएं इस प्रकार की होती हैं जो साहित्यिक चर्चाओं में अभेदन ! हो जाती हैं परन्तु उनकी कुछ रूपरेखा भिन्न भिन्न रूपों में बनती रहती है। आज मैं इस क्षेत्र में जाना नहीं चाहता हूँ।
विचार विनिमय क्या? मेरे पुत्रो यह विचार होने लगा। भारद्वाज मुनि महाराज ने यह ! कहा, अगर तुम रावण के अचरित्रवाद को समाप्त करना चाहते हो तो विवेकी पुरुषों का

जन्म होना चाहिए। विवेकी पुरुष होने चाहिए। क्योंकि समाज में जब तक विवेक नहीं बनता, विवेकी पुरुष नहीं होते, वेद के पठन पाठन करने वाले पुरुष नहीं होते और उनमें विवेक न हो तब तक राष्ट्र ऊँचा नहीं बन सकता। जब यह वाक्य उन्होंने प्रकट किया तो भारद्वाज मुनि ने यह कहा, मेरी विज्ञानशाला में जितने भी वरुणास्त्र हैं, इन्द्रास्त्र हैं मेरे यहाँ नाना अस्त्रों का निर्माण किया गया। मैं राम को कोई भी परिस्थिति जान करके मैं कोष को प्रदान कर सकता हूँ। भारद्वाज ने तो यह उस समय शपथ ग्रहण की कि जितना भी मैंने विज्ञान को कजली वनों में विद्यमान हो करके नाना यन्त्रों का निर्माण किया क्योंकि भारद्वाज मुनि ने यह कहा, मेरे यहाँ ऐसे यन्त्र हैं, एक मानव के रक्त के बिन्दु को यन्त्र में प्रदान किया जाए उस यन्त्र में मानव का चित्र आ जाता है जिस मानव का वह रक्त का बिन्दु हो। चाहे वह प्राणी इस संसार में है अथवा नहीं। परन्तु रक्त के बिन्दु से चित्रण करते रहते।

मेरे प्यारे उन्होंने कहा अग्नेय !अस्त्र भी मेरे यहाँ हैं। तो भारद्वाज मुनि का सब ऋषि मुनियों ने स्वागत किया। उनके वाक्यों को अपने हृदय में ग्राही बनाया। महाराजा शिव से यह प्रार्थना की गई, महाराज आपने एक यन्त्र का निर्माण किया है उसका भी हमें ! प्रतीत है। आप इसमें क्या अपना भी सहयोग प्रदानकरेंगे। तो राजा शिव ने कहा, मैंने राजा रावण को राष्ट्रपिता बनाया, उनको भिन्न भिन्न प्रकार की विज्ञान की शिक्षाएं दीं और उन शिक्षालयों में सदैव शिक्षा भी देता रहा हूँ। परन्तु कोई भी मानव जब अपनी आज्ञा के अनुसार उनकी आत्मा की जो प्रेरणाएं हैं उनके अनुसार कर्म नहीं करता। वैदिक साहित्य कहता है, उस मानव को अपने स्थान में ग्राही न बनाओ। तो आज मेरा तो यह मन्तव्य बन गया है कि मैं रावण को कोई भी सहायता प्रदान नहीं करूंगा क्योंकि उनका जो जीवन है वह आततायी बन गया है। उसके जीवन में राष्ट्रवाद के प्रति जो राष्ट्र में चरित्र होना चाहिए, मानवता होनी चाहिए, सुगन्धि होनी चाहिए, वहाँ दुर्गन्धि उत्पन्न होती रहती है। तो ऐसे राष्ट्र के प्रति मेरी कोई सहानुभूति नहीं रहती। मेरे पुत्रो जब महाराजा शिव ने यह वक्य प्रकट किया तो प्रकट करते ही सब ऋषियों ! ने उनके चरणों को स्पर्श किया क्योंकि वह अध्यक्ष थे, सभापति बने हुए थे। सब

ऋषियों ने उनका धन्यवाद किया और उन्होंने कहा कि राजा रावण को यन्त्रों का एक कोष आपने प्रदान किया है। महाराजा शिव ने कहा, हे मुनिवरों मेरे द्वारा एक यन्त्र ! रावण को प्रदान किया गया है। जो राजा रावण मेरे पुत्र गणेश और पार्वती की सहकारिता में यन्त्र का निर्माण हुआ है जो राजा रावण को, महारानी मन्दोदरी को गणेश और पार्वती को प्रतीत है। वह यन्त्र के सा है? वह यन्त्र ऐसा है कि यन्त्र विद्यमान है, शत्रु से संग्राम कर रहा है। वह यन्त्र उसे शक्ति प्रदान कर रहा है, उसी नामोकरण से शक्ति प्रदान कर रहा है, शत्रु से विजय नहीं हो रहा है। वह विजय होने वाला नहीं। परन्तु मैं जब कोई ऐसा मूलक बनेगा तो मैं उसके कारण को निश्चित प्रकट कर सकता हूँ। इतना मैं त्याग कर सकता हूँ। राजा शिव ने इन वाक्यों को पान करके महाराजा विश्वामित्र बहुत प्रसन्न हुए। सब ऋषियों का विचार विनिमय होता हुआ, महाराजा विश्वामित्र से प्रार्थना की कि तुम धनुर्याग करो। ऋषि ने वह वाक्य स्वीकार कर लिया। वह सभा इन विचारों को ले करके समाप्त हो गई और यह विचार विनिमय निश्चित हो गया कि यह जो राजा रावण आततायी बन रहा है, वैज्ञानिक बन करके साधारण मानव को जो त्रास दिया जा रहा है वह समाप्त होना चाहिए। यह निश्चय हो करके सभा विसर्जन हो गई। अपने अपने आश्रमों को ऋषि मुनि जा पहुंचे।

राजा रावण को भी सभा का कुछ प्रतीत हुआ। उन्हें यह प्रतीत हो गया था कि सभा हुई है महाराजा शिव की अध्यक्षता में। राजा रावण ने जब सभा की वार्त्ताएं स्वीकार कर लीं तो वह महाराजा शिव के द्वारा पहुंचे। हिमालय में पहुंचे और जहाँ शिव रहते थे उस स्थान में उनके चरणों में ओत प्रोत हो गए। कहा कि महाराज आपकी कोई ! सभा हुई है। उस सभा की वार्त्ता श्रवण करने के लिए मैं आपके समीप आपहुंचा हूँ। राजा शिव ने कहा वह जो सभा हुई उसकी, वार्त्ता उसके विचारों से मैं तुम्हें अवगत कराऊँगा नहीं क्योंकि वह सभा ऐसे ऐसे आततायी को समाप्त करने के लिए है। तुम आततायी हो और यदि तुम सुचरित्र हो तो तुम्हें किस प्रकार का सन्देह हुआ है? यह सन्देह तुम्हें नहीं होना चाहिए और यदि तुम आततायी हो तो तुम्हारा संहार किया

जाएगा। तुम्हारा विनाश होगा। महाराजा शिव यह वाक्य प्रकट करके मौन हो गए।
मुझे स्मरण है महाराजा विश्वामित्र को यह निश्चय हो गया था कि उन्हें धनुर्याग करना है। अब राजा रावण ने यह विचारा कि धनुर्याग को समाप्त करना चाहिए। धनुर्याग करने के लिए राम लक्ष्मण को दण्डक वन में ले गए तो वहाँ धनुर्याग की यज्ञशाला थी। यह यज्ञ भी कई प्रकार के होते हैं। धनुर्याग होता है, वाजपेयी याग होता है, अग्निष्टोम याग होता है, ब्रह्मयाग होता है, विष्णु याग होता है, शिव याग होता है, देवी याग होता है, पुत्रेष्टि याग होता है, भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज ने प्रकट किए हैं। आज मैं उन यागों की चर्चा तो करने नहीं आया हूँ, वास्तव में यह विचार देने के लिए आया हूँ कि धनुर्याग क्या है? महर्षियों ने, विश्वामित्र ने राम और लक्ष्मण को धनुर्याग की रक्षा करने के लिए नियुक्त कराया तो वह रक्षा करते रहे। धनुर्याग चलता रहा। छह मास तक वह याग चला। छह मास के पश्चात् महर्षि विश्वामित्र उस याग को पूर्ण करने के पश्चात् भारद्वाज मुनि आश्रम को प्रस्थान किया और महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ पहुंचे। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने महर्षि विश्वामित्र का स्वागत किया। वहाँ बेटा यह क्या रचना !राजा रावण भी आ पहुंचे। उन्होंने कहा प्रभु ! रच रही है? भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा यह तो कोई रचना नहीं है। यह तो विज्ञान की उड़ान है। कोई भी विज्ञान की उड़ान उड़ सकता है। धनुर्याग भी विज्ञान की उड़ान है और तुम्हारे यहाँ जो विज्ञान की उड़ान लंका में उड़ी जा रही है वह भी विशाल उड़ान है। वैज्ञानिक किसी की सम्पदा नहीं है। वैज्ञानिक किसी राष्ट्र की सम्पदा नहीं। वह निष्पक्ष हो करके किसी वस्तु के ऊपर चिन्तन और मनन करता है और उसको साकार रूप देता रहता है। इसीलिए राम और लक्ष्मण दोनों यहाँ आए हैं विश्वामित्र के सहित। वह धनुर्याग के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न करना चाहते हैं।
मेरे प्यारेउन्होंने विचार विनिमय प्रारम्भ किया तो भगवान राम ने !, ब्रह्मचारी सुके ता ने, ब्रह्मचारिणी शबरी ने, गार्गेपथ्य ने एक यन्त्र का निर्माण किया था उस काल में और वह यन्त्र था जिसको अहिल्या कृतिभा यन्त्र कहते हैं। अहिल्या कृतिभा यन्त्र उसे कहा

जाता है जो अहिल्या के गर्भ को जानता है।

अहिल्या यहाँ वैदिक साहित्य में पृथ्वी का नाम है। अहिल्या के दस दस योजन नीचे जैसा खनिज विद्यमान है उस खनिज को वह दृष्टिपात कराता रहता है। भगवान राम ने उस यन्त्र को जानने का प्रयास किया। उस यन्त्र को जाना और जानने के पश्चात् वह अहिल्या का उद्धार करने वाले बने। अहिल्या का उद्धार क्या है? मुनिवरों भूमि पड़ी ! हुई है। उस पर अन्न उत्पन्न नहीं हो रहा है, अनुसन्धान नहीं हो रहा है। राष्ट्र में खाद्य की सूक्ष्मता है। तो भगवान राम ने अहिल्या का उस यन्त्र की सहायता ले करके उद्धार किया, कल्याण किया।

मेरे प्यारेप्रत्येक मानव को सदैव विचारना चाहिए कि पूजा का अर्थ है उसका सदु !पयोग करना। जैसे कोई मानव अग्नि की पूजा करना चाहता है, उसका सदुपयोग होना चाहिए। जैसे कोई मानव जल की पूजा करना चाहता है तो जल का सदुपयोग होना चाहिए। क्योंकि जल में प्राण है। वह नाना प्रकार के रसों का स्वादन कराता रहता है। इसी प्रकार माता वसुन्धरा को सदुपयोग में लाना है तो उसके खाद्य और खनिज को जान लेना चाहिए। वह उसकी पूजा है। पूजा का अर्थ है कि जो उसका सदुपयोग करता है। तो आओ मेरे पुत्रो आज का विचार तो मैं विशेष देने नहीं आया हूँ। विचार विनिमय ! क्या? प्रत्येक मानव राष्ट्र की चर्चा करता है, राष्ट्र के प्रति नाना प्रकार की उड़ान उड़ता है। हमने अपने पुत्र से कई समय यह वर्णन कराते हुए कहा कि संसार में ऐसे विवेकी निष्पद्य होने चाहिए। जैसे भारद्वाज, विश्वामित्र, वशिष्ठ जो ब्रह्मवेत्ता भी थे। विज्ञान में रमण करने वाले, राष्ट्रों का उत्थान करते रहते हैं। क्योंकि राष्ट्र वैसे ही ऊँचा नहीं बनता। राष्ट्र ऊँचा बना करते हैं चरित्रवानों से, महापुरुषों से जो विवेकी पुरुष होते हैं, वेद की ध्वनि को ले करके राष्ट्र में जो प्रसार करता है, राष्ट्र उसके आधार पर रमण करता है तो राष्ट्र महान् और पवित्र बन जाता है।

मेरे पुत्र महानन्द जी किसी किसी काल में प्रेरित करते रहते हैं। कहीं कहीं वेद का मन्त्र भी प्रेरणा देता रहता है। विचार विनिमय यही कि ऋषियों की सभा में जो विचार विनिमय गोष्ठी होती रही हैं, आज हम उसे प्रकट कर रहे थे। आज का विचार यही

कि भगवान राम, विश्वामित्र, लक्ष्मण, भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ लगभग तीन वर्ष रह करके उन्होंने नाना प्रकार के यन्त्रों को जानने का प्रयास किया। नाना यन्त्रों का निर्माण भी किया और अस्त्रों शस्त्रां की शिक्षा उन्होंने ग्रहण की और उन्होंने धनुर्याग किया। धनुर्याग का अभिप्राय क्या? जो विश्वामित्र ने किया। उस याग की रक्षा करने वाले राम और लक्ष्मण दोनों बनाए। क्योंकि रक्षा वही कर सकता है जो निष्पक्ष और श्रद्धामय बन करके। समाज को उन्नत बनाने के लिए अपने जीवन की आहुति दे देता है।

यह है बेटाआज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय क्या !? कि हमें विवेकी बनना होगा। मेरी प्यारी माताओं के श्रृङ्गार की रक्षा उस काल में होती है जिस काल में मुनिवरोंविवेकी पुरुष होते हैं !, महापुरुष होते हैं और वह विवेक से इस समाज की समस्याओं पर विचार विनिमय करते हैं और राष्ट्र को, राजा को अपनी वार्त्ता प्रकट कराते रहते हैं।

आओ मेरे पुत्रो हमारे यहाँ धनुर्याग हों और विज्ञान हों और विज्ञान की तरंगों में ! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा !मानव रमण करने वाला हो। यह है बेटा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। आज के विचार प्रकट करने का अभिप्राय यह कि मानव को अपने अपने विचारों में महान् बनना चाहिए। प्रभु का चिन्तन करते हुए वैदिक ध्वनि को, उसके ज्ञान और विज्ञान को सदैव अपने में धारण करना चाहिए। यह है बेटा आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। वेद ! श्री हरिसिंह : पाठ। निवास स्थान

१४ 18 11 1981 पुष्प 42 संकल्प शक्ति

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है उस महान् देव की महमा का

गुणागान गाते रहते हैं। हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के जगत् काल तक नाना वैज्ञानिक हुए परन्तु कोई वैज्ञानिक ऐसा नहीं हुआ जो इस परमपिता के ज्ञान और विज्ञानमयी जगत् को सीमाबद्ध कर सके। क्योंकि उस मेरे प्यारे प्रभु का इतना ! नितान्त, महान् विज्ञान है कि नाना वैज्ञानिक इसके ऊपर अपना विचार विनिमय करते रहे हैं। मुझे वह काल स्मरण आता है जिस काल में ऋषि मुनि अपनी स्थलियों करते थे तो बेटा एक परमाणु को विभक्त करने के पश्चात् यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक ही परमाणु ! में दृष्टिपात आने लगता था जैसे यह जड़ जगत् और चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आता है। सर्वत्र जगत् का जो चित्रण है, जिस प्रकार ऋषि मुनि अपने ध्यानावस्थित अवस्था में विद्यमान हो करके इस ब्रह्मांण का चित्रण करते रहे हैं।

आओ मेरे प्यारे मैं कुछ विज्ञान की चर्चा तो तुम्हें आज प्रकट करने के लिए नहीं ! आया हूँ। आज का हमारा जो वेदमन्त्र है उसके ऊपर कोई विचार विनिमय करना प्रारम्भ करें। जब हम इन वेदमन्त्रों के ऊपर विचार विनिमयकरना प्रारम्भ करते हैं तो सर्वत्र ब्रह्माण्ड की वार्त्ताएं, सर्वत्र ब्रह्माण्ड का ज्ञान और विज्ञान हमें दृष्टिपात आने लगता है। एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे। कुछ विज्ञान की तरंगों को वह अपनी शाला में दृष्टिपात कर रहे थे। एक सम वह ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारिणी शबरी के सहित अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरों की यात्रा में जाने लगे और लोक लोकान्तरों को दृष्टिपात करने लगे। यन्त्र विद्यमान हैं, यन्त्र में लोक लोकान्तरों के चित्र दृष्टिपात आने लगे। कहीं नाना सूर्य दृष्टिपात आ रहे थे, कहीं उस विज्ञानशाला में नाना चन्द्रमा दृष्टिपात आ रहे थे। कहीं नाना ध्रुव उसके अस्तित्व में दृष्टिपात आने लगे। परन्तु वह नाना प्रकार की निहारिकाओं में रमण करने लगे। उनके समीप कवन्धि भी विद्यमान थे। वह विज्ञानशाला में आकाश गंगा का दिग्दर्शन करने लगे। एक आकाश गंगाएं दृष्टिपात आने लगीं। इस ब्रह्माण्ड में इतनी अनन्त उन्हें निहारिका दृष्टिपात आने लगीं कि महर्षि भारद्वाज मौन हो गए और ब्रह्मचारियों से यह कहा, हे ब्रह्मचारियों यह ब्रह्माण्ड अनन्तता में दृष्टिपात आ रहा है। ! आज हम इसके ऊपर अन्वेषण करना यदि प्रारम्भ करने लगते हैं तो मुनिवरों सर्वत्र !

आज का हमारा पठन !ब्रह्माण्ड की आभाएं हमें स्मरण आने लगती हैं। परन्तु मेरे पुत्रो पाइन हमें नाना प्रकार की निहारिकाओं में नहीं ले जा रहा है। आज मैं तुम्हें एक ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ बेटा ऋषि मुनि विद्यमान हो करके ! अपने यहाँ नाना प्रकार का अन्वेषण करते रहे हैं। मेरी पुत्रियां अपने आसनों पर आज !विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरों की वार्त्ताएं स्मरण करने लगती थीं। आओ मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि मुनि अपने विद्यालय में विद्यमान हो करके नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की चर्चा करते रहे हैं।

मुझे स्मरण आता रहता है जब महाराजा हनुमान और उनके समकालीन गणेष जी जो महाराजा शिव के पुत्र कहलाते थे एक समय भयंकर वन में दोनों विद्यमान थे और विद्यमान हो करके वह विचार विनिमय करने लगे। विचार विनिमय क्या था? नाना प्रकार के यन्त्रों को जानने की इच्छा रहती थी। नाना प्रकार की जो मानव शरीर से आभा उत्पन्न होती थी, तरंगें उत्पन्न होती थीं उसके ऊपर, विचार विनिमय करने लगे। विचार विनिमय करते हुए वह दोनों महाराज शिव के द्वार पर पहुंचे। भगवान शिव ने उन दोनों से कहा, हे हनुमानतुम क्या चाहते हो !? उन्होंने कहा, प्रभु मैं सूर्य की ! किरणों की एकत्रित करना चाहता हूँ और उनके द्वारा मैं अन्तरिक्ष में गति करने वाले नाना प्रकार के वाहनों का निर्माण चाहता हूँ। यह वाक्य जब महाराजा शिव ने स्वीकार किया, गणेश जी भी उनके समीप थे। उन्होंने कहा, भयंकर वनों में महर्षि सोमकेतु ऋषि रहते हैं। सोमकेतु के द्वार पर चले जाओ। सोमकेतु के द्वार पर जाने के लिए भगवान शिव के चरणों को स्पर्श करके उन्होंने गमन किया और भ्रमण करते हुए सोमकेतु ऋषि के द्वार पर पहुंचे। महाराजा सोमकेतु ऋषि महाराज ने दोनों ब्रह्मचारियों को दृष्टिपात किया और उन्हें आसन दिया और कहा, कहो ब्रह्मचारियो तुम्हारा आगमन ! कैसे हुआ? उन्होंने कहा, प्रभुहम इस सूर्य की जो नाना पकार की किरणें हैं !, जो रात्रि को अपने गर्भस्थल में धारण कर लेता हैं हम उन किरणों को जानना चाहते हैं और उन किरणों से यानों का निर्माण करना चाहते है जो वायुमण्डल में गति करने वाले हों। महाराजा हनुमान ने कहा कि हम ने देवर्षि नारद और महात्मा ध्रुव का दोनों

का स्मरण किया है, दोनों के ऊपर अनुसन्धान किया है। हम उसको जानना चाहते हैं जो महाराजा ध्रुव और देवर्षि नारद दोनों विद्यमान हो करके नाना प्रकार के सूर्य लोकों के यानों का निर्माण करते रहे हैं और सूर्य की नाना प्रकार की किरणों से वह वाहन जो गति करते रहे हैं।

मेरे प्यारे इस वाक्य को श्रवण करके सोमकेतु ऋषि महाराज ने कहा कि यह तुम्हारी ! इच्छा क्यों हो रहीहै इस प्रकार की? उन्होंने कहा, प्रभु मानव का यह स्वभाव है कि ! मानव प्रत्येक वस्तु को जानकारी में लाना चाहता है। वह अपने मस्तिष्क का विकास करना चाहता है। हम भी अपने मस्तिष्क का विकास करना चाहते है। सोमकेतु ने कहा, हे हनुमानविकास करना यह !हे गणेशाय ब्रह्मः ! ह्रास है, ऋषि ने जब ऐसा कहा कि यह ह्रास है तो हनुमान बोले कि यह ह्रास किस प्रकार है? क्योंकि यह तो प्रभु की ! प्रतिभा है और प्रतिभा को जानने के लिए हमारा जन्म हुआ है। सोमकेतु ने कहा है, ब्रह्मात्माओं तुम विराजोह्रास इसलिए है कि मानव जो नाना विज्ञान में गति क !रना चाहता है, आंतरिक जगत् को बाहरीय जगत् में दृष्टिपात करना चाहता है उस मानव का मन और प्राण दोनों का विभाजन होता रहता है और मन और प्राण का जितना विभाजन हो जाता है उतना मानव अपनी साधना से दूरी हो जाता है। जब उन्होंने यह कहा तो महाराजा हनुमान और गणेश जी ने एक स्वर में कहा कि महाराज मानव ! प्रभु की सृष्टि को विचारने जब लग जाता है तो संलग्न हो जाता हे जो उसकी एक महान् साधना बन जाती है। यह जो मैं आज सूर्य की नाना प्रकार की किरणों को जानना चाहता हूँ, अपने में सग्रहीत करना चाहता हूँ, यह जो प्रभु की कृति है, प्रभु की महिमा है उसे मैं विचारने लगता हूँ और उसकी महिमा को निहारता रहता हूँ, यह प्रभु की महानता और प्रभु के आँगन में उसकी सृष्टि को जानना मेरी एक साधना बन करके रहेगी। जब सोमकेतु ने यह श्रवण किया तो उन्होंने कहा, मन का विभाजन और प्राण के विभजिन को तुम नहीं जान पाते। उन्होंने कहा, प्रभु जब हम संसार में आते हैं ! तो मन और प्राण दोनों का विभाजन होना स्वाभाविक बन जाता है। यह जो मानव शरीर का निर्माण हुआ है इसके अग्रिम में मन और प्राण दोनों का विभाजन हो जाता

है। प्रकृति तत्त्व है, ब्रह्म तत्त्व है, दोनों का सम्योग होता है, दोनों का मिलान होता है परन्तु मन और प्राण दोनों की विभक्त क्रिया बन जाती है। एक ज्ञान में और एक क्रिया में दोनों का विभक्त हो जाना अनिवार्य हो जाता है। सोमकेतु ने यह हा, जितना भी इस पर विचार जाएगा, मन और प्राण दोनें विभक्त होते चले जाएंगे। जब उन्होंने ऐसा कहा तो गणेश जी ने कहा, यह जो सूर्य की किरणों हैं जिनका द्यौ मडल से समन्वय रहता है क्या इसके ऊपर अन्वेषण करना, अनुसन्धान करना, इसको जानना क्या क्या प्रभु की प्रतिभा नहीं है? उन्ळोंने कहा, यह अवश्य है। परन्तु मन की विभक्तता होती चली जाती है, विभाजन होता चला जाता है। इसको समेटने के लिए तुम आन्तरिक जगत् में क्यों नहीं दृष्टिपात करते हो। सोमकेतु और इन दोनों का यह सम्वाद होता रहा। इस सम्वाद में, इसके सन्दर्भ में अप्रताम् ब्रह्मणः उन्होंने एक वार्त्ता प्रकट कराई। उन्होंने कहा, तुम्हें प्रतीत है एक समय मैं मध्य राष्ट्र में पहुंचा। मध्य राष्ट्र में एक सुकेता नामक ऋषि रहते थे। वह सुकेता नाम के ऋषि शान्ति से विद्यमान थे अपने आसन पर। उनकी पत्नी भी उनके समीप विद्यमान थी। मैंने दोनों महापुरुषों के चरणों को स्पर्श किया और सोमकेतु कहते हैं, मैंने उनको कहा तुम इतने महापुरुष हो करके भयंकर वन में क्यों विद्यमान हो? उन्होंने कहा, हम इसलिए विद्यमान हैं कुछ अन्वेषण कर रहे हैं, विचार विनिमय कर रहे हैं। उन्होंने कहा, क्या विचार विनिमय कर रहे हो? हम नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने की प्रतिक्रिया बना रहे हैं। उन्होंने कहा, यह प्रेरणा तुम्हें कहाँ से प्राप्त हुई उन्होंने कहा, यह माता पिता के द्वार से प्राप्त हुई है। एक समय मेरे पिता की अध्यक्षता में एक सभा हुई थी, मैं उस समय गृह में विद्यमान था, मेरा बाल्यकाल था। जब नाना विचार उस सभा में विराजे मानो ब्रह्मचरिष्यामि पर उनका विचार हो रहा था उस समय महात्मा भुंजु भी आए। महात्मा भुंजु ने यह कहा था कि यह जो ब्रह्म है, ब्रह्मचरिष्यामि है, यह ब्रह्म कहलाता है। तो मेरे पितर ने कहा कि यह ब्रह्मचरिष्यामि ब्रह्म तो नहीं है परन्तु ब्रह्म को जानने के इसमें अवशेष, परमाणु रहते हैं। दोनों के विचारों को श्रवण करके हम भयंकर वन में चले आए और उस ब्रह्म की आभा में रमण करना चाहते हैं जिन परमाणुओं से ब्रह्म की आभा में रमण करना

चाहते हैं जिन परमाणुओं से ब्रह्म को जाना जाता है। इन परमाणुओं के ऊपर हमारा सदैव अन्वेषण चलता रहता है। हम विचार विनिमय करते रहते हैं। तो उन्होंने यह कहा, इन परमाणुओं के जानने से हम लोकों की यात्रा भी एक सकते हैं। हम देवपुरी में देवताओं की सभा में जाकर के देववत् को प्राप्त भी कर सकते हैं और इन्हीं परमाणुओं को जान करके हम इस संसार की वस्तुओं को जान करे अपने में समेट करके अपने में निश्चल बन जाते हैं।
मेरे प्यारे जब सोमकेतु ऋषि ने यह वाक्य प्रकट किया तो सोमकेतु का अभिप्राय था ! कि मानव को इस संसार को जानने के पश्चात् अपने अन्तःकरण में, अपनी हृदयरूपी जो गुफा है, हृदयरूपी जो यज्ञशाला है इसमें नाना प्रकार का साकल्य दृष्टिपात करके उन साकल्यों का गुण अवगुण दोनों को अपने में दृष्टिपात करना चाहिए। ऐसा जब सोमकेतु ने इन दोनों को निर्णय दिया, उन्होंने कहा प्रभु हम जो जानने के लिए आए ! हैं उसे हमें निर्णय कराईए। हम तो केवल द्यौ लोकों से आने वाली जो आभाएं हैं, तरंगें हैं उन्हें अपने में दृष्टिपात करना चाहते हैं। उन्होंने जब यह वाक्य प्रकट किया तो सोमकेतु ने यह कहा, विराजो। वह विराजमान हो गए और वहाँ अन्वेषण होने लगा। अन्वेषण होते होते उन्होंने सबसे प्रथम यज्ञशाला का निर्माण किया। यज्ञशाला में क्योंकि अग्नि की सप्त जिह्वाएं होती हैं। उन सप्त जिह्वाओं को जानने के लिए उन दोनों का अन्वेषण होना प्रारम्भ हुआ सूर्य में जो नाना प्रकार की कान्तियां होती हैं उनको जानकर के उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था जो यन्त्र सूर्य की किरणों के साथ साथ अन्तरिक्ष में गति करने लगा।
आओ मेरे प्यारेआज मैं तुम !ुहें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं ऐसे भयंकर वन में चला गया हूँ जहाँ ज्ञान और विज्ञान की तरंगें, एक एक परमाणु को निगलता चला जाता है। उसकी आभा में रमण करता रहता है। शब्दों को अपने में ग्रहण करता रहता है। शब्दों के चित्रों की आभा उत्पन्न होने लगती है, वह यन्त्रों में उन्हें दृष्टिपात आने लगती हैं। आज मैं तुम्हें इन वाक्यों को इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ कि हमारे यहाँ ऋषि मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके ऊँची ऊँची उड़ान उड़ते रहे हैं

जिस उड़ान के उड़ने से मानव के जीवन में एक महत्ता प्रवेश कर जाती है। महत्ता की उत्पत्ति हो जाती है। नाना प्रकार के यान वायु में गति करने वाले अन्तरिक्ष में रमण करने लगते हैं। आज मैं तुम्हें विज्ञान की वार्त्ताएं प्रकट करने लगा हूँ। बेटा जाना ! हमें कहाँ था कहाँ चले गए हैं? हमें विचारना यह है। मैंने एक वेदमन्त्र की तुम्हें आख्याकिया प्रकट की है और वह वेद का मन्त्र कह रहा था मेरे प्यारे यह सूर्य की ! आभा इसका समन्वय द्यौ मण्डल से रहता है उस आभा में मानव रमण करता रहता है। मानव शब्दों के साथ में प्रायः रमण करता रहा है। तो आओ आज मैं तुम्हें एक दूसरे मार्ग पर ले जाने के लिए आया हूँ। आज का हमारा वेदमन्त्र जहाँ विज्ञान की चर्चा कररहा है, सूर्य मण्डल की चर्चा कर रहा है, वहाँ हम आत्मा की चर्चा करना चाहते हैं। प्रत्येक मानव आत्मा के सम्बन्ध में विचारता रहता है। आत्मा के सम्बन्ध में कि हमारी अन्तरात्मा में यह प्रकाश कहाँ से उत्पन्न हुआ है। मुनिवरोंदेखो !, प्रत्येक मेरी पुत्री, प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि मण्डल यह विचारता रहता है कि हमें आत्मवित्त बनना है, आत्मा को जानना है क्योंकि सबसे महान् आश्चर्य है कि इस मानव शरीर में चेतना वास करती है। आत्मा रहता है परन्तु भोला मानव अपने को नहीं जान पाता। चेतना कार्य कर रही है, परन्तु अन्तरात्मा को नहीं जाना जता। अन्तरात्मा कितना विशाल है। बेटा प्रत्येक मानव को इसके ऊपर अनुसन्धान करना चाहिए यदि ! मानव न होने के तुल्य माना जाता है। !अनुसन्धान नहीं करता है तो मेरे पुत्रो आओ मुनिवरोंमैं आत्मा की चर्चा करने ! लगूं तो आश्चर्य आता है। जो मानव अपनी निष्ठा बना लेता है निष्ठा में ओत प्रोत हो जाता है उस आभा में प्रवेश करने लगता है। मैं तुम्हें आत्म लोक की चर्चाएं संकल्प की चर्चाएं प्रकट करने लगूं तो आश्चर्य होने लगेगा। जब मानव अपनी विचारधारा को जिस दिशा में ले जाना चाहता हूँ जहाँ मैं विज्ञान की चर्चा कर रहा था वह सूक्ष्म विषय है। आज मैं विज्ञान के ऊपर अपनी टिप्पणियाँ देना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय क्या? मेरे पुत्रो मेरी प्यारी माता जब ! इस संसार के ऊपर विचाने लगती है तो वह माता इस संसार के ऊपर विचारती हुई अपने में प्रवेश कर जता है। आओ आज मैं तुम्हें त्रेता के काल में और ले जाना

चाहता हूँ। त्रेता के काल में मुझे स्मरण है एक पुत्रेष्टि याग हुआ था। राजा दशरथ के यहाँ पुत्रेष्टि याग हुआ तो उस याग में नाना देवता, बुद्धिमान महापुरुषों का आगमन हुआ। परन्तु जब याग की समाप्ति हुई, याग के समाप्त होने के पश्चात् वहाँ दक्षिणा का प्रश्न आया। मुनिवरों राजा ने अपनी शक्ति के अनुसार गऊं और मुद्राएं प्रदान कीं। ! परन्तु माता कौशल्या के हृदय में यह आकांक्षा उत्पन्न हुई कि मैं भी ब्राह्मण समाज को, बुद्धिमानों को गऊएं दक्षिणा में दूं। जब माता कौशल्या दक्षिणा देने के लिए तत्पर हुई, दक्षिणा देने लगी तो उस समय ऋषियों ने कहा, हे देवीहमें यह दक्षिणा चाहिए !, हमें तुम से मुद्रा नहीं चाहिएं। वह बोली तो महाराजक्या चाहते हो !? उन्होंने कहा हम संकल्प चाहते हैं। हमें यह प्रतीत हो रहा है कि इस समय अराजकता आ गई हैं अराजकता को समाप्त करने के लिए महापुरुषों की आवश्यकता रहती है। आज हम महापुरुषों को चाहते हैं। एक महापुरुष होना चाहिए इस संसा में। बेटा वहाँ राजा ! रावण के राष्ट्र में सूर्य उदय और अस्त नहीं होता था। इतना व्यापक राष्ट्र राजा रावण का बन गया था। ऋषि मुनियों ने कहा, हे देवी(शब्द ध्वनि से) ! हम यह चाहते हैं तुम्हारे गर्भस्थल से ऐसी संतान का जन्म होना चाहिए जिसकी आभा सूर्य की भांति मानो देखो शीतल और महान् बन करके अमृत को ,चन्द्रमा की भांति मानो देखो , बहाने वाली हो। और राष्ट्र का उत्थान करने वाली हो। महापुरुषों की रक्षा होती चाहिए। मेरे प्यारे माता कौशल्या ने इन वाक्यों को श्रवण किया और दक्षिणा प्रदान की उनके ! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब मैं विद्यालय !विचारों की पूजा करने लगी और कहा कि प्रभु में अध्ययन करती थी उस समय भी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे यह प्रकटकराया करते थे कि मानव को अपने जीवन में स्वतन्त्र रहना चाहिए। मानव को स्वतंत्रता से महत्ता प्राप्त होती है। इसलिए मैं महान् बनने के लिए बहुत समय से अपने विचारों में मानो नाना प्रकार की कल्पना करती रही हूँ। आज भी मैं कल्पना कर रही हूँ परन्तु आप मुझे प्रेरणा दे रहे हैं मैं उस प्रेरणा का अवश्य पूजन करूंगी यदि वह समय बलवती , बनेगा, मैं अवश्य पूजा करूंगी। बेटा यह वाक् उन्होंने श्रवण कर लिया। श्रवण करने ! बजे 7 रात्रि : भैंसी समय : चौधरी राजपाल ग्राम : निवास स्थान ... के पश्चात

कौशल्या जी ने भगवान राम को जन्म देने)के लिए किस प्रकार तपस्या की यह वर्णन पहले पुस्तकों में आ चुका है इसलिए उसकी पुनरुक्ति यहाँ नहीं की जा रहीं। (संपादक

१५ 20 11 1981 पुष्प 42 पुरातन काल व आधुनिक काल के ज्ञान विज्ञान

देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जो मानव संसार का मनोनीत एक ही देवता है, वह जो देव है, जिसकी आभा में प्रत्येक प्राणीमात्र बेटा कटिबद्ध हो रहा है। कोई ! भोग भोगने आया है, तो उसका भोग रहा है परन्तु उसको पान करने के लिए उसमें भोगवाद भी विद्यमान है, तो वह जो मेरा देव जिसकी व्यवस्था में बेटा यह संसार ! मानो वह इतना महान् है कि उसकी महानता प्र ,कटिबद्ध हो रहा हैत्येक प्राणीमात्र और लोक लोकान्तरों में निहित है। क्योंकि जितने भी प्राणी इस संसार में वास कर रहे हैं। चाहे वह पृथ्वी मण्डल में हो, चाहे मंगल में हों, किसी भी मण्डल में जो भी प्राणी रहता है, यह सब उस परमपिता परमात्मा की व्यवस्था है, और उसी का नियन्त्रण है, और उसी के गर्भ में यह संसार क्रीड़ा कर रहा है। मानो उसी में रत्त है जिस प्रकार माता के गर्भस्थल में हम जैसे शिशु उस परमात्मा की आभा को ले करके क्रीड़ाशील रहते हैं। इसी प्रकार यह जो ब्रह्माण्ड है यह उस परमपिता परमात्मा का गर्भाशय माना गया है। उसी के गर्भस्थल में यह सर्वत्र संसार, प्राणीमात्र बेटा उसमें क्रीड़ा कर ! रहा है और इस संसार में जो इस गर्भस्थल में जैसे विचारने लगता है, वही बन जाता है। यह बेटा तो त्याग और तपस्या में तुम परणित हो ,त्यागमयी बनना चाहते हो ! तो दर्शनों की आभ ,जाओ। यहाँ दार्शनिक बनना चाहते होा में रमण करने लगोगे। मेरे प्यारे जिसके ऊपर चिन्तन करने से ऐसा प्रतीत ,एक ऐसा भव्य गर्भाशय है ! होता है कि यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड मानो उसमें आभायित होता हुआ दृष्टिपात होता रहता है परन्तु और भी गम्भीर चिन्तन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि इस अन्तरिक्ष में

और प्रत्येक प्राणी श्वास के द्वारा इन परमाणुओं ,परमाणुवाद भरण हो रहा है !बेटा का आवागमन हो रहा है। आवागमन कर रहे हैं, परमाणु आवागमन में ही गति कर रहा है। ब्रह्माण्ड में, आभा में गति करने वाला जगत् है।
बेटामुझे स्मरण आता रहता है !, एक समय महर्षि सोमकेतु महाराज अपने आसन पर विद्यमान हो करके, अपने अन्तःकरण में जो चतुष्पाद वाला है, मानो अन्तःकरण में जो भी आभा गति कर रही थी उस आभा को वह दृष्टिपात कर रहे थे योग के द्वारा, मेरे प्यारेआत्मा में लीन हो करके और वह जो चतुष् वस्तुओं का अन्तःकरण है !, जिसे हम मन और बुद्धि कहते हैं, चित्त और अहंकार है, चित्त अहंकार जो इस चतुष् आभा , के गर्भ में जो परमाणु गति कर रहा है, ये मेरे प्यारे ,एक अन्तःकरणीय कहलाता है ! इसका समन्वय ,और वह अन्तःकरणीय जो परमाणु है, इस बाह्य जगत् से हो रहा है, बाह्य जगत् और आन्तरिक जगत् दोनों का समन्वय करता हुआ बेटा वह गान गा ! रहा है। वह गान गा रहा है और वह उद्गान गा रहा है, कैसा गान गा रहा है? वह उर्ध्वा को गति कर रहा है, उर्ध्वा में रमण कर रहा है।
तो विचार विनिमय क्या जैसे बेटा यज्ञशाला में यज्ञमान विद्यमान हो करके यज्ञन कर ! रहा है, और यज्ञन करके अपने शब्दों का वह स्वाहा कह करके अन्तरिक्ष में उसका समन्वय कर रहा है, उन तरंगों को अन्तरिक्ष में ओत प्रोत करा रहा है। उस साकल्य के सहित उसकी मानो उसकी आभा अन्तरिक्ष में रमण कर रही है। बेटा मुझे स्मरण ! आता रहता है। मैं सोमकेतु की चर्चा कर रहा था। महर्षि सोमकेतु क्योंकि ज्ञान और विज्ञान दोनों में पारायण थे। पारायण इसीलिए उच्चारण कर सकते हैं, क्योंकि जितना वह जानते थे, उनके समकालीन अन्य बहुत सूक्ष्म जानते थे, परन्तु वास्तव में यह पारायणता का जहाँ प्रसंग आता है। वहाँ बेटा हमें तो ऐसा प्रतीत होता है कि संसार ! में, इस प्रभु के राष्ट्र में, इस प्रभु के गर्भाशय में कोई भी मानव पूर्ण नहीं है। क्योंकि कोई भी मानव पारायण नहीं है। पारायण उसे कहते हैं जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड की आभा , को जानने वाला हो। तो कोई भी मानव इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड की आभा को नहीं जानता। मैंने तुम्हें बहुत पुरातनकाल में निर्णय देते हुए कहा था कि एक एक निहारिका ऐसी

है, इस ब्रह्माण्ड में चार अरब, बतीस करोड़ वर्षों के पश्चात् बेटा इस पृथ्वी मण्डल ! यहाँ पारायण उच्चारण करना !पर उसका प्रकाश नहीं आता। तो बेटा, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इन शब्दों को उच्चारण ही नहीं करना चाहिए, क्योंकि कोई भी मानव यहाँ संसार में पारायण नहीं है। महर्षि सोमकेतु के समीप जिस काल में बेटा हम जाते ! थे उनसे वार्त्ता प्रकट करते थे, तो सोमकेतु से यह उच्चारण करते थे कि महाराज ! आप तो विद्या में पारायण हैं। तो सोमकेतु स्वतः यह उच्चारण करते थे कि मैं कैसे पारायण हूँ। यहाँ संसार में तो प्रभु ही पारायण हो सकता है। जो कि विज्ञानमयी स्वरूप है। जिसका यह जगत् विज्ञान में दृष्टिपात आ रहा है परन्तु ब्रह्मणे लोकाः उस , प्रभु के राष्ट्र में नाना प्रकार की विद्याएं हैं, नाना प्रकार का ज्ञान और विज्ञान है। परन्तु जितनी मानव की आवश्यकता है, उतना वह इस संसार रूपी समुद्र में से प्राप्त कर लेता है। और यहाँ नाना प्रकार की धाराओं में नाना विद्याएं रमण कर रही हैं। मेरे प्यारे सोमकेतु कहते थे कि इस संसार की आभा को हम और गम्भीरता से रमण ! करते हैं, तो मानो देखो, निहारिकाओं में जाते हैंतो एक निहारिका को जानते हैं ,, दूसरी निहारिका उपस्थित हो जाती है जानने के लिए।

तो हमारे यहाँ बेटाअब तक जब से सृष्टि प्रारम्भ हुई है !, ऐसा उच्चारण किया जाता है, कि लगभग इस प्रभु की सृष्टि में जितने वैज्ञानिक हुए, मानो उनमें से ऐसे ऐसे ऋषि हुए हैं जो सात सौ निहारिकाओं तक पहुंचे। सात सौ निहारिकाएं अथवा यह उच्चारण , करिए कि सात सौ आकाश गंगाओं को जान पाए। परन्तु देखो, और सोमकेतु क्योंकि सात सौ आकाश गंगाओं में पहुंच गए थे, उनकी श्रुति पहुंची, उनका विज्ञान चला गया परन्तु उसके पश्चात् भी सोमकेतु कहते हैं कि अनन्त निहारिकाएं हैं।

महर्षि सोमकेतु मुनि महाराज का जो कर्म था, जब वह प्रातःकालीन वह याग करते थे। याग के पश्चात् उसमें जो तरंगें उद्बुद्ध होती थीं उन तरंगों को जानते रहते थे, उन तरंगों में वह रमण करते रहते थे, अपनी गति, अपनी श्रुति पहुंचाते और उसके पश्चात् उनको जान करके मानो देखो, उसके पश्चात वह यन्त्रों का निर्माण करते थे उसके , निहारिकाओं के दर्शन होते थे !पश्चात् यन्त्रों में जो मेरे प्यारे, उनमें लोक लोकान्तरों के

भी दिग्दर्शन करना, नाना सूर्यों को दृष्टिपात करना। मेरे प्यारे एक ऐसा ऋषि सोमकेतु ! ह्ुआ इस महानता तक पहुंचे। परन्तु सोमकेतु ऋषि महाराज एक आकाश गंगा में, वह पिचानवें खरब, नवासी अरब, उन्नचस हजार, बावन सूर्यों की गणना कर चुके थे। उससे ऊर्ध्वा में कोई वैज्ञानिक नहीं पहुंचा। जहाँ तक बेटा मुझे स्मरण है इस संसार ! का, बहुत सा जगत् और संसार स्मरण हैं। परन्तु ऐसा कोई ऋषि नहीं हुआ जो इतना विज्ञानमयी बन गया पहुंच गया हो परन्तु उन्होंने सात सौ ऐसी आकाश गंगाओं का भी दिग्दर्शन किया और उन आकाश गंगाओं में बेटा पिचानवें खरबों तक आकाश गंगाओं ! को इससे विशेष आकाश गंगाओं को अप्रतम मानो सूर्य गणित कर चुके थे।

तो मेरे प्यारेविचार विनिमय क्या !? आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। आज क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे। क्योंकि वह यागां ! ब्रह्मणा याग के सम्बन्ध में अपनी विवेचना देते रहते हैं। मुझे भी स्मरण है, कि मानव को याग करना चाहिए मृत्यु को !क्योंकि यागों में रमण करने वाला प्राणी बेटा , उसकी मृत्यु नहीं होती। मृत्यु ,प्राप्त नहीं होता। जो संसार में याग कर्म करता है कहते हैं ह्रासता को मृत्यु किसे कहते हैं? मृत्यु शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु नहीं है। मृत्यु कहा जाता है जो निराश होकर जीवन व्यतीत करता है वह मृत्यु में सदैव मरण करता रहता है और जो अपने जीवन को रहस्यमयी जानकर के इसका उपभोग , करता रहता है, संसार का, और याज्ञिक होता है बेटा उसकी मृत्यु नहीं होती। वह ! मृत्यु से पार होता है, क्योंकि शरीर को त्यागने का नाम हमारे ऋषि मुनियों ने मृत्यु नहीं माना हैं, क्योंकि ये शरीर जिसका निर्माण हुआ है, जिसका समन्वय हुआ है, उसका विच्छेद भी अनिवार्य है। क्योंकि जिस वस्तु का मिलान होता है, जिन परमाणुओं का मिलान होता है, उनका विच्छेद भी अवश्य होना हैं तो इसको ऋषिजन मृत्यु नहीं कहते। मृत्यु किसे कहते हैं? मृत्यु कहते हैं जो संसार में अपने जीवन को व्यतीत कर रहा है और अपने को शून्यवत् स्वीकार करता है कि मेरे में कोई रहस्य नहीं है। मानो वह अपने में अपनेपन को समाप्त किए हुए है। उदण्डता से रहने वाला मानव सदैव मृत्यु के मार्ग में रमण करता रहता है। अब जो मानव प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से

निवृत्त रहता हैऔर अपने क्रियात्मक कर्म में संलग्न रहता है ,, मेरे प्यारे याज्ञिक बना ! हुआ है अपने शब्दों को स्वाहा उच्चारण करके अन्तरिक्ष में गति करने वाला है। मानो अपने जीवन में मानो रस को !द्यौ लोक में अपने शब्दों में पहुंचाने वाला है। वह बेटा प्राप्त करता हुआ अमृत के आँगन में जा रहा है और जो अमृत को पान करता है उसकी मृत्यु नहीं होती।

तो आओ मेरे प्यारे आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार ! विनिमय केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की आभा में रमण करते रहें क्योंकि यह संसार, जितने भी यह लोक लोकान्तर आज तुम्हें वर्णित कराए हैं बेटा यह ! संसार उस परमपिता परमात्मा के गर्भस्थल में विद्यमान हैं और उसी के गर्भ में अपना क्रीड़ा कर रहा है, आनन्द में रमण कर रहा है अब मैं विशेष वर्णन करने नही आया हूँ। अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे। !

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् तन्मां हिरणय प्रहा दिव्यां गतप्रव्हा गतं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेवमेरे पूज्यपाद गुरुदेव !मेरे भद्र ऋषि मण्डल !, अभी अभी कुछ विज्ञान की चर्चाएं कर रहे थे। मानो विज्ञानमयी आभा को प्रकट कराते हुए, बहुत सा समय व्यतीत होता गया। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा करता हूँ क्या संसार जिस काल की मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, के चर्चा करते रहते हैं और हम सदैव अपने पूज्यपाद गुरुदेव के विपरीत चर्चाएं करते रहे हैं परन्तु ये सान्त्वना की चर्चाएं करते रहते हैं और हम क्रान्तिमयी चर्चाएं करते रहते हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई कालों में यागों की चर्चाएं कीं। आज भी जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है, वहाँ भी मैं यागों का चयन कर रहा था। परन्तु जहाँ तक कर्मकाण्ड का सम्बन्ध है, कर्मकाण्ड के ऊपर, यागों के ऊपर, बहुत सी आपत्ति चलती रही है। यागों के कर्मकाण्ड, कई प्रकार के होते रहे हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव नवासी प्रकार के यागों के कर्मकाण्डों की विवेचना हमारे यहां होती रहती थी। अश्वमेध याग का कर्मकाण्ड भिन्न है, गो मेध याग का कर्मकाण्ड भिन्न है और पुत्रेष्टि याग का कर्मकाण्ड भिन्न है। ऋषि मुनि परम्परागतों से ही, जहाँ वे विज्ञान

के ऊपर चर्चाएं करते रहे हैंवहाँ वे यागों के कर्म ,कारडों में भी संलग्न रहे हैं।
मेरे पूज्यपाद गुरुदेव नाना यागों के ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं। परन्तु महर्षि वशिष्ठ इत्यादि मुनि भी नाना प्रकार के यागों का चयन करते रहे हैं। परन्तु यागों फलस्वरूप प्रत्येक मानव फल की इच्छा करता रहता है और यह चाहता रहता है कि मैं यागकर्म करने जा रहा हूँ, उसका फल मुझे प्राप्त हो। परन्तु फल कैसे प्राप्त होगा? जब होगा, जब कि मानव के द्वारा उस कर्म की निष्ठा होगी, हृदय से उस कर्म के उद्गार पवित्र बन हो जाएंगे और जब तक उद्गार पवित्र नहीं बन पाएंगे तब तक यागों के फलों की प्राप्ति नहीं होगी। परन्तु मैं इस विषय को उच्चारण नहीं करने जाऊंगा। केवल यह याग जो आज हो रहा था मैं वहाँ के कर्मकाण्डों की चर्चा तो नहीं कर पाऊंगा। परन्तु यज्ञमान को मैं सदैव अपनी मनोकामना प्रकट करता रहता हूँ, क्योंकि मानव के हृदय के जो उद्गार होते हैं, हृदय शरीर रूपी यज्ञशाला में जो पवित्र विचारों का याग होता रहता है। उस पवित्र याग को सुविचार रूपी सुगन्धि यज्ञमान के हृदय में प्रवेश हो जानी चाहिए। क्योंकि हृदय जब ही पवित्र बनते हैं। आज भी मैं यह कहा करता हूँ कि हे यज्ञमान ! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। तेरे जीवन में सदैव महानता बनी रहे, और तेरे द्रव्य का सदैव सदुपयोग होता रहे और देवताओं का आह्वान करके, देवताओं का पूजन प्रत्येक गृह में हो। प्रत्येक स्थली पर रहना चाहिए, प्रत्येक आभा से रहना चाहिए जिससे गृह में सुगन्ध आती रहे, परन्तु जिस गृह में याग होता रहता है वहाँ दुर्गन्धि भी होती रही है परन्तु कोई वाक्य नहीं, ये तो समय समय की आभाएं सदैव मानव के जीवन को बाध्य करती रहती हैं, आज मैं इस आभा में जाना नहीं चाहता हूँ। मेरा केवल एक ही विचार है कि हे यज्ञमान तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। !
आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को, यह चर्चा करना चाहता था। आधुनिक काल का विज्ञान और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव परम्परा के विज्ञान की चर्चा करते रहे हैं। परन्तु आधुनिक काल के जब मैं विज्ञान में जाता हूँ, तो आज के विज्ञान में कुछ निहारिकाओं के ऊपर विचार विनिमय किया है। परन्तु कुछ वैज्ञानिक इस कार्य में लगे हुए हैं, कि इस संसार को जीवन नहीं मिलेगा। इस संसार के प्राणी को मृत्यु के मुखारबिन्दु में ले

जाने के लिए तत्पर हो रहे हैं। नाना प्रकार का परमाणुवाद, अणुवाद इस प्रकार की आभा में क्योंकि आग्नेय यन्त्रों में इतना पारायण होने जा रहा है कि अपने में वह इसे स्वीकार कर रहा है, अपने में ही आभायित हो रहा है कि मैं विज्ञान के द्वारा, राष्ट्र के राष्ट्रों को भस्म करना चाहता हूँ। परन्तु मैं यह कहा करता हूँ पूज्यपाद गुरुदेव से, हे पूज्यपादआधुनिक काल के वैज्ञानिक कुछ काल व्यतीत हुआ है !, इस पृथ्वी के वर्तमान वैज्ञानिकों की एक सभा हुई परन्तु उस में निर्णय हुआ कि यह जो वायुमण्डल अशुद्ध होने जा रहा है, परमाणुवाद विकृत हो गया है इसका आगे आने वाले समाज में परिणाम क्या होगा? तो एक वैज्ञानिक ने कहा कि कुछ वर्ष बाद ऐसा समय आएगा कि मानव को सांस लेने में कठिनाई होगी मानव बाधक होता चला जाएगा और मृत्यु तक आ सकती है। तो उस समय वैज्ञानिकों को क्या करना चाहिए? तो हमारे आधुनिकाल का जो विज्ञान है इसमें यह सूक्ष्मता है कि वह वेद का अध्ययन नहीं करता, यदि वैज्ञानिक वेद का अध्ययन करता क्योंकि विद्या वेद की है क्योंकि वेद की विद्या प्रकाश की है परन्तु जहाँ वह वेद का प्रसार करने लगें, उसका अध्ययन करने लगें तो वेदों की, पुनः वेदमन्त्रों में, वेद की विद्या में उन्हें कहीं याग का प्रकरण प्रतीत होता और याग का प्रकरण जब प्रतीत होगा तो वह जो याग भी करेंगे, परमाणु विद्या को भी जानेंगे तो कभी उनके समीप यह वार्त्ता आ ही नहीं पाएगी जब प्राणी प्राणी नष्ट हो जाएं। नष्ट क्यों हो जाए? क्योंकि इस विद्या में सूक्ष्मता रह गई है, क्योंकि विज्ञान सदैव इस मानवीयता में आभायित हो रहा है। मैंने जब बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को प्रकट कराया था परन्तु आज भी मैं उसी प्रकरण को ले करके अपने कुछ वाक् प्रकट करना चाहता हूँ क्योंकि हमारे यहाँ इस पृथ्वी मण्डल में जितने भी राष्ट्रवेत्ता हैं उनमें कर्त्तव्य का पालन नहीं रहा है। मैं यह उच्चारण कर सकता हूँ कि उनमें कर्त्तव्य का पालन नहीं रहा है और जब मैं उस राजा और राष्ट्र के विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ तो वहाँ के विद्यार्थी समाज और विद्यालयों में जो गुरु हैं वह कर्त्तव्यशील नहीं हैं। विद्यालयों में आचार्य इतना पवित्र हो कि वह ब्रह्मचारी के मस्तिष्क का अध्ययन करने वाला हो। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे यह कहा करते थे कई कालों में, ब्रह्मचारी का

मस्तिष्क का अध्ययन करने से ही उसके आचरणों की प्रतीति उसे हो जाती है। परन्तु इतनी विद्या होनी चाहिए। उस विद्या में जब आचार्य अपने ब्रह्मचारियों को, अपनी इन्द्रियों का ज्ञान नहीं करा सकता तो विद्यालय क्या रह गए हैं। मैं जब विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ तो ब्रह्मचारियों से यह प्रश्न किया जाए कि तुम्हारे शरीर में कितनी इन्द्रियां प्रभु ने निर्मित की हैं? तो आचार्य उससे विमुख है और ब्रह्मचारी भी उससे दूर हो जाता है। परन्तु यह क्या है प्रतिभा, अप्रतिभा? प्रतिभा इसे कहते हैं परन्तु मैं उसे अप्रतिभा कहा करता हूँ क्योंकि संसार में आज प्रत्येक मानव जब द्रव्य के ऊपर अपने जीवन को निर्धारित कर देता है तो वहाँ कर्तव्य का पालन नहीं होता। इसीलिए मैंने बहुत यह समाज की आभा की, यह मानव की सत्यता है। जो मानव, जो राष्ट्र द्रव्य के ऊपर अपने जीवन को निर्धारित कर लेता है। उस समाज में या उस राजा के राष्ट्र में या विद्यालयों में कर्त्तव्य का पालन नहीं होता और जहाँ कर्त्तव्य का पालन नहीं होता वहाँ मानवता की चर्चा करना एक अपवाद बन जाता है। इसलिए मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई बार प्रकट कराया। आज जब मैं विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ, वहाँ विज्ञान में रमण करने लगा हूँ तो परमाणु अग्नि शस्त्रों के तो अस्त्र शस्त्र निर्माणित हो गएं हैं। अरे, भोले वैज्ञानिको जब मानव के जीवन लेने वाले अस्त्रों ! शस्त्रों के निर्माण होंगे तो यहाँ उस समय तुम्हारा यह विज्ञान सफलता के मार्ग को कैसे प्राप्त कर सकता है? परन्तु अभी तो मानव केवल इसी में लगा हुआ है कि इस राष्ट्र का, दूसरे राष्ट्र, आज इस राष्ट्र में वैज्ञानिक इस आभा पर लगा हुआ है कि मैं एक दूसरे राष्ट्र में, राष्ट्र के ऊपर मेरा प्रभुत्व कैसे हो जाए? उसे प्रभुत्व की इच्छा है, कर्त्तव्य पालन की कोई इच्छा समाज को नहीं। परन्तु जब मैं यह दृष्टिपात करता हूँ, गृहों में प्रवेश करने लगता हूँ, विद्यालयों में जाता हूँ, वैज्ञानिकों की सभाओं में अर्पित होता हूँ तो वहाँ भी मुझे ऐसा ही प्रतीत होता है कि यह समाज कहाँ चला गया है? राष्ट्रवाद कहां चला गया राष्ट्रवाद के आँगन में स्वयं कृषि करके मानो देखो, अपने अन्न की पूर्ति करता था, वहाँ से मुक्त करके उसे अपने उदर की पूर्ति होती थी, आज का राष्ट्र समाज के वैभव को एकत्रित करके अपने उदर की पूर्ति कर रहा है। परन्तु यह समाज रजोगुण,

तमोगुण का सना हुआ जो राजा के द्वारा अन्न जाता है उसे राष्ट्र ग्रहण करता है तो राजा कर्त्तव्य का पालन नहीं करता। किसी भी काल में नहीं कर सकता।

अश्वपति के राष्ट्र में गुरुदेव

मुझे स्मरण है एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि चलो, आज हम अश्वपति के राष्ट्र में गमन करते हैं। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव और हम कुछ और महापुरुष थे। परन्तु राजा ने जब अन्न इत्यादि के लिए उच्चारण किया तो ऋषियों ने कहा कि राजन् ! हम तुम्हारा अन्न ग्रहण नहीं करेंगे क्योंकि तुम्हारा अन्न राजा महाराजाओं का जो अन्न वह रज ,हैोगुण और तमोगुण से सना हुआ होता हैं। परन्तु राजा ने नतमस्तक हो करके, चरणों में ओत प्रोत हो करके कहा कि प्रभु मेरा अन्न आप योगाभ्यास से, योग से मेरे अन्न को दृष्टिपात करके आप पान कीजिए, मेरा अन्न दूषित नहीं है। मेरे प्यारे ! जब मैं आज के ऋषि मुनियों के समाज को दृष्टिपात करता हूँ, यदि राजा भोजन के लिए उच्चारण कर देता है तो महात्मा अपने जीवन को धन्य स्वीकार करने लगता , हैं परन्तु कहाँ ऋषिजन ऐसे थे कि राजा के द्वारा स्पष्ट उच्चारण करते थे। कहाँ वह समाज स्वीकार करता है कि मेरे द्वारा तो अधिराज आते हैं, मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूँ , तो मैं यह कहा ,वह बलवती बन जाता है। आज जब मैं इन वाक्यों पर जाता हूँ करता हूँ कि यह ब्रह्म विद्या का अपमान है। यह ब्रह्म विद्या के ऊपर नाना प्रकार की त्रुटियां हैं। इसको हमें स्वीकार नहीं करना चाहिए। मैं आज इन वाक्यों में जाना नहीं चाहता।

वेद में विज्ञान

विचार विनिमय केवल हमारा यह, कि आज जब मैं विज्ञान के ऊपर टिप्पणियां करने के लिए तत्पर होता हूँ तो मुझे स्मरण आने लगता है कि आधुनिक काल का जो विज्ञान है वह अपने में बहुत ऊर्ध्वा में स्वीकार करता है। परन्तु जब भौतिक विज्ञान, आध्यात्मिक विज्ञान दोनों के ऊपर विचार विनिमय होता है। परन्तु मैं याग के ऊपर

टिप्पणियां करता रहता हूँ, आधुनिक काल का समाज यह कहता है कि वेद की जो विद्या है, वेद का जो मन्त्र है वह केवल कर्मकाण्ड तक सीमित है। वह केवल पूजा तक सीमित है परन्तु मैं यह उच्चारण करता रहता हूँ कि एक एक वेदमन्त्र के ऊपर जब चिन्तन करना प्रारम्भ करोगे तो इसमें ब्रह्माण्ड समाहित होता दृष्टिपात आएगा। परन्तु तुम्हारे द्वारा बुद्धि ही नहीं है, रहा यह कि दूसरी वेद के विपरीत जो वाणियां हैं, भाषान्तर है, उसी में विज्ञान को जाना है। अरे, वैज्ञानिकोउन्होंने नहीं जाना है !, विज्ञान वेद सर्वमयी विज्ञान उसके गर्भ में निहित रहता है क्योंकि वेद नाम चारों पोथियों को नहीं कहते। वेद नाम ज्ञान का है, प्रकाश का है। अन्तःकरण को शुद्ध बनाने वाला मानो देखो, विज्ञान कहलाता है, वह प्रकाश कहलाता है। पूज्यपाद कहा करते हैं जैसे बाह्य जगत् में सूर्य प्रकाश देता है और सूर्य के प्रकाश से मानव प्रकाशित हो जाता है। , ऐसे वेद रूपी जो सूर्य हैं वह मानव के अन्तःकरण को प्रकाशित करता रहता है। अन्तःकरण उसी से प्रकाशित होता हैऔर उस प्रकाश में जा करके नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान में रमण करता रहता है। ये नाना निहारिकाएं कहाँ से प्राप्त होती हैं? यह हमें वेद ज्ञान से होती हैं, पूजा का अर्थ क्या है? पूजा किसे कहते हैं? पूजा कहते हैं उपभोग को, जिस वस्तु की हम पूजा करना चाहते हैं, उसका उपयोग विशुद्ध रूप से करना ही उसकी पूजा कहलाती है। जैसे अग्नि है, अग्नि की हम पूजा करते हैं, यागों के द्वारा पूजा करते हैं, अग्न्याधान करते हैं, मन्त्र उच्चारण करते हैं। मन्त्र कहता है यह द्यौ लौकिक अग्नि है, द्यौ लोक से इसका समन्वय रहता है तो यह अग्नि हमारे जीवन का रक्षक है, अग्नि हमें प्रकाश में ले जाने वाली है। तो प्रत्येक वेद के मन्त्र को जब अनुसन्धानीय दृष्टि से दृष्टिपात करोगे तो नाना वैज्ञानिकों के रूपों से तुम धारण कर सकते हो।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह प्रकट करेंगे कि यह पुत्र क्या उच्चारण करने लगा है। परन्तु मैं यह कहा करता हूँ कि आधुनिक समाज आहार के ऊपर कितना अपने में अकृत स्वीकार कर रहा है। आज मैं पुरातन काल के यागों की चर्चा और मध्यकालीन चर्चाएं कर रहा था, परन्तु एक काल याग के ऊपर ऐसा हुआ कि अश्वमेध याग में अश्व के

अंगों की आहुति दी जाने लगी। जहाँ गो मेध याग का प्रकरण आया तो वहाँ गो नाम के पशुओं को आहुति में परिणित करने लगे। जहाँ अजयमेध याग का प्रश्न आया वहाँ अजा की आहुति देनी प्रारम्भ की परन्तु विशुद्ध काल आया महापुरुषों का। प्रभु की प्रतिभा में महापुरुष आते रहते हैंकिन्तु इसके पश्चात् अजय , मेध, गो मेध, नर मेध नाना प्रकार के यागों का चयन हमारे यहाँ होता रहा है। गो नाम पशु का भी है, परन्तु जब वैदिक साहित्य में पहुंचे तो गो नाम के बहुत से पर्यायवाची शब्द प्राप्त हुए। गो नाम यहाँ इन्द्रियों को स्वीकार किया गया है और इन्द्रियों के प्रत्येक अंगों की आहुति देना, हृदय रूपी यज्ञशाला में उनकी आहुति दी जाती है। परन्तु जहाँ यह प्रदीप्त की हुई अग्नि, इसमें गो अंगों की आहुति देना वाममार्ग सम्प्रदाय चले और नाना प्रकार के सम्प्रदायों में यागों की प्रतिभा नष्ट हो गई। उसका परिणाम क्या हुआ कि अज्ञान आ गया, याग करने समाप्त कर दिए समाज ने, समाज में अन्धकार आ गया। उसके पश्चात मानो देखो, नाना कुरूतियों में रमण करने लगा।

देखो, यहाँ अश्व नाम राजा का था। अश्व नाम यहाँ पशु का स्वीकार किया गया। यहाँ अजा नाम, यहाँ बकरी को स्वीकार किया। अजा हम पृथ्वी को कहते थे परन्तु वैदिक साहित्य में नाना प्रकार की आभाएं परिणित होती रही हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यदि मुझे समय देते रहे तो मैं इनकी व्याख्या कर सकूंगा। आज मुझे इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है कि मैं इसकी विवेचना करने लगूं। मैं केवल सूक्ष्म सूक्ष्म वाक् प्रकट करने जा रहा हूँ। विचार विनिमय क्या? कि आज मैं नाना प्रकार के यागों में जहाँ नर मेध जो नर की आहुति देना परन्तु यहाँ नरमेध मृत्यु के पश्चात् ही किया जाता है। वहाँ आहुतियों दी जाती हैं परन्तु वह अंगों को नष्ट करना नहीं है, यहाँ है समर्पित करना। समर्पित करने का अभिप्राय यह है कि हम जिस कार्य को करने जाएं उसमें हम तन्मय हो जाएं। वह कार्य जिसमें हमें सफलता प्राप्त होती चली जाए।

परन्तु मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से पुरातनकाल में भी यह वाक्य प्रकट किए थे कि आधुनिक काल का विज्ञान, मैं उस विज्ञान में जाना चाहता हूँ, मैं यागों की चर्चाएं करने नहीं आया हूँ। केवल विचार यह कि मैं केवल विज्ञान में आधुनिक काल का विज्ञान

मानव को निकृष्टता देता है, उनको त्रास देता रहता है। मैंने अभी अभी पूज्यपाद गुरुदेव से प्रकट कराया था कि कुछ काल हुआ एक सूर्य और चन्द्र, पृथ्वी के मध्य में चन्द्रमा की छाया, चन्द्र को सूर्य से छाया आ गई जिसको हम ग्रहण कहते हैं परन्तु उस ग्रहण के ऊपर आधुनिक काल के वैज्ञानिकों ने समाज को इतना त्रास दिया, इतना भयभीत में परणित कर दिया कि समाज अपने गृहों में परणित हो गया क्या इतना त्रास देना, आत्मबल को सूक्ष्म कर देना है। विज्ञान मानव को बल देने वाला है, विज्ञान मानव की आत्मा को बलिष्ठ बनाने वाला है। विज्ञान राष्ट्र के ऊपर अपनी आभा को प्रकट कराने वाला है। मैंने यह बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव को प्रकट कराया था। पुरातन काल का वैज्ञानिक इसके ऊपर इतनी त्रासता में नहीं आता। आज का मानव जब यह कहता है कि विज्ञान तन्तुओं से वायुमण्डल दूषित हो रहा है तो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह प्रकट करता रहता हूँ कि यह विज्ञान क्या है? जब इसमें इतनी भयभीतता आती है, जब इतना त्रास आता है। अरे, श्वास के ऊपर तुम क्यों चिन्ता करते हो। तुम्हें चिन्ता वह करनी है जहाँ तुम्हारा श्वास गतिशील बनता चला जाए, आत्म उन्नति होती चली जाए। यह समाज, यह राष्ट्र, यह विज्ञान इस विज्ञान से मानव की रक्षा होने वाली नहीं है। मानव की रक्षा उस काल में होगी जब विज्ञान और आध्यात्मिकवाद दोनों का समन्वय करने वाले विवेकी पुरुष होंगे। वैज्ञानिक विवेकी हों और आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी विवेकी हों। दोनों की विचार धाराएं एक तुलना में परणित होती हुई ज्ञान और विज्ञान में रमण करते हुए आध्यात्मिकवाद में प्रभु के गर्भ में प्रवेश होने वाली आत्मा भी होनी चाहिए। जिससे तुम्हारा समाज, तुम्हारा राष्ट्रवाद वेद के मार्ग को प्राप्त करके समाज को उन्नत बनाता रहे। यहाँ नाना प्रकार की रूढ़ियां इस प्रकार की हुई हैं जिन रूढ़ियों में विद्या से विहीन होना और अपने राष्ट्र के ऊपर उनके वैभव को स्वीकार करना, उसे अपने में अपनेपन को उन्नत बनाने के लिए द्रव्य की आभा में यह समाज परणित होता गया है। परन्तु ऐसा नहीं होना था आज वर्तमान में भी हो रहा है कि प्रजा के वैभव को संग्रह करना और समाज को अज्ञानी बनाना, समाज को मूर्खता में त्रास देना और भयभीत का त्रास देकर के इस समाज को अज्ञानता के पथ पर परणित

किया जा रहा है। परन्तु जब मैं इन वाक्यों में जाता हूँ, शिक्षालयों में जाओ तो इन्द्रियों का ज्ञान नहीं, विज्ञान में जाओ तो त्रास देने का प्रसंग आ रहा है। राष्ट्र में जाते हो तो वह प्रजा के वैभव को संग्रह कर रहा है। क्या यह समाज बन गया है।

मैं यह कहा करता हूँ कि समाज में मानवता होनी चाहिए मानवता कैसे आती है? मानवता उस काल में आती है जब वेद की तरंगों को अपनाना मानव प्रारम्भ करता है और उसकी आभा में रमण करने लगता है। केवल वेद की आभा इसे ही नहीं कहते कि हमने एक वेदमन्त्र को उच्चारण कर लिया है अथवा नहीं, कदापि नहीं। वेदमन्त्र के ऊपर अध्ययन करना और उसके अनुसार अपनी इन्द्रियों को अपने वशीभूत करने को उसे हमारे यहाँ वशीकरण कहा जाता है। आज हम अपनी अपनी आभाओं में परणित हो रहे हैं। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से अब आज्ञा पाने वाला हूँ क्योंकि मैं यह , उच्चारण करने के लिए पूज्यपाद गुरुदेवको निर्णय कराने के लिए आया हूँ कि आधुनिक समाज किस प्रकार का बन रहा है। हे मेरे देव वह काल प्रभु की आभा में किस ! काल में आएगा जब यहाँ महापुरुष उत्पन्न हो करके, भगवान मनु जैसे राजा आकार के, भगवान राम जैसे आ करके, राष्ट्र को विशुद्ध बना सकेंगे। मैं यह प्रार्थना करता रहता हूँ। मैं सदैव प्रभु से भी याचना करता रहता हूँ, हे प्रभु समय समय पर आत्मा ! तेरे राष्ट्र में आती रहती है, राष्ट्र को उन्नत बनाती रहती है। हे प्रभु आप कोई पुनीत ! आत्मा इस संसार में परणित कीजिए। जिससे यह आज का पृथ्वी का राष्ट्र विशुद्ध बनता चला जाए।

आज का वाक् अब मैं समाप्त करने जा रहा हूँ। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पा रहा हूँ। क्योंकि मैं यह उच्चारण करने आया था कि हे यज्ञमान तेरे जीवन का सौभागय ! अखण्ड बना रहे। तेरे गृह में सदैव सुगंधि आती रहे और यागों का चयन होता रहे, द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। यही देवताओं की पूजा है, जिससे द्रव्य का सदुपयोग होकर के धर्म के मर्म की वार्त्ता को जानने लगता है। अब मैं पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे महानन्द जी अपनी करुणामयी !आज मेरे प्यारे !ऋषिवर !

वार्त्ता सदैव प्रकट करते रहते हैं परन्तु उनके हृदय के जो उद्गार हैं वे एक महानता में परणित होते रहते हैं। हम सदैव अपने देव से प्रेमायुक्त हो करके वाक् प्रकट करते रहते हैं कि हे देव इस संसार को करुणामयी बनाइये। यह करुणामयी बन करके ज्ञान ! और विज्ञान दोनों का समन्वय होता हुआ यह समाज अपनी अपनी आभा में परणित होता रहे और वेद की आभा, वेद की जो पवित्र विद्या है उसको प्रकाशमयी स्वीकार करते हुए अपनी हृदय रूपी जो स्थली है, यज्ञवेदी है उसे पवित्र बनाना हमारा कर्त्तव्य बन जाता है। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने अभी अभी कुछ यागों के चयन की चर्चाएं कीं !। यागों का चलन, यागों की आभाओं में परणित होता रहता है। अश्वमेध, गो मेध यागों का वर्णन मेरे पुत्र ने अभी अभी प्रकट किया। समय मिलता रहेगा, इन यागों के कर्मकाण्डों की चर्चाएं भी करे रहेंगे। पुरातन काल में, जीवन का इन आभाओं में याग सदैव रमण करता रहा है। यागों का चयन कर्मकाण्ड की आभाओं में रमण करता रहा है। गो मेध, नर मेध, अश्व मेध नाना प्रकार के यागों का चयन परम्परागतों से हमारे और ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा हैं क्योंकि याग में हिंसा नहीं होती। याग मानव का, मोक्ष के द्वार का एक प्रथम द्वारा माना गया है, तो जहाँ प्रभु से मिलन हो वहाँ हिंसा कैसी, वहाँ हिंसा नहीं होती। इसलिए याग में हिंसा होना यह उचित्त नहीं है। यदि मेरे पुत्र ने जैसे कहा मध्यकाल के कुछ वाममार्ग वालों ने ऐसा किया है तो उन्होंने इस वेद के वाक्यों को जाना नहीं, इसके ऊपर अनुसन्धान नहीं किया। अनुसन्धान करना चाहिए, विज्ञान और आत्मिक विज्ञान दोनों का समन्वय होना बहुत अनिवार्य है क्योंकि विज्ञान का सदुपयोग उसी काल में हो सकता है जब कि दोनों का समन्वय हो। इसलिए जो भौतिकवाद है, भौतिक विज्ञान है, परमाणुवाद है, इस परमाणुवाद की सत्ता आध्यात्मिक विज्ञान के साथ रहती है। यदि इसके साथ परमाणु विज्ञान है, अग्नि विज्ञान है, आत्मीय विज्ञान इसके साथ नहीं है तो यह विज्ञान अपंग बन करके यह राष्ट्रों का घातक बन जाता है।

आज का यह विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है, याग कर्म महान् है, इसमें हिंसा नहीं है, हिंसा से रहित कर्म है। यह परम्परागतों से ही, अरबों वर्षों से ही, सृष्टि

के प्रारम्भ से ही यह कर्म महापुरुषों के मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है और क्रिया में आता रहा है। आदि ब्रह्मा इस याग को करते थे, ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने इस कर्मकाण्ड की रक्षा की। उसके पश्चात् हरितत गोत्र हुआ, उससे और भी नाना गोत्रों ने इस याग की महान् माना है। उद्दालक गोत्र ने विज्ञान और कर्मकाण्ड दोनों का समन्वय किया। आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है, समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं इन कर्मकाण्डों के सम्बन्ध में करते रहेंगे। आज मेरे पुत्र ने अपनी करुणामयी वार्त्ता प्रकट की है। उनके हृदय में सदैव समाज के उत्थान की चर्चाएं और करुणामयी राष्ट्र के ऊपर सदैव शोक प्रकट करते रहते हैं। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन होगा। स्थान 1989। 11 20 बजे। दिनांक 2 दोपहर : ग्राम बसेड़ा समय :

१६ 29 11 1981 पुष्प 42 कुक्कुट मुनि महारजा और कुम्भकरण सम्वाद

मेरे प्यारे इससे पूर्व शब्दों में हम उच्चारण कर रहे थे त्रेता के काल की वार्त्ता। ! राजा रावण के राष्ट्र की चर्चा कर रहे थे। महर्षि कुक्कुट मुनि महाराज और रावण का सम्वाद चलता रहा, उनकी विचारधाराएं प्रारम्भ रहीं। ऋषिवर यही कहा करते थे कि संसार में मानव का जन्म होता है, वह संसार के वायुमण्डल में आता है, अपना वातावरण बना लेता है उसी के अनुसार वह कर्म करने के लिए तत्पर हो जाता है। परन्तु ऋषि कहते थे कि उनका चरित्र महान् होना चाहिए जिससे राष्ट्र, समाज और मानव वैज्ञानिक तत्त्वों को जान करके अपने में अपनेपन को जान करके सागर से पार हो जाए। यह कहा करते थे कौन? ब्रह्मणः ब्रही कृताम् देवः। कुक्कुट मुनि महाराज जहाँ ब्रह्म की चर्चाएं करते थे, जहाँ ध्यानावस्थित होते थे, जहाँ वह आत्मा परमात्मा का मिलान करते थे वहाँ वह विज्ञान की चर्चा भी करते रहते थे।

जब रावण चर्चा कर रहे थे तो उनके सुधन्वा नामक वैद्यराज आ गए और राजा रावण के विधाता कुम्भकरण भी उनके समीप आ पहुंचे, चरणों को स्पर्श करके वह आसन पर विद्यमान हो गए। उन्होंने कहा, भगवन्लंका में आपका पदार्पण किस समय हुआ !? उन्होंने कहा, मुझे कई दिवस हो गएं हैं जब मैंने भयंकर वनों में से इस लंका में प्रवेश किया है, मैं यह दृष्टिपात कर रहा हूँ तुम्हारा यह लंका का जो चलन है, लंका के

वायुमण्डल की जो धाराएं हैं वह मेरे अन्तःकरण को छूती रहती हैं और उन्र्हें स्पर्श करता हुआ यह विचार विनिमय करता रहता हूँ कि वायुमण्डल अशुद्ध हो गया है। राजा रावण के विधाता कुम्भकरण विद्यालयों में ब्रह्मचारियों को, शिक्षार्थियों को, छात्रवत को विज्ञान की शिक्षा देते थे। विज्ञान की उनकी चर्चाएं चलती रहीं। कुम्भकरण जी बोले, प्रभुमैं हिमालय में सदैव अनुसंन् !धान करता रहता हूँ। मैं कुछ समय पूर्व हिमालय कन्दराओं में विद्यमान था। वहाँ मैंने कुछ वैज्ञानिक तत्त्वों से ऐसा दृष्टिपात किया है कि सूर्य से कुछ किरण आती हैं वह धातु पिपाद बनाती है और रसों का पिपाद बनाती रहती हैं। मेरी मन की इच्छा यह है कि यह जो स्वर्ण है यह धातुओं में सर्वश्रेष्ठ मा गई है। मैं इसमें सुगन्धि लाना चाहता हूँ। प्रभु आपका विचार जाना चाहता हूँ कि इसमें ! सुगन्ध आ सकती है अथवा नहीं। जब यह वाक्य महर्षि कुक्कुट मुनि ने श्रवण किया तो वह बोले, हे ब्रह्मणे कृताम, हे वैज्ञानिक कुम्भकरणातुम इसमें सुगन्ध ! लाना चाहते हो। सुगन्ध का अभिप्राय जानते हो किसे कहते हैं? हमारी दृष्टि में सुगन्ध कहते है सौन्दर्यत्त्व को। सौन्दर्य उसे कहते हैं जिसके जीवन में एक रसता रहे, एक रस रहे उस धातु के जीवन में एक सुगन्धि सदैव उत्पन्न होती रहती है। रहा यह कि मैं उस सुगन्ध से किसी धातु को जानना चाहूँ, वह उस धातु में से सुगन्ध का जन्म होता है, सो कोई संसार को धातु ऐसी नहीं है जिसमें सुगन्धि का प्रादुर्भाव होता हो। एक विशेष्ज्ञ प्रकार की गन्ध आती रहती है, विशेष प्रकार की एक कृतिभा आती है जिसका उनके जीवन से समन्वय रहता है। इसी प्रकार आज तुम स्वर्ण में सुगन्धि लाने के लिए इच्छा न प्रकट करो। क्योंकि स्पर्ण में सुगन्धि तो स्वतः ही होती है। उसका जैसा प्राकृतिक स्वभाव होता है वह उसी में रत्त रह करके उसी में उसी प्रकार की सुगन्धि आती रहती है। उसमें सुगन्धि तुम ला नहीं सकोगे। कोई भी वैज्ञानिक सृष्टि के आदि से अब तक नहीं हुआ है जो इसमें सुगन्धि को ला सके। तुम्हारा एक विचार बना हैं परन्तु यदि तुम प्राण स्वरूप को ऊर्ध्वा से जानो तो स्वर्ण में विशेष प्रकार की सुगन्ध स्वतः होती हैं परन्तु उसमें घ्राण की शक्ति होनी चाहिए।

मुनिवरोंयोगियो ने !, ऋषि मुनियों ने, ब्रह्मवेत्ताओं ने नाना प्रकार की धातुओं को योग

के द्वारा जाना। एक समय सोमकेतु महाराज, कुक्कुट मुनि कहते हैं कि हमारे जो सत्रहवें महापिता थे, सोमकेतु महाराज एक समय सब धातुओं को अपने समीप ला करके उसमें प्राण की आभा को परणित करा रहे थे तो उसमें एक विशेष प्रकार की सुगन्ध दृष्टिपात की क्योंकि इस मानव के घ्राण के द्वारा प्राण गति करता है और प्राण में नाना प्रकार की धातुएं गति करती रहती हैं। नाना प्रकार के परमाणु होते हैं जो पृथ्वी की आभा में रमण कर रहे हैं और उसका समन्वय प्राण से होता है क्योंकि प्राण ही संसार में सबको रसस्वादन प्राप्त कराता रहता है। वह विभक्त हो करके सबको रस देता रहता है। जब ऋषि ने यह वाक्य उच्चारण किया तो कुम्भकरण ने उनके चरणों को स्पर्श किया और उन्होंने कहा, धन्य है प्रभु मैं अन्धकार में था। इसलिए मुझे योगी बनना चाहिए क्योंकि ! योगसे यह वाक्य सिद्ध होगा। मैं विज्ञान से इन वस्तुओं को नहीं जान पाऊंगा। तो मुनिवरोंविचार विनिमय क्या !? कि जहाँ हमारे ऋषि मुनि विज्ञानवेत्ता थे वह वहाँ योगाभ्यास करते थे। प्राण की महान् क्रिया को जानते रहते थे। यह प्राण, अपान, उदान यह अग्रणानः आभा में रमण करते रहते हैं। परन्तु उन्होंने इस वाक्य को यहीं समाप्त कर दिया।

कुम्भकरण ने कहा, प्रभु मैं आपके द्वारा यह जानना और चाहता हूँ कि हम यदि इस ! प्राण की साधना करना चाहते हैं तो प्राएण की साधना कैसे करें? महर्षि कुक्कुट मुनि ने कहा, यदि तुम प्राण की साधना करना चाहते हो तो महर्षि भारद्वाज के द्वारा चले जाओ। वह तुम्हें इसका निर्णय दे सकेंगे। मेरा तो निर्णय केवल यही है कि संसार में वस्तुओं का विभाजन होता है। दो वस्तु संसार में दृष्टिपात आ रही हैं। एक विभक्त क्रिया जो विभाजन कर रही है और एक जो विभाजन हो रही हैं दोनों वस्तुओं का जिस भी काल में समन्वय हो जाता है उसी काल में योग की आभा उत्पन्न हो जाती है और योगेश्वर बनने के लिए तत्पर हो जाता है। क्योंकि यह जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड है चाहे वह मंगल मण्डल हो, चाहे सूर्य हो, नाना प्रकार की किरणों क्यों न हो, परन्तु उनमें जो धातु पिपाद आ रहा है, पृथ्वी पर आ रहा है, मण्डल में जा रहा है, सूर्य की किरणों में गति कर रहा है वह सब मनस्तत्त्व, प्राणतत्त्व ही गति कर रहा है जो इन दोनों का

समन्वय कर लेता है वही विज्ञान में पारायण हो जाता है। वही महान् बन जाता है। वह मृत्यु को विजय कर लेता है। संसार में प्रत्येक मानव मृत्यु से विजय होना चाहता है। तुम्हें यह प्रतीत होगा कुम्भकरण मानव जितना भी प्रयास करता है राजा के राष्ट्र ! में विज्ञान की उड़ान उड़ी जाती है परन्तु जहाँ ऋषि मुनि होते हैं वह योग की उड़ान उड़ते रहते हैं। मृत्यु से बचने का प्रयास करतेरहते हैं। विचारते रहते हैं कि मेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। ऐसा कौन सा सोमरस है जिसको पान करने से मानव मृत्यु से उपराम हो जाता है? मेरी प्यारी माता मृत्यु से उपराम हो जाती है। वह कौनसा सोमरस है जो ज्ञान के क्षेत्र में जाता है? ज्ञान से यही विचारता है कि परमाणुओं का मिलान हुआ है, इनका विच्छेद होना है। जो इस प्रकार की प्रतिक्रियाओं को अपने में विचारता है, चिन्तन करता है, वह मृत्यु के मूल को जान जाता है। मृत्यु क्या है? मृत्यु से पार होने के लिए मानव को संकीर्णता को त्यागना होगा, मृत्यु क्या है? संकीर्णता है, संकीर्णता में जितना भी मानव रमण करता रहेगा और व्यापकावाद उसके द्वारा नहीं होगा वह मृत्यु के गृह में, आँगन में रमण करता रहेगा। मृत्यु उसको निगलती रहेगी परन्तु जिस समय वह ज्ञान और विज्ञान की आभा को ले करके रमण करता है, व्यापकवाद को ले करके गति करता है, व्यपकवाद किसे कहते हैं? जो भी वस्तु मेरे द्वारा है वह सर्वत्र प्रभु की आभा है, उसकी महानता है। जो इस प्रकार का अध्ययन करता है वह इस अज्ञान रूपी अन्धकार को समाप्त कर देता है। महर्षि कुक्कुट मुनि महाराज ने यही कहा, हे कुम्भकरणयदि आज तुम महान् बनना चाहते हो तो द !ो वस्तुओं के समन्वय का नाम प्रकाश है और दोनों का विभाजन हो जाना ही अन्धकार का क्षेत्र कहलाता है। इसको तुम जानने का प्रयास करो। स्थान अजमल खां पर्क :, नई दिल्ली।

१७ 29 01 1982 पुष्प 40 महानन्द जी द्वारा आधुनिक शिक्षा प्रणाली

जीते रहोदेखो !, मुनिवरों आज हम !तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रां का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर

वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव जो यज्ञोमयी माना गया है जिसका यज्ञ ही आयतन माना गया है, उस देव की महिमा का हम गुणागान गाते चले जा रहे थे, क्योंकि यह जो ब्रह्माण्ड है यह एक प्रकार की यज्ञशाला है और इस यज्ञशाला में रमण करने वाला प्रभु है, अतः यज्ञशाला हीउस मेरे प्यारे ! प्रभु का आयतन माना गया है। वह उसका लोक है जिससे लोकम् ब्रीही कहा। परमपिता परमात्मा को कोई मानव दृष्टिपात करना चाहता है तो अपनी ही यज्ञशाला में, अपने मानव शरीर को एक यज्ञशाला के रूप में जाने और उस यज्ञशाला को जो किसी का आयतन बना हुआ है, वह ब्रह्म का शरीर माना गया है, वास करने की स्थली है।

तो मुनिवरों !हमें उस ब्रह्म की उपासना और उसको हमें दृष्टिपात करना है तो मुनिवरों ! उसके आयतन को अपने में गहण करो। अपने में धारण करते चले जाओ तो ब्रह्म तुम्हें प्रतीत होने लगेगा। उस ब्रह्म की आभा को और भी दृष्टिपात करते चले जाओ। सूर्य का प्रकाश नहीं, चन्द्रमा का प्रकाश नहीं है परन्तु तारा मण्डलों की एक छटा है, उसका प्रकाश है और उसका जो प्रकाश है उसके ऊपर नेत्रों से उनको निहारते रहो। बेटाउसके निहारने से प्रभु की प्रतिभा जो गति कर रही है लोकों में !, तारा मण्डलों में, वह तुम्हें कुछ काल के पश्चात् अनुभव होने लगेगी। उस ब्रह्म का आयतन जो यह ब्रह्माण्ड है अथवा लोक लोकान्तर हैं यह सूत्र रूप में, एक ब्रह्माण्ड में पिरोया हुआ दृष्टिपात आने लगेगा। मुझे बहुत सी ऋषि मुनियों की वार्त्ताएं स्मरण आती रहती हैं जिन्हांने इस संसार का साक्षात्कार अपने में दृष्टिपात किया क्योंकि प्रत्येक मानव को करना भी चाहिए क्योंकि हम उस प्रभु के राष्ट्र में हैं और जब हम प्रभु के राष्ट्र में हैं तो उस राष्ट्रपिता की जो नियमावली है हम यज्ञोमयी श्रेष्ठ कार्यों में करते ले जाएं क्योंकि यज्ञ को हमारे यहाँ सर्वत्र श्रेष्ठ कर्म माना है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके बेटा ऋषि ! मुनि इसी यज्ञ की प्रतिभा का गान गा रहे हैं। आदि ब्रह्मा ने भी इसका गान गाया। अंगिरस ऋषि मुनियों ने भी, सप्तऋषि भी होता बन करके याग करते रहे हैं। आज मैं

विशेष चर्चा तो प्रकट नहीं करूंगा, के वल कुछ प्रेरणाएं प्राप्त हो रही हैं।

मेरे प्यारे यहाँ याग के द्वारा विज्ञान को जाना जाता है। यहाँ याग के द्वारा सूर्य विद्या ! को जाना जाता है और याग से योगी बनते हैं। मानव अपनी नाना त्रुटियों को त्याग इ !करके एक महान् क्षेत्र में रमण करने लगता है। मेरे पुत्रोससे पूर्व शब्दों में हम सूक्ष्म वार्त्ताएं विज्ञान की प्रकट कर रहे थे। बहुत सूक्ष्म चित्रण हो रहा था। लोकों में अपने पूर्वजों के दर्शन चित्रों के द्वारा हमारे यहाँ ऋषि मुनि किया करते थे और उनका चित्रण करत ेअपने जीवन को महान् और पवित्र बनाने का प्रयास करते रहे हैं।

आज मेरे प्यारेमहानन्द जी भी दो शब्द उच्चारण करेंगे परन्तु उससे पूर्व संसार में !, अपनी आभा में रमण करते हुए परमपिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसको विज्ञानमयी स्वरूप स्वीकार करना चाहिए। क्योंकि परमात्मा एक सूत्र रूप में गति करता रहता है। जैसे माला है, माला में दो वस्तुओं का समावेश है। जैसे सूत्र में मनके पिरोएं हुए होते हैं और मनके और सूत्र के समन्वय होते ही माला बन जाती है। इसी प्रकार यह जो ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है यह जड़वत् प्रकृति और चैतन्य एक सूत्र दोनों के समन्वय होते ही तृतीय शब्द उत्पन्न हो जाता है जिसे हम सृष्टि कहते हैं अथवा रचना कहते हैं। तो हमें उस प्रभु के जो इस प्रकृति का सूत्र बना हुआ है, जड़वत् को सन्निधान मात्र से उसका क्रिया कलाप चल रहा है। के वल सन्निधान मात्र ही है। उस प्रभु का हम अपने से भी सन्निधान करते रहें तो हमारा जीवन महत्ता को प्राप्त होता हुआ शुद्ध स्वरूप आभा में मानव गति करने लगता है। तो आज मैं विशेष चर्चा प्रकट न करता हुआ, के वल यह कि हम परमपिता परमात्मा की उपासना करते चले जाएं और यज्ञोमयी श्रेष्ठ कर्म करते हुए देवताओं को प्रसन्न करते चले जाएं। तो अब हम अपने विचारों को विराम देना चाहते हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी अपने उद्गम विचार राष्ट्रीयता ! पर देते रहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी मेरे !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! पूज्यपाद गुरुदेव कुछ यागों की चर्चाएं कर रहे थे। परमपिता परमात्मा के सूत्रमयी विज्ञ्ञान की चर्चा करते हुए हमें मुग्ध कर रहे थे क्योंकि इनका परम्परागतों का जो

ज्ञान है और वह ज्ञान विज्ञान से गुथा हुआ रहता है परन्तु उसको धारण करने वाला मानव इस संसार में सूक्ष्म है क्योंकि हम भी जब उनके ऊपर उनकी विचारधाराओं पर विचार विनिमय प्रारम्भ करने लगते हैं तो हमारा एक ही परिणाम होता है कि हम मौन हो जाते हैं। जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है उस स्थली पर यागों का चलन दृष्टिपात कर रहे थे। हमारा अन्तर्हृदय प्रसन्न हो रहा था, उद्गान गाने वाला उद्गान गा रहा था और चित्त में प्रसन्नता हो रही थी। मैं अपने यज्ञमान याज्ञिक पुरुषों को सदैव यह कहा करता हूँ कि उनका मनोबल और गृह में संदुपयोग उसी प्रकार होता रहे और यज्ञमान की जो शुभ कामनाएं हैं वह पूर्ण होती रहें। उनके जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। वह अपने सौभाग्य को चाहते हैं कि हम लक्ष्मी का, इस द्रव्य का सदुपयोग करते हुए देवताओं का हूत देते हुए, देवताओं को प्रसन्न करते हुए हम अपने सौभाग्य की कामना करते हैं, हमारा सौभाग्य अखण्ड बना रहे। परन्तु आज जहाँ यज्ञ की चर्चाएं होती हैं वहाँ शिक्षा प्रणाली ने हमारे सम्मुख आ करके, उनका चित्र बन करके हमारे नेत्रों के समीप आती रहती है, मैं उस काल को दृष्टिपात करता रहा हूँ जिस काल में राजा के राष्ट्र में प्रत्येक मानव ज्ञान और विज्ञान की चर्चा करता रहा है वह ऐसा स्पष्टीकरण और अपने उद्बुत ज्ञान और विज्ञान की चर्चा करता रहा है समाज में।

मुझे पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञा से सोनक देश में त्रेतके तु राजा के यहाँ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पूज्यपाद गुरुदेव ने विद्यालय में किसी आचार्य के दर्शनार्थ के लिए मुझे प्रेरित किया। जब मैं सौनम राष्ट्र में त्रेतके तु राजा के राष्ट्र में जो विद्यालय था उसके द्वार पर पहुंचा तो वहाँ आचार्यों से कुछ चर्चाएं होने लगी। ब्रह्मचारियों ने अपनी वार्त्ताएं प्रकट कीं। जब ब्रह्मचारियों से शारीरिक विज्ञान के ऊपर चर्चाएं हुईं तो उन्होंने प्रसन्न हो करके सर्वत्रता का परिचय दिया कि हमारे शरीर में नाना स्थम्भ माने गए हैं। मैंने प्रश्न किया, ब्रह्मचारियो के मध्य में कि मानव के शरीर के कितने स्तम्भ होते हैं? उन्होंने चौबीस खम्भों का मुझे वर्णन कराया और उन चौबीस खम्भों में दस प्राण की आभाएं हैं और दस इन्द्रियां हैं, मन, बुद्धि, चित्त अहंकार का उन्होंने वर्णन किया। जब ब्रह्मचारियों ने उसका उत्तर मुझे भली भांति प्राप्त हो गया तो मैं प्रसन्न हो गया। ब्रह्मचारी

का चरित्र तब तक ऊचा नहीं बन सकता जब तक उसको अपने शरीर का बोध नहीं होता, उसको अपनी इन्द्रियों का बोध नहीं होगा, कौन कौन सी इन्द्रिय क्या क्या कार्य करती हैं?
किसकी प्रेरणा से कौन सी इन्द्रिय अपना क्रिया कलाप प्रारम्भ कर देती है? जब तक यह विद्यालयों में ज्ञान ब्रह्मचारियों को प्रदान नहीं करते, उनको नहीं प्राप्त होगा तो वह चरित्रवान प्राणी नहीं बन सकता। क्योंकि ब्रह्मचर्य विद्यालयों से प्राप्त होता है। विद्यालय में आचार्यजनों को चाहिए कि शरीर के सर्वत्र ज्ञान का उन्हें बोध कराएं। हमारा शरीर एक प्रकार की यज्ञशाला के रूप में माना गया है। जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान पत्नि सहित विद्यमान हो करके याग करते हैं, देवताओं को प्रसन्न करते हैं, देवताओं की आभा में अपने अपने देवताओं को निहारते रहते हैं इसी प्रकार जब मैं विद्यालय को ब्रह्मचार्यतम् वृताम वृहे विद्यालयों में याग होते और याग के पश्चात उन्हें उपदेश दिया जाता है, हे ब्रह्मचारियोंतुम महान् और पवित्र बनने के लिए !, अपने मानवीयतव को जानने के लिए और दर्शनों को जानने की इच्छा प्रकट करो। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मैंने ब्रह्मचारियों ! से वार्त्ता प्रकट की, उन्होंने शारीरिक विज्ञान सब प्रकट करा दिया और किस किस लोक से, किस किस मण्डल से, किन किन इन्द्रियों का समन्वय रहता है? किस काल में यह दसों प्राण बाहरीय जगत् और आन्तरिक जगत् में क्या क्या कार्य करते हैं? जब तक ब्रह्मचारी को यह बोध नहीं होता और वह क्रियात्मक नहीं होता, तब तक ब्रह्मचरिष्यामि हम ब्रह्मचर्य की रक्षा नहीं कर सकते।
मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे यह ज्ञान विज्ञान कराया, क्योंकि यह सब विद्याएं वेद से प्राप्त होती हैं। परन्तु वेदों का अध्ययन, वेदों की आभाएं और क्रियात्मक जीवन होना चाहिए। यह मैं त्रेतके तु राजा के यहाँ दृष्टिपात करता रहा हूँ सोनम राष्ट्र में। आधुनिक जगत् और वर्तमान का काल जब मुझे स्मरण आता है तो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के सम्मुख आ करके रुदन करता रहता हूँ और यह उच्चारण करता रहता हूँ कि आज जो गुरु शिष्य परम्परा है वह कहाँ चली गई? जब मैं आधुनिक काल के विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ, गुरुओं से यह प्रश्न करता हूँ कि शरीर के कितने स्तम्भ हैं? तो उत्तर

नहीं प्राप्त होता। ब्रह्मचारियों के मध्य में जाता हूँ तो वह अपवाद कह करके यह उत्तर देते हैं कि हम नहीं जानते। परन्तु वह अपवाद में ले जाते हैं तो इसका दोषी कौन है? यह दोषारोपण कहाँ से प्राप्त होता है? यह राष्ट्र की परम्परा में सूक्ष्मता है। हमें विद्यालयों को ऊचा बनाना है। विद्यालयों से राष्ट्रीय प्रभुता का जन्म होता है। आचार्य राष्ट्र की आभा उत्पन्न होती है। इसके ऊपर विचार होना चाहिए।

पुरातन काल के विज्ञान के युग में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय मुझे पूज्यपाद रेगणी भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में प्रवेश कराया। नाना प्रकार की विद्याओं को, भौतिकवाद को जानने का प्रयास किया। विज्ञान हमें निर्भयता देता है, अभय देता है कि वह भयभीत न हो, संसार में विजयी हों, परन्तु आज का विज्ञान क्या कर रहा है? समाज के आत्मबल को नष्ट कर रहा है। आज के विज्ञानवेत्ताओं के समीप जाते हैं तो आज का जो मानवीय दर्शन है उसके ऊपर चिन्तन न होता हुआ, उसके ऊपर मनन न होता हुआ वह समाज को भय दे रहा है। वह बार बार यह उच्चारण कर रहा है कि अब विश्व संग्राम होने वाला है। अब यह समाज नष्ट होने वाला है। अब प्रलय होने वाली है। जब आज का वैज्ञानिक इन वाक्यों को प्रकट करता है।

मैं मन ही मन में मग्न होता रहता हूँ, यह कहता रहता हूँ इस मानव समाज को क्या हो गया है? आज का वह मानव कहाँ चला गया है? आज का मानव त्रास क्यों दे रहा है समाज को? आगे आने वाला जो समाज है वह प्रभु के ऊपर आज का समाज नहीं त्याग रहा है क्योंकि आगे आने वाला, भविष्य को जानने वाला प्रभु है और प्रभु ने इस राष्ट्र का निर्माण किया है। वह इसके भविष्य को अच्छी प्रकार जानते हैं परन्तु मानव समाज अपने अपने सूक्ष्म सूक्ष्म चमत्कारों में आ करके, वह आवेश में आ करके समाज को त्रास दे रहा है। यह त्रास नहीं देना चाहिए। इस त्रास से मानव का आत्मबल समाप्त हो जाएगा। आत्मबल जब समाप्त हो जाता है तो संसार की मृत्यु हो जाती है, यह समाज नहीं रह पाता। तो इसीलिए मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ। मैं आज गुरुदेव को यह परिचय देने आया हूँ कि समाज को, अपनी राष्ट्रीयता को ऊचा बनाते हुए, विद्यालयों को ऊचा बनाते हुए चलना है क्योंकि विद्यालयों से ही विज्ञान का जन्म होता है।

वैज्ञानिक बनते हैं, उड़ान उड़ने वाले बनते हैं।

वैज्ञानिकों को यह चाहिए, समाज को ऊचा बनाना है तो समाज को ऊर्ध्वा दशा में ले जाएं और विज्ञान का सदुपयोग होने लगे। राष्ट्र में सात्विकता आ जाए विज्ञान के द्वारा। वह के से आती है? जब नाना चित्रावलियों का निर्माण राष्ट्र में हो जाता है। वैज्ञानिक कर ल ेते हैं परन्तु यह कोई आश्चर्य नहीं है। एक मानव का शब्द है। शब्द के साथ में चित्र है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कल उच्चारण कर रहे थे कि इतना ऊर्ध्वा में विज्ञान की जो एक यन्त्र में अपने महापुरुषों के अपने सौवें महापिता के यन्त्रों में चित्र आ जाते हैं। पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया एक रक्त के बिन्दु से जिस मानव का रक्त का बिन्दु है उसका साक्षात्कार हो जाता है। आधुनिक विज्ञान में जाता हूँ तो आज का वैज्ञानिक इकाई में रमण कर रहा है। परन्तु पूर्व के भारद्वाज मुनि की विज्ञानशालाएं, यहाँ महाराजा कुम्भकरण की विज्ञानशाला है, उन विज्ञानशालाओं को दृष्टिपात करके आज की विज्ञानशालाएं इकाई में रमण कर रही हैं।

पूर्व का मानव, पुरातन काल का मानव यहाँ से उड़ान उड़ता है, चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है। चन्द्रमा से उड़ान उड़ी है मंगल लोकों में चले गए। नाना लोकों का भ्रमण करते रहे। परन्तु एक यन्त्र जो बहत्तर लोकों में भ्रमण करने वाला और वह पुनः पृथ्वी मण्डल पर आ जाए। आज का वैज्ञानिक के वल चन्द्रमा तक पहुंचा है। कुछ कक्षों में यन्त्र रमण कर रहे हैं, कुछ मंगल के कक्ष में रमण कर रहे हैं आज के विज्ञान में। परन्तु पूर्व का विज्ञान इतना महान् रहा है कि सूर्य की परिक्रमा करने वाले यन्त्र थे और शनि की परिक्रमा करने वाला यन्त्र था।

आज का विज्ञान इस पृथ्वी के सूर्य के गर्भ में तेरह लाख पृथ्वियों को जान पाया है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तीस लाख का वर्णन किया है परन्तु आज का विज्ञान के वल शनि को प्रकाश देने के लिए पांच सूर्य कहता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इसके ऊपर टिप्पणी की और यह कहा कि शनि को बहत्तर सूर्य प्रकाश देते हैं तो आज का विज्ञान मुझे इकाई में दृष्टिपात आ रहा है परन्तु ऋषि मुनियों की विज्ञानशालाएं इतनी महान् रही हैं। आज जब हम वेद की धाराओं को नहीं अपनाना चाहते, वेद रूपी प्रकाश से

यह विज्ञान उत्पन्न होता है क्योंकि वेद एक प्रकाश है। ज्ञान का नाम वेद है और वेद रूपी प्रकाश को अपनाने वाला मानव ऊची उड़ान उड़ता है। विजानमयी उड़ान उड़ने वाला है, आज का विज्ञान ब्रह्मचर्य के ऊपर बल नहीं देता। ब्रह्मचरिष्यामि के ऊपर बल नहीं देता परन्तु पूर्व का वैज्ञानिक ब्रह्मचारी रह करके उड़ान उड़ता था इसीलिए मैं यह परिचय दे रहा हूँ कि आधुनिक जगत है मैं यह मानता रहता हूँ, मैंने पूज्यपाद गुरुदेव को प्रकट कराया। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आज का मानव अपने में बहुत दुःखित हो रहा है। आज का राष्ट्र, इस संसार का राष्ट्र अपने में बहुत दुःखित हो रहा है क्योंकि समाज को चरित्र नहीं दे रहा है। पूर्व के राजा वैज्ञानिकता को लेते हुए समाज को चरित्र देते रहे हैं। चरित्र विद्यालयों से निर्माणित होता रहता है। परन्तु आज का जो राष्ट्र है वह विद्यालयों से निषकृय ब्रह्मचारियों को जन्म दे रहा है। निष्कर्म समाज बन रहा है, ब्रह्मचर्य को नष्ट करने वाला। आज जब मैं विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ और ब्रह्मचर्य की चर्चा करता हूँ तो उसे अपवाद कह करके, उसको विनोद में कह करके दूरी कर देते हैं। परन्तु ब्रह्मचरिष्यामि इससे मानव को बोध होता है। संसार का ज्ञान और विज्ञान इसके द्वारा आता है।

मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह प्रकट कर रहा हूँ, हे गुरुदेव यह संसार कहाँ चला ! गया है? विज्ञान की तरंगों में, ज्ञान की तरंगों में संसार को जहाँ जाना हे, वहाँ त्रास दिया जा रहा है। आज मैं नाना पुरुषों की भविष्यवाणियों को भी श्रवण करता रहता हूँ। भविष्यवेत्ता कहते हैं कि इतने समय संग्राम हो करके यह समाज समाप्त हो जाएगा। यह वार्त्ताएं चलती रहती हैं क्योंकि समाज को जब त्रास ही करना हुआ तो क्यों न भविष्य की वार्त्ता प्रकट करके कह दिया जाए कि यह समाज समाप्त हो जाएगा। अरे, भोले प्राणियो यह समाज अपने समयज पर जाता रहेगा। प्रभु का चक्र चलता रहेगा। परन्तु तुम अपने अशुद्ध वाक्यों को प्रकट करके समाज को त्रास क्यों देते हो? इस वाक्य को कोई उच्चारण नहीं करता है कि ऐसे त्रास नहीं देना चाहिए। इससे मानव का आत्मबल समाप्त होता है। आत्म गौरव यह कहता है कि मानव को साहसी रहना चाहिए, अपने में सन्तुष्ट रहना चाहिए। समाज को सन्तुष्टि देता चला जाए। तो जहाँ यह वाक्य

वेद के वाक्य कहते हैं वहाँ इस समाज को ऊचे बनने के लिए अपनी मान्यताओं के ऊपर गम्भीरता से विचार विनिमय करना चाहिए।
जहाँ मैं शिक्षा प्रणाली की चर्चा कर रहा था, यह राष्ट्र की सूक्ष्मता है। राष्ट्र इसके ऊपर विचार नहीं कर रहा है कि हमारा मानव, हमारी आगे आने वाली जो सन्तति है, समाज है वह कहाँ जा रहा है? यहाँ समाज का आहार और व्यवहार अशुद्ध बनता जा रहा है। दूसरे के रक्त को पान करने के लिए मानव अपने में गौरव स्वीकार करता है। जब शुद्ध आहार की चर्चा करते हैं तो कहते हैं कि वह समय तो वृद्ध हो गया है, वह समाज समाप्त होता चला गया। आज का मानव कहताह ै कि वह चन्द्रमा में चला गया है। चन्द्रमा में जाना कोई आश्चर्य नहीं। सूर्य में जाना भी कोई आश्चर्य नहीं। मंगल में जाना आश्चर्य नहीं है क्योंकि हमारे पूर्वज मंगल मण्डलों में रह रह करके और उन्होंने शिक्षा पा करके विज्ञान को प्रसार किया परन्तु इस समाज को, मानव को चरित्र देना चाहिए। मानवीय दर्शन देना चाहिए। मानव दर्शन तब प्राप्त होता है जब विद्यालयों में आचार्य तपे हुए होते हैं। विद्यालयों में आचार्य सर्वत्र आयुर्वेद की विद्या को जानने वाले और उनके द्वारा मानवीय दर्शन होना चाहिए और उसको क्रियात्मक देना चाहिए तो यह समाज ऊचा बन सकता है।
मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यही कहा करता हूँ कि भगवन् वह समय दूरी चला ! गया है जब अश्वपति के कहाँ शिक्षा देते रहे। आज का समाज तो त्रासी बन गया है। आत्मा को सूक्ष्म बना रहा है, उसके बल को नष्ट कर रहा है। अब मैं विशेष चर्चा प्रकट नहीं करूंगा। पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊगा। परन्तु विचार यह कि हम अपने विद्यालयों को, अपने गृह को अपनी पुत्रियों को महान् शिक्षा देते हुए हम गृहों में सुन्दर याग करते रहें। क्योंकि शिक्षा देना भी एक महान् याग है जिससे मानव का आतमबल ऊँचा बनता है। विद्यालयों में पुत्रियों को महान् बनाना, शिक्षा दिलाना, आयुर्वेद की विद्या माताओं में होनी चाहिए जिससे अपने पुत्र का निर्माण माता मल्दालसा की भांति अपने गर्भस्थल में कर सके । इस प्रकार का राष्ट्रीय नियम हो तो यह समाज पूर्व की भांति, ऊचा बन सके अन्यथा मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह कहा कि इस समाज

में धीमी धीमी अग्नि प्रचण्ड हो रही है। वह समय आने में दूरी नहीं है जब अपने हृदय की अग्नि से ही यह मानव अपने में समाप्त होता चला जाएगा। वह समय दूरी नहीं है। यह समाज धीमी धीमी अग्नि के समुद्रों के तट पर विद्यमान हो रहा है। विचारधारा में विकृतता आ गई है। जब इस प्रकार की विचारधारा बन जाती है तो समाज में अग्निकांड प्रायः होते रहते हैं। आज का जो राष्ट्र, समाज, विद्यालय यह समाज को ऊची जगह नहीं दे सकते। विज्ञान त्रासता में परणित हो रहा है। आज का वाक् अब मैं समाप्त करने जा रहा हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाता हुआ आज का जो यज्ञमान जिसे मैं दृष्टिपात कर रहा था, हे प्रभु इनकी मनोकामना पूर्ण हो। उनका सौभाग्यी जीवन बना ! रहे। सौभाग्य अखण्डता को प्राप्त होता रहे। इसके पश्चात् अब हम अपने विचरों को विराम दे रहे हैं।

मेरे प्यारे! ऋषिवर महानन्द जी ने अपने कुछ विचार प्रकट किए। !आज मेरे प्यारे ! उन विचारों में राष्ट्रीयता और मानवता की प्रतिभा विद्यमान थी। विज्ञान की वार्त्ताएं परम्परागतों से ही, मानवीय मस्तिष्कों में रही हैं क्योंकि विज्ञान एक महानता को ले जाता है। परन्तु इन्हांने कुछ वाक्य ऐसे प्रकट किए जैसे विद्यालयों में मानवीय दर्शन का न रहना यह सौभाग्य नहीं, यह दुर्भाग्य कहलाता है। निर्माण श्रृंखला जब समाज से चली जाती है तो समाज में वर्ण श्रृंखला आ जाती है। निर्वाचन जितने भी होते रहे हैं वह सब विद्यालयों में होते रहे हैं। यह जो वर्ण व्यवस्था का निर्माण, राष्ट्रीयता का निर्माण होना, आचार्यों का निर्माण होना यह सब विद्यालयों में प्रायः निर्माण होता रहा है। जितनी भी वर्ण व्यवस्था प्रणाली है उसमें कौन ब्रह्मचारी ब्राह्मण बनेगा? कौन वैश्य बनेगा? कौन क्षत्रिय रक्षा कर सके गा और जो इन तीनों कर्मों से वंचित्त रहता है उसको शूद्र संज्ञा प्रदान की जाती, जो शिक्षा अध्ययन नहीं कर सकता वह सेवक बन करके अपने जीवन को व्यतीत करता है क्योंकि वह पठन पाठन में अधूरा है। इसी प्रकार हमारे यहाँ निर्माण होते रहे। भगवान मनु ने इस राष्ट्र को, समाज को एक महान् दिशा दी और उस महान् दिशा का परिणाम विचारक पुरुषों के द्वारा हुआ। परन्तु वह विचारक न रहने से समाज में, विद्यालयों में निर्वाचन न रहना समाज का यह वर्ण

शृंखला की एक प्रारम्भिकता हो जाती है। इसीलिए जितने निर्माण हैं वह सब विद्यालयों में शिक्षा के माध्यम से होते हैं।
आज का वाक् यह कह रहा है कि हम परमात्मा की उपासना करते हुए अपने जीवन को सार्थक बनायें। आज मैं भी जैसा महानन्द जी ने कहा, हे यज्ञमान तेरे गृह में ! द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। गृह में द्रव्य का सदुपयोग होना ही स्वर्ग माना है। आज कोई मानव स्वर्ग की कल्पन ा करता है तो द्रव्य का दुरूपयोग होना नरक है और द्रव्य का सदुपयोग होना स्वर्ग है। मानव द्रव्य के द्वारा याग करता है। दर्शनों का अध्ययन कर रहा है। देवताओं की सभा में, बुद्धिमानों की सभा में परणित हो रहा है और अपने कार्य कुशल में भी महत्ता है। तो वह द्रव्य का सदुपयोग हूत कर रहा है, अतिथि यज्ञ कर रहा है, उसी द्रव्य के द्वारा वह राष्ट्र को एक महान् दिशा दे रहा है। यह सब स्वर्ग की आभा कहलाती है। द्रव्य का दुरूपयोग होना जितने भी अचरित्रवादी कर्म हैं। द्रव्य का दुरूपयोग होने से समाज उसको धिक्कारता है और उसको नारकिक कहताह ै। उसका अपना अन्तरात्मा भी उसको नारकीय कह रहा है। एक मानव सुरापानी है तो उसका अन्तरात्मा भी उसे धिक्कार रहा है। एक मानव द्रव्य के बल पर दूसरों के सतीत्व को नष्ट कर रहा है तो अन्तरात्मा उसे धिक्कार रहा है। उस आभा को वह कहाँ से प्राप्त करेगा? दूसरे के द्रव्य को हनन करके उसका दुरूपयोग करता है तो उसका अन्तरात्मा धिक्कारता है। इस अन्तरात्मा की वार्त्ता को माना ही देवता बनना है। अन्तरात्मा की प्रेरणा को स्वीकार करना ही मानव को देवपुरी में जाना है। उसकी दिशा देवताओं के मार्ग को चली जाती है। प्रभु ने जीवन दिया। शरीर का निर्माण किया किसने? प्रभु ने माता के गर्भस्थल में किया है। माता के गर्भस्थल में निर्माण हुआ। माता को यह प्रतीत नहीं है। गर्भस्थल में पुत्र होगा या पुत्री। माता उससे वंचित्त है। वह वंचित्त क्यों हैं? क्योंकि माता ने उसका निर्माण नहीं किया, माता उसे भावना दे सकती है परन्तु उसका निर्माण नहीं कर सकती। बुद्धि का निर्माण मुझे कहाँ करना है? मुझे कौन सी नस नाड़ी कहाँ निर्माणित करनी है? इंगला, पिंगला, सुषुम्णा नाड़ी कहाँ से चलती है और कहाँ समाप्त होती है? ब्रह्मरन्ध्र कहाँ रहता है। माता यह नहीं उच्चारण

कर सकती, विचार दे सकती है इसलिए इसका निर्माण किसने किया है? माता के गर्भस्थल में प्रभु ने किया है। इसीलिए जो प्रभु ने निर्माण किया है। स्वर्ग की कामना, वेद का प्रकाश दिया है उस प्रकाश में रहना और द्रव्य का उपार्जन करना, उसका सदुपयोग करना यह उसका स्वर्ग बन जाता है। तो बेटा यह है आज का वाक्। अब ! मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं हम कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब धर्मपाल सिंह सुआहेड़ी .चौ : वेदों का पाठ होगा। निवास स्थान।

१८ 07 10 1982 पुष्प 40 राष्ट्र सुन्दर के से बनता है?

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हा !रे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस यज्ञोमयी, आभायमी, श्रोत्रमयी, आनन्दमयी महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी हैं। यज्ञ जिसका आयतन माना गया है वह उसको नियमित कर रहा है, वह उसको गति दे रहा है, वह उसका गृह है। इस प्रकार सर्वत्र ब्रह्माण्ड उस मेरे देव परमपिता परमात्मा का आयतन माना गया है। जैसे मानव का शरीर उस आत्मा का गृह है वह उसे गति दे रहा है, वह उसका आयतन माना गया है, उसी की प्रतिभामयी कहलाता है। मेरे प्यारे वह प्रभु यज्ञोमयी है। यागों का चलन बहुत ऊर्ध्वा में रहा है। ! क्योंकि प्रत्येक प्राणीमात्र उस याग की आभा में सुगन्ध को पाते हुए, अपने को सुगन्धित बनाते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करता रहा है।

परन्तु आज का हमारा वेद का मन्त्र यज्ञों के नाना प्रकार, उनका ओजस्वी, तेजोमयी रूप का वर्णन कर रहा है। वेदमन्त्र में कोई ऐसा मन्त्र नहीं है जो परमपिता परमात्मा की महिमा से ओत प्रोत न हो। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र में भौतिकवाद, भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान निहित रहता है। क्योंकि यह जो व्यवहारिक मानव का ज्ञान है यह मानव को पवित्र बना देता है। परन्तु जब यह भौतिक विज्ञान में गति करता है तो भौतिक अणु परमाणुओं को एकत्रित करके यह नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण

और राष्ट्र को शक्तिशाली बनाता है। परन्तु एक आध्यात्मिक विज्ञान है जो मेरे प्यारे ! प्रत्येक मानव आध्यातिमकवाद की कल्पना भी करता रहा है और ऊची उड़ान भी उड़ता रहा है। आध्यात्मिकवाद में मानव का एकही लक्ष्य है कि मैं मृत्युञ्जय बन जाऊं मृत्युञ्जय बनने की कल्पना उसमें वह विश्वसनीय हो जाता है और यह चाहता है कि आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं जिसमें मानव को मृत्यु की इच्छा न रहे। मृत्यु से वह निडर हो जाए और परमापिता परमात्मा की छत्र छाया में जाने के पश्चात् यह मानव मृत्यु से उपराम होता है। परन्तु हमारा वेदमन्त्र यह कहता है हे याज्ञिक पुरुषो तुम ! आध्यात्मि, भौतिक और व्यवहार सबको जब तक उन्नत नहीं करोगे तब तक तुममें निर्भयता नहीं आएगी। तुम निर्भय बन ही नहीं सकते जब तक हे याज्ञिक पुरुषों तुम्हारे हृदय में इस संसार को यज्ञ रूप में नहीं स्वीकार करोगे चाहे वह किसी भी प्रकार का याग क्यों न हो। जिसमें मानव अपने में अहिंसा में परणित होता हुआ अपने जीवन को महान् बनाता चला जाए। हिंसा का जो प्रारम्भ होता है, उसका जो जन्म होता है वह वाणी से होता है। इसलिए याज्ञिक पुरुषों को कहा कि अपनी वाणी को महान् और पवित्र बनाओ। हे याज्ञिक पुरुषोतुम अपनी वाणी को उद्गारता में परणित कर दो !, सत्यवादी बन करके और तुम अहिंसा परमो धर्मो बनो। तुम्हारा जीवन महान् बनेगा। परन्तु जब हिंसा उसके हृदय में वास कर जाती है तो जितने उसके हिंसक विचारधारा, आहार, व्यवहार वाणी में कटुता सब उसके जीवन को नारकीय बना देते हैं। तौ मानव को अपने ऊपर अनुसन्धान करना है, यही इस चरित्र की आभा में आता है।

बेटाइससे पूर्वकाल में हम यह प्रकट कर रहे थे कि चरित्र !, जीवन ऊचा होना चाहिए। राष्ट्र ऊचा जभी बनता है, जब विवेकी पुरुष, चरित्रवान मानव राजा के राष्ट्र में बुद्धिमान और व्यवहार में कुशल होते हैं। वह राष्ट्र की रक्षा किया करते हैं। समाज का जन जीवन उनसे निर्माणित होता है। तो आज मैं विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ, मेरे प्यारेमहानन्द जी की बड़ी प्रेरणा रहती है !, यह अपने उद्गार प्रकट करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। हम अपने वाक्यों को विराम देना चाहते हैं। अब मेरे प्यारे !

महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आज यह हमारी !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! आकाशवाणी जिस स्थली पर जा रही है वहाँ यागों काचयन और उनकी सम्पन्नता रही है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी कुछ यागों के सम्बन्ध में चर्चाएं कर रहे थे, चरित्र के सम्बन्ध में विवेचना दे रहे थे। इनका नित्य प्रति जो उद्गार प्रकट होता रहता है वह मानवीय समाज के लिए और राष्ट्र के उत्थान के लिए देते रहते हैं। जहाँ आता है प्रसंग आध्यात्मिकवाद का, आध्यात्मिक जो वाद है वह मानव की मौलिक सम्पदा कहलाती है परन्तु वह मौलिक सम्पदा इसलिए क्योंकि मानव अपनी अन्तर्रात्मा को जानना चाहता है। प्रत्येक मानव, प्रत्येक प्राणीमात्र संसार का अपने अन्तःकरण में जब अपनी बाहरीय प्रवृत्तियों को ले जाता है तो उस काल में वह अपनी अन्तर्रात्मा को जानना चाहता है। परन्तु कोई भी संसार का प्राणी ऐसा नहीं है। जिसे प्रकाश की इच्छा न हो। सदैव वह प्रकाश में अपने को गमन, अपने को स्थिर करना चाहता है। उसके हृदय में वही कामना होती है कि मेरा हृदय प्रकाशमयी हो। याज्ञिक याग कर रहा है। उसके मनों में यही कामना होती है कि मेरे जीवन में और मेरे गृह में नाना प्रकार का प्रकाश होना चाहिए। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कुछ संसार का परिचय कराया। आज भी मैं उस परिचय को देने के लिए आया हूँ। आज मैं प्राचीन वैज्ञानिकों के मध्य में जब मैं प्रवेश करता हूँ और उनके चरित्र, उनकी तपस्या जब मुझे स्मरण आती है, हे पूज्यपाद आधुनिक काल का जो कार्य कर रहा वर्तमान में यह उससे निम्न प्रतीत होता है। उसके वाममार्ग की आभा में मुझे प्रतीत होता है यह समाज। जब मैं अतीत के काल में प्रवेश करता हूँ तो मेरा हृदय यह कहता है कि चरित्र का वर्तमान काल में ह्रास होता जा रहा है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव चरित्र की कुछ चर्चाएं कर रहे थे। आचार और व्यवहार की चर्चाएं कर रहे हैं। आध्यात्मिकवाद की उसमें पुट लाते चले जाते हैं। परन्तु जब मैं आधुनिक जगत्, समाज और राष्ट्र को, दोनों को दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है। जब मैं धर्म के क्षेत्र में धार्मिक पुरुषों के गृहों में जाता हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है। परन्तु

जब विज्ञान के क्षेत्र में पहुंचते हैं उनके आहार और व्यवहार पर हम दृष्टिपात करते हैं, उनका आन्तरिक जीवन में कुछ और बाहरीय जीवन कुछ बना हुआ है। इनका आहार और व्यवहार महान् दूषित हो रहाह ै। इसीलिए आधुनिक काल का जो विज्ञान है, एक एक वस्तु को यह विचारता रहता है। उसका जीवन समाप्त होता चला गया। द्वितीय वैज्ञानिक उसके अनुसन्धान पर लग रहा है, उसने अनुसन्धान में एक धातु पिपाद को आज जाना। परन्तु द्वितीय काल आता है उसी धातु पिपाद का वह दूसरे रूप में परित कर देता है। ऐसा क्यों हो रहा है? एक वैज्ञानिक भविष्य वाणी कर रहा है। ग्रहों के क्षेत्रों में जा रहा है और वह ग्रह के क्षेत्रों में जा करके भविष्यवाणी कर रहा है।
परन्तु यह भविष्यवाणी उनके अधूरेपन में परणित होती रहती है। वह जो उनका आकार है भविष्य वाला वह भविष्यवाणी उनके नियन्त्रण में नहीं रह पाती। क्योंकि आभामयी जो जीवन की धाराएं हैं अथवा जो नक्षत्रों से धराओं का जन्म होता है, सूर्य की किरणों एक लोक में पहुंची। उस लोक में उस किरण के प्रभाव से उसका कोई विभाग जा करके द्वितीय मण्डल में जा गिरा। मण्डल में जब प्रवेश हुआ तो वह मण्डल अकृत बन गया। अपनी गति से मण्डल गतियां कर रहे हैं। अपनी रेखा में, एक सूत्र में गतियां कर रहे हैं और वह गतियां करते करते एक ही रूप धारण कर लेते हैं। परन्तु उस समय प्रकृति का, पृथ्वी का, प्रकृति के गर्भ में जितने मण्डल हैं चाहे वह यह पृथ्वी मण्डल हो, चाहे वह चन्द्रमा हो, चाहे वह मंगल हो, बुद्ध हो, शुक्र हो परन्तु कोई भी लोक लोकान्तर हों, किन्हीं लोकों के जीवन ध्वस्त हो जाते हैं और किन्हीं के जीवन ऊर्ध्वा में चले जाते हैं। कहीं नक्षत्रों का प्रभाव महानता में होता है, कहीं विनाशता में होता है। तो यह जो वैज्ञानिकों की धाराएं हैं, परम्परागतों से वैज्ञानिक होते चले आए हैं सृष्टि के प्रारम्भ से अनगणित वैज्ञानिक हुए हैं जिनको हम गणना में नहीं ला सकते। इतने विशाल विशाल वैज्ञानिक हुए हैं जो विज्ञान के रूपों में परणित थे।
आज का यह विज्ञान, वाणी में अधूरापन क्यों हो रहा है? क्योंकि वैज्ञानिकों का आधुनिक काल में जो परमाणुवाद कहता है जो उनकी विचारधारा कहती है उसके अनुसार उनका आहार और व्यवहार नहीं रहा और उनके अनुसार आहार और व्यवहार न रहने पर वह

आूरे ही दृष्टिपात आते हैं उनमें संकीर्णता दृष्टिपात आती है। परन्तु उनका बाह्रीय जीवन कुछ बना हुआ है और आन्तरिक जो जीवन है वह कुछ कह रहा है। एक परमाणुवादी विज्ञानवेत्ता यह कहता है कि गो घृत में, गो दुग्ध में वह शक्ति, वह परमाणु विद्यमान हैं जिससे मानव अपने में प्रकाशित बनता है। परन्तु उसका आहार और व्यवहार करने से, अन्नाद को पान करने से, विशेष रूप से हिंसा नहीं होती। वह अहिंसा परमोधर्मी आहार को न करने से वैज्ञानिकता में संकीर्णता अधूरापन आता जा रहा है। इसके मूल में क्या है? आहार और व्यवहार जो उनका विज्ञान कहता है, खनिज पदार्थों को जान करके जो उन्हें प्रेरणाएं प्राप्त होती हैं उसके अनुसार उनका आहार, व्यवहार और क्रिया कलाप न रहने से मानव की आभा समाप्त होती जा रही है।

उसी के मूल में है कि वैज्ञानिक जब अपने कथनानुसार जीवन को नहीं बनाते तो परिणाम यह होता है कि राष्ट्र में दूषितपान आ जाता है, राष्ट्र में दूषितपन आ करके और धर्म और रूढ़ियों में राष्ट्र परणित हो करके अग्नि के मुख में परणित हो जाता है। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रकट कराया था कि आधुनिक वर्तमान का जो काल चल रहा है, प्रातःकालीन और सायंकाल को सूर्य के उदय होने और सूर्य के अस्त होने के पश्चात्, सूर्य के उदय होने से पूर्व एक लालिमा अन्तरिक्ष में अपना प्रकाश दे रही है। परन्तु वह जो लालिमा भ्रमण कर रही है उसके मूल में है समाज की विचारधारा। समाज की विचारधाराओं से वायुमण्डल तो बनता ही है यह तो सार्वभौम एक सिद्धान्त है। परन्तु वह जो लालिमा आ रही है उसमें एक बुद्ध और मंगल रोहिणी और वशिष्ठ, अरूणधती, सोमभूमिका, स्वेणके तु, स्वाति और पुष्प, अचंग, स्वातिधेन यह जो नक्षत्र है यह एक सीमा में आ रहे हैं।

परन्तु यह जो सीमा में आ रहे हैं वर्तमान काल के वैज्ञानिकों ने इसके ऊपर अनुसन्धान भी हो रहा है। अनुसन्धानवेत्ता अनुसन्धान भी कर रहे हैं।

परन्तु नक्षत्रों की एक आभा बन गई है, वह लालिमा मैंने पूर्वकाल में पूज्यपाद कगुरुदेव को वर्णन कराया था कि अनावृष्टि और अति वृष्टि के रूप में परणित होने वाला यह वायुमण्डल है। परन्तु इन लोकों का प्रभाव मंगल पर विशेषकर उसमें धारा परणित हो

रही है। मंगल मण्डल का जो समाज है यहाँ का प्राणीमात्र जीवन भी अस्वस्थता में परणित हो रहा है। परन्तु इस पृथ्वी मण्डल का जो प्राणी है यह भी त्राहि त्राहि कर रहा है कि इस आधुनिक पृथ्वी मण्डल पर त्राहि का तो एक कारण है कि विज्ञान का दुरूपयोग होता जा रहा है। प्रत्येक प्राणी उस विज्ञान के दुरूपयोग को अपने में ग्रहण कर रहा है अपने में ग्रहण करता करता इसकी आवश्यकताएं बलवती हो गई हैं। यह अपने आहार और व्यवहार की पूर्ति करने के लिए भी यह जगत् उसे असम्भव सा दृष्टिपात आ रहा है। आज मैं यह कहूँ किसी प्राणी से आधुनिक काल इतना परतन्त्र बन गया अपनी इन्द्रियों का किसी प्राणी से मैं यह कहूँ कि हे मानव तू सुरापान न ! करे, तू दूसरे के रक्त को पान न कर तो वह कहता है कि यह प्राचीन वार्त्ताएं हैं। आधुनिक काल में ऐसा कहाँ होता है? परन्तु जब यह उच्चारण करते हैं तो मेरा हृदय यह कहता है कि इस मानव का, पाप का उदय हो रहा है।

अब क्योंकि वह मानव पुण्य के उदय को नहीं चाहता है, उसके अन्तःकरण में वह जो पापस्थली बन गई है उसमें वह इतना ग्राही बन गया है कि वह अपनी त्रृटियों को त्यागना नहीं चाहता। इसके मूल में यह है कि वह यह विचारता रहता है कि मैं ऐसा क्यों करूं कि मुझे यह बाहरीय जगत क्या कहेगा? परन्तु हे भोले मानव जब तू ! अपनी मानवीयता को ऊँचा बना लेगा, तू अपनी अन्तरात्मा से विचार। यह अन्तरात्मा क्या कहेगी? या बाहरीय जगत् को विचार रहा है। बाहरीय जगत् को विचारने से पूर्व तू अपनी अन्तरात्मा से जो प्रेरणा आ रही है, अन्तरात्मा जो तुझे यह कहता है, हे मानव तू ऐसा कर्म न कर। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से ! यह कहा था कि अपनी अन्तरात्मा से मानव को अपने अन्तः हृदय में प्रवेश करता हुआ अपनी बाहरीय प्रवृत्तियों को आन्तरिक जगत् में ले जाता है तो उससे यह प्रतीत होता हैकि मेरा अन्तरात्मा मुझे धिक्कार रहा है। जब मानव का अन्तरात्मा उसे धिक्कारता है शान्त मुद्रा होने पर हे भोले तू अपनी अन्तरात्मा की आवाज को स्वीकार कर। ! वही तेरा मित्र है। वही शरीर में भात रहा है क्योंकि बाहरीय जगत् के प्रभाव में विशेष

आने के पश्चात् तू अपनी त्रुटियों को नहीं विचार रहा है।

आज मैं जहाँ अपनी वार्त्ता प्रकट कर रहा हूँ वहाँ यह कि हे यज्ञमान तेरे जीवन का ! सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मैं प्रभु अनुपम से यह प्रार्थना करता रहता हूँ कि गृहों तेरे जीवन का ज !में शान्ति की स्थापना होनी चाहिए जिससे हे यज्ञमानो सौभाग्य है वह अखण्ड बना रहे क्योंकि याज्ञिक पुरुष ही संसार में अपने जीवन को ऊचा बना सकते हैं। अपने चरित्र की धाराओं से आहार और व्यवहार को ऊचा बनाने से गृह शान्तिदायक बन करके महानता को प्राप्त हो जाए और कामनाओं की पूर्ति हो जाए। यह मेरी सदैव कामना रहती है। कामना के साथ मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ, मैं वैज्ञानिकों के मध्य में हूँ, कहीं शिक्षालयों के मध्य में हूँ कहीं विद्यालयों की आभाओं में गति कर रहा हूँ। परन्तु यह पृथ्वी मण्डल का प्राणी यह इतनी दूषित आभा में गति कर रहा है, विज्ञान के दुरूपयोग होने के कारण कि यह मानव रक्तभरी क्रान्ति में परणित होना चाहता है। प्रत्येक मानव के हृदय में एक विचार धारा बन गई है कि प्राणी प्राणी को अपने श्वास के साथ भक्षण करना चाहता है। यह क्यों करना चाहता है? क्योंकि विज्ञान का जो दुरूपयोग हो रहा है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल में वैज्ञानिकों की चर्चाएं कीं और आधुनिक जगत् के वैज्ञानिक की मान्यता तो यह है। उनकी विचारधारा मैंने अभी प्रकट कराई है कि परमाणुवाद उनका कुछ कह रहा है, विज्ञान की जो धाराएं हैं वह कुछ उच्चारण कर रही हैं। उसके विपरीत कार्य हो रहा है। परन्तु जब वैज्ञानिक अपनी विचारधारा के अनुसार उसके विपरीत आचार और व्यवहार को बना लेंगे तो विज्ञान का दुरूपयोग निश्चित हो जाएगा। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, देखो, अतीत के जितने भी वैज्ञानिक हुए हैं उनकी कुछ चर्चाएं किया करते हैं महर्षि भारद्वाज का जीवन और यहाँ भगवान राम का जीवन, भगवान कृष्ण का जीवन और भी नाना ऋषि मुनियों का जीवन कितना निर्भय था, जैसे महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज वैज्ञानिक थे। महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज अपनी विज्ञानशाला में यन्त्रों से इस आकाश गंगा के सूर्यों की गणना करते रहते थे, निहारते रहते थे। अन्तः में वह मौन हो जाते थे और तपस्या करते थे। समाधि में मुनिवरों उस महान् विज्ञान को !

दृष्टिपात करते थे।

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है वह ऐसा है कि एक तरंग को उसने जाना है, द्वितीय तरंग प्रतीत हो गई है, तृतीय तरंग प्रतीत हो गई है उसी में उसका प्राणान्त हो जाता है। परन्तु उसे समाधिष्ट होने का अपनी अन्तरात्मा से या मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार को एक सूत्र में ला करके जब वह वैज्ञानिक तत्त्वों का अनुभव करता है तो वह विज्ञान उन ऋषि मुनियों का सफल हो जाता है। आज में जब यह विचारता हूँ कि आधुनिक जगत् का जो वैज्ञानिक है एक अणु को, एक परमाणु को जानता हुआ, उसमें कितनी धाराओं का जन्म होता है इसमें वह शान्त हो जाता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आधुनिक जगत् में कुछ वैज्ञानिकों का ऐसा विश्लेषण चल रहा है। ऐसी उनकी विचारधारा है कि एक अणु, एक परमाणु को हम विभाजन करना चाहते हैं। उसने विभाजन किया तो उसने अधूरेपन की तरंगों को जाना है। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब भूतकाल की ! वार्त्ताओं, अतीत के काल के ऋषियों की जैसा भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारिणी सवरी, ब्रह्मचारी सुके ता, ब्रह्मचारी कवन्धि, भगवान राम महाराज कुम्भकरण, स्वाति अश्वेत नाना ऋषिवर एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके उन्होंने एक परमाणु का जब विभाजन किया, वह विभक्त हुआ तो जितना यह ब्रह्माण्ड है यन्त्रों से उस एक ही परमाणु के विभाजन करने से सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्रण उसी एक परमाणु में दृष्टिपात आने लगा तो ऋषियों ने यह कहा, उस काल में भारद्वाज इत्यादि ऋषियों ने कि इससे यह सिद्ध होता है जैसे हम पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना करते हैं और यह कहते हैं कि पिण्ड है तो ब्रह्माण्ड है, परन्तु यहाँ तो एक एक परमाणु सृष्टि की गाथा गा रहा है और सृष्टि का वर्णन कर रहा है। ब्रह्माण्ड का चित्रण उसमें विद्यमान है। एक एक परमाणु में ब्रह्माण्ड का चित्रण होता रहता है। परन्तु जब वैज्ञानिक इस वाक्य को विचारने लगते हैं तो प्रायः ऐसा सिद्ध होता है कि भारद्वाज मुनि महाराज के द्वारा एक कामधेनु गऊ थी। उस कामधेनु गऊ का दुग्ध का आहार करते थे। परन्तु कुछ अन्नाद को पान करते थे और वह अन्नाद एकत्रित करते रहते थे। अन्नाद जिस पर किसी का अधिकार न हो, उस अन्न को खरड़ बना करके उसका दुग्ध बना करके और गऊ के दुग्ध में उसको

मिश्रा करके, मुझे पूज्यपाद गुरुदेव ने भी यह वर्णन कराया था एक सौ एक वर्ष तक भारद्वाज मुनि ने इस आहार को पान किया और वह के से वैज्ञानिक थे? यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव उनका परिचय देते रहते थे। इस प्रकार का आहार और व्यवहार जब प्राणी का बन जाता है, ब्रह्मवर्चोसि बन जाता है तो वह मानव अपने विज्ञान में सफलता को प्राप्त करता है।

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है, एक घोषणा कुछ ही काल हुआ है पूज्यपाद गुरुदेव को मैंने वर्णन कराया था एक सूर्य ग्रहण हुआ। सूर्य के आँगन में चन्द्रमा और पृथ्वी एक ही सूत्र में, एक ही धारा में वह परणित हो गए तो सूर्य ग्रहण की उत्पत्ति बनी। परन्तु वैज्ञानिकों ने घोषणा की, संसार के प्राणियो !तुम नेत्रहीन हो जाओगे, तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। परन्तु उन वैज्ञानिकों को यह नहीं दृष्टिपात आता कि जिस प्रभु ने संसार की रचना की है उसी की धारा में वह जो आयतन है, ब्रह्माण्ड वह एक रेखा में आ रहे हैं जिससे तुम भविष्यवाणी क्या कर रहे हो? परन्तु उनमें अधूरापन दृष्टिपात आता है। इसके मूल में यह हैकि उनके द्वारा तपस्या नहीं है, आत्मज्ञान नहीं है। आत्म तपस्या न होने के कारण वह तरंगों में अधूरेपन को प्राप्त हो रहे हैं। आज का मानव आधुनिक जगत् का जो विज्ञान है वह नाना प्रकार के अणु और परमाणुओं को एकत्रित कर रहा है। उनको एकत्रित करता हुआ, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को निगलना चाहता है। प्रजा में अशान्ति आ गई है। मैंने पूज्यपाद गुरुदेव से बहुत पुरातन काल में जब यह प्रश्न किया तो पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि यह संसार रक्तमयी क्रान्ति वाला है। इसके मूल में क्या है? कि राजा श्रेष्ठ न होने के कारण, राष्ट्र पवित्र न होने के कारण, राष्ट्र को ब्रह्मज्ञान न होने के कारण, राष्ट्र में तपस्या की हीनता के कारण, मानव सम्प्रदायों की अग्नियों में परणित होता जा रहा है। वह जो नाना प्रकार के सम्प्रदाय हैं वह राष्ट्र के घात में लगे हुए हैं कि राष्ट्र को हमारी सम्प्रदाय का अधिकार हो जाए। इसके मूल में क्या है? कि राष्ट्र तपस्वी और ब्रह्मज्ञानी न होने के कारण ऐसा प्रायः हो रहा है। जब मैं यह विचारता हूँ पूर्वकाल के वैज्ञानिकों की और पूर्वकाल के धिराओं की चर्चाएं, राजा के राष्ट्र में एक धारा बन हुई है कि ब्रह्मज्ञान होना चाहिए।

ब्रह्मज्ञान में मानव के लिए लाभप्रद जो भी क्रिया कलाप है वह राजा के राष्ट्र में होने चाहिए। राजा के राष्ट्र में जो नाना प्रकार की रूढ़ियां हैं यह राष्ट्र को निर्जीव बनाती चली जा रही हैं इसके मूल में मैं आज के राजाओं की चर्चा करता रहता हूँ। राजा का कर्त्तव्य है कि राष्ट्र में एक ही विचारधारा वाले प्राणी होने चाहिए। एक ही उनका वैदिक प्रकाश और ज्ञान वाला विचार रहना चाहिए। प्रत्येक मानव आज राष्ट्रों में धर्म के ऊपर प्राणी प्राणी के रक्त का पिपासी बन रहा है। क्या उसको धर्म कह सकते हैं? धर्म वह कहलाता है जहाँ एक मानव दूसरे मानव से स्नेह और इन्द्रियों से सुदृष्टि पान करने वाला प्राणी हो। परन्तु जब मैं इन वाक्यों पर जाता हूँ तो इससे मुझे प्रतीत होता है कि राजा को विचित्र बन करके तपस्या करनी चाहिए। वनों में तपस्या करने के पश्चात् तपस्वियों का राष्ट्र होता है। जब मानव अपने धर्म का चिन्तन कर लेता है, मानवीय धर्म क्या है? कोई मानवीय धर्म कहता है कि द्वितीय राष्ट्रों से आ रहा है, कोई मानव आकाश मण्डल से कह रहा है। हे मानव यह जो धर्म है यह मानव की प्रत्येक इन्द्रियों ! में समाहित हो रहा है। इन्द्रियों में जैसे नेत्रों का धर्म है, सुदृष्टिपात करना, कुदृष्टिपात नहीं। देखो, शब्द आ रहा है, शुद्ध और पवित्र शब्द है, सत्यवादी शब्द हैं, वह श्रोत्रों में आ रहा है। मानव उस शब्द को ग्रहण करने वाला हो। वही श्रोत्रों का धर्म कहलाता है। वाणी उद्गार प्रकट कर रही है। वाणी जब तक सत्य उच्चारण कर रही है। अपने प्रभु का गान गा रही है तब तक मानव प्रसन्न रहता है। परन्तु जब मानव प्रकृति के क्षेत्र में आ करके दुष्टवाणी का प्रतिपादन होने लगता है मानव उससे ऊब जाता है, दूरी चला जाता है। इसी प्रकार त्वचा मं जब तक प्रीति और प्रेम रहता है तब तक मानव प्रियता में रहता है। जब अप्रिय आगमन होने लगता है तब मानव उससे दूरी हो जाता है तो हे मानवतेरी तो इन्द्रियों में धर्म है। उस धर्म को कौन विचारता है !, राजा विचारहात है। राजा ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। ब्रह्मनिष्ठ होना चाहिए। ब्रह्म का चिन्तन करने वाला जब तक राजा नहीं होगा, प्रजा महान् नहीं बनेगी क्योंकि प्रजा में एक उज्ज्वल कार्य रहना चाहिए।

मुझे स्मरण आता रहता है, पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में वर्णन कराया, भगवान

राम अपनी अयोध्या में विद्यमान हैं। विष्णु राष्ट्र की स्थापना करना चाहते हैं। विष्णु राजा कहलाता है। परन्तु विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का भी है। वह अपने राष्ट्र के कर्मचारियों से, राष्ट्र के नायकां से कहते हैं कि तुम्हारे प्रत्येक गृह में मानव एक दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए। यह जब घोषणा राजा के राष्ट्र में होती है कि एक दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए। वह ऋणी कौन है? जो प्रभु का चिन्तन नहीं करता वह प्रभु का ऋणी है। जो माता पिता की सेवा नहीं करता वह माता पिता का ऋणी है। समाज में अच्छाइयों को उत्पन्न नहीं करता वह समाज का ऋणी है। जो राष्ट्र के ऊचे विचारों को स्वीकार नहीं करता वह राजा राष्ट्र का ऋणी होता है।

इस प्रकार के ऋणों की उन्होंने गणना कराई और कहा कि राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं रहना चाहिए। राजा के राष्ट्र में यह घोषणा हो गई प्रत्येक गृह में ऊचे विचारों के साथ गृहआश्रम में गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा होनी चाहिए। गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा क्या है? गृह में माता पिता उस क्रिया कलाप को करें, उस उद्देश्य को प्रातःकाल बाल्यों को प्रदान करें जिससे बालक के हृदय में एक महानता की तरंगें आ जाएं और वह उदण्ड न बने। वह विद्यालय में जाए तो ब्रह्मचारी सुगन्धियुक्त बना रहे। राष्ट्र में जाए तो राष्ट्र भी सुगन्धियुक्त रहे। इसी प्रकार एक दूसरा तब ऋणी नहीं रहेगा। प्रातःकालीन बना रहे। राष्ट्र में जाए तो राष्ट्र भी सुगन्धियुक्त रहे। इसी प्रकार एक दूसरा तब ऋणी नहीं रहेगा। प्रातःकालीन प्रत्येक गृह में सुगन्धि आती है, प्रत्येक गृह में याग होते हैं, वेदों की ध्वनियां आती रहती हैं, उस राजा का राष्ट्र, जब यह घोषित किया जाता है कि मेरे राष्ट्र में कोई भी दूषित प्राणी नहीं है तो वह विष्णु राष्ट्र कहलाता है। देखो, ! क्षत्रिय अपना क्रिया कलाप विशुद्ध रूप से कर रहे हैं।

परन्तु जब मैं आधुनिक काल के समाज में प्रवेश करता हूँ जब मैं क्षत्रियों के क्षेत्र में जाता हूँ वहाँ भी जातिवाद प्रतीत हो रहा है, वहाँ भी सम्प्रदायवाद प्रतीत हो रहा है। राजाओं की गोष्ठियों में, राष्ट्र के नायक हैं वहाँ भी सम्प्रदायों का प्रसार हो रहा है परन्तु प्रभु का चिन्तन वहाँ नहीं होता। वहाँ के वल ऋणी क्या? वह स्वयं ऋणी बने हुए हैं। जो ऋणी बने हुए हैं वह क्या कलपना कर सकते हैं कि ऋण से उऋण होना है? मुझे

स्मरण है यहाँ राजा प्रातःकालीन याग कर रहे हैं (शब्द ध्वनि से), ब्रह्म का चिन्तन कर रहे हैं। उसी प्रकार उनका समाज उसी क्रिया कलाप को करके राष्ट्र को पवित्र बना रहा है। अहा आधुनिक जगत् जहाँ एक दूसरा मानव यह घोषणा कर रहा है कि ! एकता के सूत्र में रहो, सम्प्रदाय को त्याग दो परन्तु जब वह एकान्त में विद्यमान होते , हैं वह कहते हैं कि जब तक समाज के विचारों में भिन्नता नहीं आएगी, हम राष्ट्र पर पालन कैसे कर सकते हैं? हम इस स्थली को के से प्राप्त कर सकते हैं? यह उसी काल में प्राप्त होगी जब मानव के विचारों को एक सूत्र में लाना था वहाँ उसका विभाजन हो रहा है। जहाँ ब्रह्मज्ञान लाना था वहाँ विभक्त होने की चर्चाएं आ रही हैं। अरे, भोले प्राणियों यह राष्ट्र कैसे ऊचा बनेगा? मैंने जब अपने पूज्यपाद से यह प्रश्न किया था कि महाराजराष्ट्र के सा होना चाहिए !? तो पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा था कि विष्णु राष्ट्र होना चाहिए। विष्णु राष्ट्र के सा होता है। राजा के राष्ट्र में चार नियमावली होनी चाहिए और चार नियमावली क्या कि राजा ही विष्णु है और उसकी चार भुजाएं हैं। सबसे प्रथम उसकी गदा है और क्षत्रिय पवित्र हैं। अपने बल से युक्त हैं और द्वितीय में पदम् हैं, चरित्र ऊचा होना चाहिए। चरित्र कहते किसे हैं? चरित्र कहते हैं जो अन्तरात्मा से प्रेरणा प्राप्त होती है।

उसको स्वीकार करना और दुष्ट भावना को समाप्त करने का नाम चरित्र कहलाता है। अन्तरात्मा जिसे मानव का दर्शा रहा है, अरे, मानव तू दूसरों का चरित्र हनन करना ! चाहता है। तू दूसरों का रक्तपान कर रहा है। तुझे कितने जन्म प्राप्त होंगे? ऐसा भी कल्पना करता है। यह तुझे भोगना भी है यह भी कल्पना कर। अन्तरात्मा से प्रेरणा प्राप्त हो रही हैं परन्तु वह जो स्वार्थ है, सम्प्रदायवाद है, विचारधारा है, जातीयता है, उसके आँगन में आ करके अपनी अन्तरात्मा की वार्त्ता को शान्त कर देता है और वह अपने स्वार्थ की आभा में परणित हो जाता है। जहाँ मानव को ब्रह्मवेत्ता बनना था, ब्रह्म की चर्चा करनी थी, मन को सुसज्जित बनाना था, राष्ट्र को ऊचे स्तर पर ले जाना था वहाँ निम्न बन गया है। अपनी आत्मा के विचारों में हीन बन गया है। वह बाहरीय समाज को क्या ऊर्ध्वा में पहुंचा सके गा। परन्तु जब ऐसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया

कि तृतीय में चक्र होना चाहिए। एक संस्कृति होनी चाहिए। एक ही संस्कृति एक ही विचारधारा जब मानव के समीप होती है तो राष्ट्र पवित्र बन जाता है। राष्ट्र में संग्राम नहीं होते। राष्ट्र में रक्तभरी क्रान्तियां नहीं आती। रक्तभरी क्रान्तियां उस काल में आती हैं जब मानव के विचारों का विभाजन हो जाता है।

उसके पश्चात् पूज्यपाद गुरुदेव कहते थे शंख ध्वनि होनी चाहिए। शंख ध्वनि उसे कहते हैं रेचक ध्वनि होनी चाहिए, ज्ञानी पुरुष होने चाहिए, विवेकी पुरुष होने चाहिए और पुरोहितों के द्वारा राष्ट्र का निर्माण होना चाहिए। राष्ट्र का जो निर्माण है वह जब राजा का निर्माण अपठित समाज करेगा, वह राष्ट्र कदापि भी ऊचा नहीं बन सकता। किसी भी काल में नहीं बनेगा। परन्तु राष्ट्र के राजा का निर्माण बुद्धिमान और विवेकी पुरुषों के द्वारा होना चाहिए।

विवेकी पुरुषों के द्वारा राष्ट्र का निर्माण होगा वह राजा महान बनेगा, कर्त्तव्यवादी बनेगा और ब्रह्मवेत्ता होगा। समाज उससे प्रभावित हो करके अपने कर्त्तव्य का पालन करेगा। जब अपठित समाज के द्वारा राष्ट्र का निर्माण होता है तो वह आधुनिक जगत् में इसी प्रकार अपठित समाज के द्वारा राष्ट्र का निर्माण हो रहा है और वह राजा के से बनते हैं? यह मैं नहीं उच्चारण कर सकता प्रभु आपके समीप। परन्तु मैं इतना उच्चारण कर ! रहा हूँ कि यह संसार चरित्रवानों से ऊचा बनना चाहिए और चरित्रवान वह होता है जिसे अपनी इन्द्रियों पर अनुशासन होता है। जो अपने शरीर रूपी राष्ट्र के ऊपर नियन्त्रण कर जाते हैं वह राष्ट्र को नियन्त्रित कर लेते हैं और जो राष्ट्र को नियन्त्रित कर लेते हैं वह ब्रह्म विद्या पर अपना अधिपथ्य करते हैं और जो ब्रह्म विद्या को पान कर लेते हैं वह विवेकी होते हैं। वह दूसरे के श्रृङ्गार को, वह दूसरे के द्रव्य को अपने में संग्रह करने को तत्पर नहीं होते। वह उदार बन करके, पवित्र बन करके इस संसार सागर से ऊचा कर्म करते हुए इससे पार हो जाते हैं।

तो हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेवआज का यह काल क्या कह रहा है !? मैं उच्चारण कर रहा था वैज्ञानिकों की सभाओं में जब मैं प्रवेश करता हूँ तो वहाँ भी अधूरापन, विद्यालयों में जब प्रवेश करता हूँ जहाँ चरित्रों का निर्माण होता है, जहाँ छात्रबल को दीक्षा दी जाती

है परन्तु वहाँ भी मैं आहार और व्यवहार की अग्नि में विज्ञान का दुरूपयोग होता दृष्टिपात करता हूँ। अहासमय आ रहा है। वह समय दूरी नहीं ह !ै पूज्यपाद जह यहाँ एक ! मानव दूसरे मानव का भक्षण करने के लिए तत्पर हो जाएगा। प्रायः यह विचारधारा तो बनती ही जा रही है। परन्तु वह समय जब अग्नि प्रदीप्त हो जाएगी, अभी आन्तरिक अग्नि धीमी धीमी चल रही है। एक समय वह आएगा कि यह प्रचण्ड हो करके मानव मानव का भक्षण करेगा। परन्तु विचार विनिमय यह इस सम्बन्ध में, इसको तो प्रभुही जानता है क्या होगा !? परन्तु हे पूज्यपाद गुरुदेव मैं आपसे यह उच्चारण ! करने के लिए आया हूँ कि जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है जिस स्थली पर वहाँ मानो यज्ञम् भवति ब्रह्मास्तेः वहाँ यागों का चलन परम्परागतों से रहा है जहाँ मेरे पूःयपाद गुरुदेव कजली वनों से आते थे परन्तु राजा बड़े, यज्ञमान बड़े उत्साह से लाते थे। उसके विपरीत कर्म की गति बड़ी विचित्र होती है। परन्तु आज मैं इतना उच्चारण करना चाहता हूँ यज्ञमानतेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। तेरे जीवन की धा !राएं और भी पवित्र बन जाएं जिससे तेरी वाणी, तेरा आन्तरिक जगत् और तेरे जीवन की जो आन्तरिक धाराएं हैं इनको पान करना है। इनको पान करता हुआ, दुग्ध होता हुआ अपनी मानवीतया को ऊचा बना। यह है आज का वाक्। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से क्षमा चाहता हूँ। विचार के वल यह कि आज मैंने आपको यह परिचय दिया है कि यह समाज, यह विज्ञान इसमें ऐसी अग्नि सी प्रदीप्त हो रही है कि उसको मैं आगे उच्चारण करने में असमर्थ रहता हूँ क्योंकि वह प्रभु का आयतन है। आज हमने प्रभु की महिमा का वर्णन किया है। हम नित्यप्रति इसकी चर्चा करते हैं परन्तु मेरा तो एक ही मन्तव्य है कि चरित्र तब ऊचा बनेगा जब राजा ब्रह्मवेत्ता होगा। राष्ट्र ब्रह्म की चर्चा करने वाला होगा। समाज को जैसे जनक स्वयं ब्रह्मयाग करते थे और वह प्रजा भी उनके यहाँ ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्म चिन्तन करने वाली और जिस भी काल में राजा यह दृष्टिपात करता है कि वायुमण्डल में अब अति वृष्टि, अना वृष्टि हो गई है उसी काल में राजा अपना क्रिया कलाप करते हुए अपने में जैसे राजा जनक ने स्वर्ण का हल बना करके गऊ के बछड़ों को ले करके कृषकों को जागरूक किया था। जब उसके अनुसार राजा कर्म

को करता है तो प्रजा उसी के अनुसार बरतने लगती है। ऐसे ही राष्ट्र का ऊचा होना बहुत अनिवार्य है कि राजा महान् हो, उसका क्रियात्मक जीवन हो, दूसरे के वैभव को संग्रह करने वाला न हो। उसे स्वतः अपने में महान् और निष्ठित होना चाहिए। यह है आज का विचार, विष्णु राष्ट्र की कल्पनाएं करते रहते हैं। यह आज का विचार समाप्त अब मैं अपने पूज्यपाद से आज्ञा पा रहा हूँ।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने अभी अभी अपने कुछ उद्गार प्रकट !मेरे प्यारे !ऋषिवर ! किए। परन्तु उनके जो उद्गार हैं वह उद्गार कुछ ऐसे हैं विडम्बनामयी हैं क्योंकि विडम्बनामयी जो वाक्य हैं यह समाज और राष्ट्र की कल्पना करते रहते हैं। चरित्र की वार्त्ता प्रकट करते रहते हैं। क्योंकि चरित्र की मीमांसा हमारे आचार्यों ने परम्परागतों से ही, वेद के कुछ मन्त्रों का उच्चारण करते हुए कहीं और उन्होंने यह कहा कि मानव वह महान् बनता है जो अपनी अन्तरात्मा के अनुसार अपना कर्म करता है। इन्द्रियों पर अनुशासित होता है। अनुसन्धान वही प्राणी करता है जिसने अपनी इन्द्रियों पर अनुसन्धान किया है। ऐसा चरित्र की प्रतिभा में आता रहता है। मानव अपने में क्रियाशील रहे जैसे वायु गति कर रही है, अग्नि अपना प्रकाश दे रही है।

जल परमाणु शीतलता दे रही है और पृथ्वी अपना गुरूतव दे रही है। इन सबका मिलान जब समन्वय होता है तो नाना प्रकार के खनिजों को उत्पन्न करते हैं। जैसे याज्ञिक याग कर रहा है वह अपने विचारों को अग्नि की धाराओं में परिवर्तित कर रहा है। उसका जो स्वाहा शब्द है वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह वायु की तरंगों में ओत प्रोत हो रहा है। वही जो परमाणुवाद है वह अशुद्ध परमाणुओं को निगलता चला जाता है और शुद्ध और पवित्र अपनी प्रतिभा को वह उद्बुद्ध करता हुआ वायुमण्डल में ओत प्रोत हो जाता है। तो इस प्रकार हमारे आचार्यों ने, ऋषि मुनियों ने ऐसा कहा है। परन्तु रहा यह कि जैसा मेरे प्यारे महानन्द जी ने कहा कि जीवन अखण्ड बना ! रहे, जीवन प्रत्येक प्राणी का अखण्ड रहना चाहिए। अखण्ड जीवन उस काल में रहता है जब वह अपने में स्वर्णीय बनता है। आहार और व्यवहार जैसा अभी अभी उच्चारण किया गया था आहार और व्यवहार पर जितना इन्द्रियों पर संयम होता है, इन्द्रियों की

जितनी भी महानता रहती है, नियन्त्रण रहता है उतना ही उसके जीवन की धाराएं पवित्र बनती रहती हैं और उतनी ही उसके जीवन की अखण्डता बनी रहती है। अखंडता का अभिप्राय यह है कि अपने मानवीय जीवन का कुछ अध्ययन करना। परन्तु मानव में वह उदीप्त रहना चाहिए, प्रकाशमान रहना चाहिए।

तो यह आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि प्रत्येक मानव अपने में संयमी और चरित्र की धाराओं को अपने में चिन्तन करने वाला बने। जब आचार्य उसे शिक्षा देते हैं, आचार्य जब ब्रह्मचारी को शिक्षित बनाता है और वह कहता है ब्रह्मचारी आज तुम जितनी शिक्षा विद्यालय ! की थी उसमें तुम पूर्ण हो गए हो उसे दीक्षित बनाता है, दीक्षा देता है, दीक्षा का अभिप्राय यह है कि अब तुम आचार्य बन गए हो, तुम्हारा आचार पवित्र हो गया है। आचार्य का अभिप्राय है कि तुम्हारा जो आचार है, तुम्हारी जो जीवन की धाराएं हैं वह पवित्र बन गई हैं। तुम आचार्य बन गए हो। तुम मेरे आश्रम को त्याग रहे हो। इन विचारों के साथ में क्रियात्मक जीवन पवित्रता में परिणत हो जाए। यज्ञमान तेरा ! जीवन सदैव अखण्ड बनारहे और मेरी महानता में पवित्रता आती रहे। यह आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। निवास स्थान श्री बृजराज सिंह खतौला :

१९ 21 10 1982 पुष्प 40 संसार रूपी याग का स्वरूप

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन मनोहर वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि जो परमपिता परमात्मा वरणीय है प्रत्येक वेदमन्त्र उसका गान गा रहा है जिस भी वेदमन्त्र के तु गर्भ में प्रवेश करोगे उसी वेदमन्त्र में उस परमपिता का ज्ञान और विज्ञान निहित है। वेदमन्त्र उसका गान गा रहा है क्योंकि परमपिता परमात्मा का गान गाना और उसको गायन के स्वरूपों में दृष्टिपात करना यह बेटा एक मावीयत्व माना गया है क्योंकि गान गाने वाला गाता !

ही रहता है। जैसे माता का पुत्र माता का गान गाता ही रहता है। गान का अभिप्राय यह है कि इसकी प्रतिभा को दर्शा रहा है, उच्चारण कर रहा है कि यहाँ उसका कोई प्रतिनिधि है। इसी प्रकार इस पृथ्वी के ऊपर विचार विनिमय करते हैं तो यह ब्रह्म की गाथा गा रही है, मानो यह ब्रह्माण्ड का वर्णन कर रही है कि वास्तव में कोई ब्रह्माण्ड है, कोई लोक है, परमात्मा का विज्ञानमयी जगत् है। तो मेरे पुत्रोयह अपनी अप !नी आभा में आभायित हो रही है। वेदमन्त्र को विचारते हैं, चिन्तनीय विषय बनाते हैं तो मुनिवरों वहाँ प्रभु का गान दृष्टिपात आता है। प्रत्येक वेदमन्त्र का जो शब्द है वह एक ! सूत्र में पिरोया हुआ है जैसे एक मानव के शरीर में हृदय से उद्गार चलता है, हृदय में एक उद्गार आया और उस उद्गार का आकार बना और आकार बन करके तालु और रसना दोनों का जब समन्वय होता है तो शब्द की रचना बाहरीय जगत् में दृष्टिपात आती है। परन्तु शब्द की रचना हृदय में उद्गम हो गई थी। यदि चिन्तन करोगे तो शब्द की रचना तो हृदय से हो गई, प्राणी के उद्बुद्ध करने की एक प्रतिभा मानव के हृदय में उत्पन्न हो गई। परन्तु जब तक बाहरीय स्वरूप में यह शब्द आता है तो उसका बेटा ! कितना विचित्र एक आकार बन जाता है। शब्द ध्वनियों में निहित हो जाता है और शब्दार्थ के रूप में वह शब्द हमें दृष्टिपात आता है। विचार विनिमय क्या? बेटा !तालु और रसना दोनों का जब तक समन्वय नहीं होता तो शब्द का आकार नहीं बनता। उसकी सूक्ष्म धाराएं तो मानव के हृदय में उद्बुद्ध हो गई थीं। उसका बाहरीय स्वरूप बना तो आकार बन गया। वह जो शब्द है वह गान गा रहा है प्रभु की रचना का, प्रभु के विज्ञानमयी जगत् का गान गा रहा है मेरे पुत्रोमाता का पुत्र है !, माता की ममता पुत्र को दर्शा रही है और पुत्र की ममता माता को दर्शा रही है। परन्तु एक दूसरा, एक दूसरे का पूरक बना हुआ है। माता जब ममतामयी बनती है तो पुत्र की रचना हो जाती है और जब तक पुत्र की रचना नहीं होती वह एक दूसरे के पूरक नहीं बन सकते और वह पुत्र गान गाने वाला है। गान क्या। वह परिक्रमा कर रहा है माता का वर्णन कर रहा है जैसे यह पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा कर रही है। तो सूर्य का गान गा रही है। सूर्य को दर्शा रही है। इसी प्रकार माता का पुत्र माता का वर्णन कर रहा है। परन्तु यह पृथ्वी

ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। के से गा रही है? मेरे पुत्रो सूर्य की नाना किरणों ! आयीं। धातु पिपाद की रचना कर रही हैं। धातु बन रहा है। पृथ्वी गान गा रही है ब्रह्माण्ड का। वह क्यों गा रही है? क्योंकि पृथ्वी के गर्भ में जो नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थ उत्पन्न होता है उसको मानव पान करता है। उसका आनन्द बना करके पान करता है। बेटा उस अन्नाद में नाना औषधियों का रसो स्वादन होता है। ! उन औषधियों का सम्बन्ध नाना प्रकार की सूर्य की किरणों से होता है। किरणों का समन्वय लोक लोकान्तरों से होता है, द्यौ मण्डल से होता है। मेरे पुत्रो जो पृथ्वी के ! पृथ्वी ही के गान गाने वाला बने जो ब्रह्माण्ड की !अन्नाद को पान करता है वह बेटा गाथा गा रही है। जैसे प्रत्येक वेदमन्त्र ब्रह्म की गाथा गा रहा है। माता की गाथा पुत्र गा रहा है। और ब्रह्माण्ड की गाथा यह पृथ्वी गा रही है। तो विचार विनिमय क्या? एक दूसरे का पूरक बना हुआ यह ब्रह्माण्ड, यह मानवत्व अपने में प्रकाशित हो रहा है।
इससे पूर्व शब्दों में हम बेटा तुम्हें आत्मा की विवेचना कर रहे थे। याज्ञवलक्य मुनि ! महाराज ने आत्मा के सम्बन्ध में अपना वाक्य प्रकट किया, अपना मन्तव्य उन्होंने प्रकट किया है वह उनका तथ्य हे, उसको कोई भी मानव मिथ्या में ला नहीं सकता क्योंकि वह अपने में पूर्ण है। आत्मतत्व अपने में पूर्ण रहता है। उसको कोई मानव यह नहीं कह सकता, उसको मिथ्यावाद में ले जा नहीं सकता। मेरे प्यारेवह अपने में पूर्ण है !, इसलिए आत्मा को जानने का मानव को प्रयास करना चाहिए। क्योंकि आत्मा को पूर्णत्व में वह प्राणी जानता है जो बेटाज्ञानी है !, वैज्ञानिक है, उसमें विवेक है। विवेकी बन करके निर्भिमानी बन करके परमात्मा की याद में यह मानव चला जाता है। विचार विनिमय क्या? मेरे पुत्रोमैं विशेषत !ः में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था? वेद का आचार्य कहता है कि याज्ञिक बनना चाहिए। क्योंकि यहाँ प्रत्येक स्वरूपों में याग हो रहा है। मेरे प्यारे मुझे स्मरण है एक समय दार्शनिक ! व्यक्तियों का समाज एकत्रित हुआ। उन दार्शनिकों ने यह विचारा कि संसार क्या है? स संसार के सम्बन्ध में विचारक, दार्शनिक अपनी उड़ान उड़ने लगें। उन्होंने सबसे प्रथम यह प्रश्न किया कि संसार क्या है? तो वेद के आचार्यों ने कहा, दार्शनिकों ने कहा कि

संसार एक कल्पवृक्ष है, यहाँ मानव जैसी भी कल्पना करता है, वैसा ही बन जाता है। द्वितीय ने कहा कि यह संसार एक प्रकार की विचारशाला है, यहाँ प्रत्येक मानव विचार विनिमय करने के लिए आता है। तीसरे दार्शनिक ने कहा, नहीं यह संसार एक प्रकार की विज्ञानशाला है, यहाँ प्रत्येक मानवप वैज्ञानिक बनने के लिए आया है, विज्ञान की उड़ान उड़ता रहता है। परन्तु चतुर्थ ने कहा नहीं, यह संसार एक मृत मण्डल है, यहाँ संसार मृत्यु को विजय करने के लिए आता है। परन्तु उसके पश्चात् दार्शनिक ने कहा कि यह जो संसार मुझे दृष्टिपात आ रहा है, नाना तरंगों वाला, नाना रूपों में यह जो दृष्टिपात आ रहा है, यह संसार ऐसा प्रतीत होता है जैसे एक प्रकार की यज्ञशाला है, यहाँ प्रत्येक मानव याज्ञिक बनने के लिए आया है, याग कर्म करने के लिए आया है। प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि वह याज्ञिक बने। वेद का मन्त्र कहता है यागाम् ब्रह्मः सूर्य प्रवेः वेद का आचार्य कहता है सूर्य के सा प्रिय याग कर रहा है? चन्द्रमा के सा सुन्दर याग कर रहा है? मेरी प्यारी माता कितना सुन्दर याग कर रही है? यह संसार सब यज्ञशाला में विद्यमान है और विद्यमान हो करके सर्वत्र याग हो रहा है। मेरे प्यारे ! जैसे मानव का सुगन्धि देना कर्त्तव्य है। मेरी प्यारी माता याग कर रही है। वह याज्ञिक बनी है। के सा याग कर रही है? ऋषि मुनि कहते हैं माता जब पुत्र याग करती हैं तो अपने में याज्ञिक बन जाती हैं।

मेरे प्यारेमुझे स्मरण आता रहता है !, माता मल्दालसा एक समय स्वेतके तु ऋषि के आश्रम में विद्यमान थी। उन्होंने ऋषि से यह प्रश्न किया हे प्रभु मैं ममतामयी बनूंगी ! परन्तु मैं याज्ञिक बनना चाहती हूँ। मैं याग के से करूं? स्वेतके तु ऋषि ने कहा हे देवी तू याग करना चाहती है तो सुयोग्य सन्तान का होना ही तेरा याग है। वह पवित्र ! याग है। यदि तू अपने गर्भ से एक धिराज को जन्म दे देती है औरवह राजा कर्त्तव्यवादी बनता है, वह अश्वमेध और गो मेध याज्ञिक बन जाता है तो हे पुत्री तेरा ! जीवन याज्ञिक बन गया। विचार क्या? वेद की आभा में रमण करने वाला ऋषि कहता है हे मल्दालसातेरा जीवन महान् है। वह इतने वाक्य श्रवण करके वह मूल से !, अंकुर से वृक्ष बनाना जानती थी। मेरे प्यारे उसने अंकुरों से वृक्ष का निर्माण किया। कुछ !

समय के पश्चात् माता मल्दालसा के जब प्रथम पुत्र हुआ तो वह पुत्र से वार्त्ता प्रकट करती रहती थी। आत्मा से वार्त्ता प्रकट करती रहती थी और यह कहती थी कि निरंजन आत्मा है शरीर में भास रहा है परन्तुयह जो संसार है इससे तुझे उपराम होना है। यह संसार विवेकी पुरुषों का है। माता मल्दालसा ऐसे शब्दों का उच्चारण आत्मीयता से करती रहती थी। तो मेरे प्यारे जब यह बाल्य कुछ वाक्य उच्चारण करने ! लगा तो माता ने उसके हृदय को उज्ज्वल बना दिया। माता ने जब वह आत्मा गर्भस्थल में थी वह उस गर्भ में आत्मा से वार्त्ता प्रकट करती रहती थी। आत्मा से आत्मा का मिलान होता है, आत्मा से आत्मा का समन्वय होता है, आत्मा से आत्मा की धाराओं का परिवर्तन हो जाता है। मेरे प्यारे वार्त्ता प्रकट करने में बाल्य कुछ प्रबल हुआ तो ! उस माता से प्रश्न करने लगा बालक, के वल तीन वर्ष का बाल्य माता से यह कहता है कि हे मातामाता का आभूषण क्या है !? माता मल्दालसा कहती है कि आभूषण माता का उसका चरित्र है। परन्तु जब पुनः प्रश्न किया कि माता का आभूषण क्या है? तो यह कहती है मल्दालसा कि माता का आभूषण माता की वाणी है, वाणी में पवित्रवाद होना चाहिए। जब पुनः यह प्रश्न किया कि माता का आभूषण क्या है? तो वह कहती है कि माता का आभूषण माता का पुत्र है। मेरे प्यारे पुत्र ने पुनः प्रश्न किया कि माता ! का आभूषण क्या है? तो माता कहती है यागाम् ब्रह्मः वन प्रवे यागः हे पुत्रजो म !ाता पुत्र को याग की तरह प्रदीप्त बना देती है, जो ज्ञान रूपी अग्नि पुत्र में प्रवेश कर देती है तो वह माता का पवित्र आभूषण माना गया है। मेरे प्यारे पुत्र ने पुनः कहा कि ! माता का आभूषण क्या है? वह प्रश्न करता ही रहा। माता मल्दालसा ने कहा हे बालक ! हे ब्रह्मवर्चोसिमाता का आभूषण वह है कि माता का पुत्र योगी बन जाए !, माता का पुत्र संसार के वैभव में रमण करने वाला न हो, माता का पुत्र योगेश्वर बन जाए, वह लोकों में अपनी उड़ान उड़ने वाला हो, वह आत्मा परमात्मा से मिलान करने वाला हो, वह सर्वत्र राजाओं का भू बन जाए, धिराज बन करके रहे, वह माता का आभूषण माना गया है। मेरे प्यारे तू मेरी प्रिय माता है। परन्तु मैं !पुनः जब प्रश्न किया कि हे माता ! यह पुनः उच्चारण करना चाहता हूँ कि माता का आभूषण क्या है? माता मल्दालसा

कहती है सम्भवः वेदः ब्रह्माः लोकः हे बालक, हे ब्रह्मवर्चोसिमात !ा का आभूषण वह है जो माता के पुत्र को मृत्यु का भय न रहे। वह मृत्यु को अपने से दूरी कर दे। मृत्यु उसके आंगन में न रहे। उसें अन्तर्द्वन्द्व न रहे।

वह माता का पुत्र मानवीयतव और निर्भयता दोनों को प्राप्त हो और वही माता का वास्तविक आभूषण है। मेरे प्यारे बालक !मौन हो गया। ब्रह्मवर्चो ने कहा हे माता तू ! मेरी प्रिय माता है। तू ममतव को धारण करने वाली, याज्ञिक है। वह माता मुनिवरों ! याग कर रही थी। पुनः ब्रह्मचारी वर्चोसि यह प्रश्न करने लगा कि माता का कौन सा याग है? मेरे प्यारेमल्दालसा ने कहा कि माता का याग वह है जो ! माता अपने में जो शक्तियां हैं उन्हें एकत्रित करके हृदय रूपी यज्ञशाला में जो दुकदुकीओं की आहुति देती है और माता उसके पश्चात् कर्त्तव्यवादी बन जाती है, संकीर्णता की आहुति दे देती है और बालक का पालन करती है, लोरियों को देती हुई उसे ब्रह्म ज्ञान का उपदेश दे रही है, उसे तेजोमयी बनाने के लिए प्रेरित कर रही है, वह माता का प्रिय याग है। वह बालक राष्ट्र का या किसी भी क्षेत्र में गमन करने वाला हो। माता ने उसको निर्माणित करके संसार को अर्पित कर दिया है, राष्ट्र को अर्पित कर दिया है, पृथ्वी माता को प्रदान कर दिया है। पृथ्वी माता उस पुत्र को अपने में धारण कर लेती है। मेरे प्यारेमुझे स्मरण है माता मल्दालसा के तीन पुत्र थे। शिलभ्य !, प्रवाहण और दालभ्य यह तीन पुत्र थे। परन्तु वह कितने ब्रह्मवेत्ता थे? वह सदैव ब्रह्म से वार्त्ता प्रकट करते रहते थे। पांच वर्षीय ब्रह्मचारी होते ही माता से कहते हैं मातेश्वरी अब आज्ञा ! दीजिए, आपने हमें याज्ञिक बना दिया, अब हम आध्यात्मिक याज्ञिक बन गए हैं।

अब हमें आज्ञा दीजिए हम भयंकर वन में तपस्या करने जा रहे हैं। मेरे प्यारे माता ! प्रसन्न हो गयी। माता कहती है कि यह मेरा के सा अहोभाग्य है, आज मैं कितनी सौभाग्यवती बन गई हूँ, आज मेरा बाल्य ब्रह्म से वार्त्ता प्रकट करने जा रहा है, ब्रह्मचारी वर्चोसि बन करके ब्रह्मयाग करने जा रहा है। आत्मीयत्व को जानने के लिए। माता उस समय प्रसन्न हो रही है। मेरे प्यारेशिल्य !, प्रवाहण और दालभ्य तीनों भयंकर वन में जा करके संसार के विषय, वासनाओं का साकल्य बना करके काम, क्रोध, लोभ, मोह

इत्यादियों का साकल्य बना करके उसकी आहुति दे रहे हैं, ब्रह्मयाग कर रहे हैं। हृदय में उसको अर्पित कर रहे हैं और ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्म की उड़ान उड़ी जा रही है। विचार क्या? मेरे पुत्रो! माता कितना प्रिय याग कर रही है दार्शनिक कहता है यह ! जो संसार है यह एक प्रकार की यज्ञशाला है। मानव याग करने के लिए आया है। एक मानव अपने गृह में प्रातःकालीन अग्नि की पूजा कर रहा है, अग्नि होत्र कर रहा है। अग्नि होत्री बन करके अग्नि को उद्बुद्ध कर रहा है, उद्बुद्ध करता हुआ मेरे पुत्रो ! प्रकाश में लाता है, अपने को, अपनी आत्मा को उद्बुद्ध चेताने के लिए वह चैतन्य ब्रह्मणः चेताने के लिए अग्नि उद्बुद्ध हो जाती है। वास्तव में यह अगिन सन्निधान मात्र से ही सप्त जिह्वा वाली बन जाती है। कहीं काली बन जाती है, कहीं दुर्गे बन जाती है, कहीं ब्रह्मचारिणी बन जाती है। यह सप्त जिह्वा वाली अग्नि यज्ञशाला में प्रदीप्त हो जाती है। मेरे प्यारे यह देवी सम्पदा वाले देवी की पूजा करते रहते हैं। देवी की पूजा करनी ! चाहिए। देवी कौन है? मेरे प्यारेकहीं वह देवी सरस्वती के रूप में रहती है !, कहीं याज्ञिणी के रूप में रहती है, कहीं वह त्रिखण्डा बन करके रहती है, कहीं वह शक्ति रूप बन करके गति करती है। वह नाना रूपों में समाज का, मानव का कल्याण करती है। विचार विनिमय क्या? मुनिवरों वह देवी सम्पदा वाले देवी की पजा करते हैं। मुझे ! जैसे !स्मरण है बेटायह काल की आभा गति कर रही है, एक ऐसी काल बुद्धिमानों ने निकासा कि यागों का चलन होता रहा। मुनिवरों कृषक इस पृथ्वी के गर्भ में बीज ! की स्थापना करता है और स्थापना करके यह देवी की पूजा करता है। वह देवी क्या है? उसे कहीं प्रथा कहते हैं, कहीं चन्द्र घण्टा कहते हैं। उसकी उपासना उसके गर्भ में सुगन्धि भरण कर देती है, जागरूक बन करके सुगन्धि देता है। जिस समय वृष्टि हो जाए वह मेघ मण्डलों की महानता की उत्पत्ति हो करके धीमी धीमी वृष्टि हो करके यह पृथ्वी, यह माता बन करके यह सृष्टि जो याज्ञिक है यह तपती रहती है और तपने के पश्चात् यह संसार को सुगन्धि देती है। यह संसार को अन्नाद प्रदान कर देती है तो मेरे पुत्रो यह कितनी आभामयी गति करने वाली विचित्रवती मानी गई है। विचार विनिम ! क्या? बेटा प्रत्येक मानव !मैं विशेष चर्चाओं में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। मुनिवरों !

याज्ञिक बनाहुआ है। मैं यागों की चर्चा कर रहा हूँ। मेरी प्यारी माता याग कर रही है। पुत्र माता की परिक्रमा कर रहा है, माता का गुणान कर रहा है, उसकी पूजा कर रहा है, याग कर रहा है। शुभ कर्मों का नामोकरण याग है। राजा अपनी प्रजा का पालन कर रहा है। राजा अपने राष्ट्र की प्रजा को एकत्रित करके अश्वमेध याग करता है और अश्व नाम यहाँ राजा को कहते हैं। मेध नाम प्रजा का है। दोनों सुगठित हो करके राष्ट्र की जो सुगन्धि है, याग है। राजा के राष्ट्र का याग क्या है? राजा का चरित्र ही राजा का राष्ट्र है और वही चरित्र ही उसका याग हैं मानो वह अश्वमेध याग कर रहा है।

मुझे स्मरण है हमारे यहाँ एक समय श्रुतके तु राजा थे। वह रघुवंश में थे। महाराजा सुखमंजस के महापिता थे और वह राजा महान् थे। उनके पुत्र का नाम सबरके तु था। मेरे प्यारे ऐसा मुझे स्मरण है कि उस राजा के मन में क्या आया कि मैं अश्वमेध ! याग करूं। उन्होंने स्वर्ण से सुसज्जित करके एक अश्व को राष्ट्र में त्याग दिया और राष्ट्र में त्यागने के पश्चात् उसे किसी ने ग्रहण नहीं किया। जब ग्रहण नहीं किया तो राजा ने उस काल में प्रजा को एकत्रित करके एक दूसरे का कोई ऋणी तो नहीं है प्रजा में यह प्रश्न किया गया। मेरे प्यारे कोई ऋणी नहीं है। राजा ने प्रजा !प्रजा ने कहा भगवन् ! से कहा, तुम्हारे यहाँ पितर याग होता है? प्रजा ने कहा प्रभुहोता है। प्रजा से कहा !, क्या तुम देव याग करते हो? प्रत्येक गृह में अग्निहोत्र होता है अथवा नहीं? मेरे प्यारे ! !प्रजा ने कहा भगवन्जब आपका आदेश है, आचरण है, आपका राष्ट्रीय नियम बना हुआ है उसको कौन प्रजा ऐसी है जो उसको अपना नहीं सकती।

मेरे प्यारेराजा ने यह विचारा !, मेरे राष्ट्र में कोई एक दूसरे का ऋणी नहीं है। उन्होंने प्रजा को एकत्रित किया और अश्वमेध याग को रचाया क्योंकि संसार में दिग्विजय राजा बन गए थे नम्रता से। परन्तु राजा का नियम क्या था? वह के सा याग करते थे? बेटा ! प्रातःकालीन सूर्य उदय होने से पूर्व अपने आसन को त्यागना और त्याग करके पति पत्नि अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके अग्निहोत्र करना, देवताओं का आह्वान करना, देवयाग करना, ब्रह्म चिन्तन करना, उसके पश्चात् वह फिर से उद्योग करते थे। उनके घर के आँगन में एक सूक्ष्म सी भूमि प्रदान थी और उसमें मुनिवरों अन्नाद को उत्पन्न !

करने का कर्म करते थे। उसके पश्चात् अपने राष्ट्र में भ्रमण करना, उस क्रिया में समाज को लाना, समाज के नियमों का पालन करना। मेरे प्यारे वह राजा अश्वमेध याग कर ! सकता है जो इस प्रकार की नियमावली को धारण करता है। राजा ने अपने यहाँ वह याग किया। अश्वमेध याग जब किया प्रजा के सुखद के लिए, प्रजा के वैभव को संग्रह न करने वाला राजा और प्रजा को सुसज्जित बनाना, ज्ञान और विवेक में परणित करने का नाम, कर्त्तव्यवाद में लाने का नाम, स्वतः कर्त्तव्य में अपने को लाने का नाम बेटा राजा अश्वमेध याग करता है। अश्वमेध का अभिप्राय यह है कि मेधाः ब्रह्मणः प्रवेः ! वह कहते हैं कि मेरे राष्ट्र में मेधवी पुरुष होने चाहिए। मेधावी उसे कहते हैं जो अपने में विचित्र होते हैं।

लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाले होते हैं। ज्ञान और विज्ञान को सुसज्जित रूप से धारण करते हुए अपने में महान् बनते हुए प्रजा को ऊँचा बनाते हैं। विचार विनिमय क्या? बेटाराजा ने अश्वमेध याग किया। राजा अश्वमेध याग कर रहा है। वह याज्ञि !क है। राजा प्रजा के सुखद के लिए अपने को तपस्वी बनाता है। अपने को याज्ञिक बनाता है और मुनिवरों प्रजा को याज्ञिक बनाता है। प्रजा में ऋणी एक दूसरे का न रहना ! के से ऋणी रहता है !ही वही उसका महान् याग है। मुनिवरों? राष्ट्रीय जो नियमावली बनी हुई होती है कि मेरे राष्ट्र में यदि एक दूसरे का सहायक समाज नहीं है तो मेरा राष्ट्र जागरूक नहीं रहा है। यदि एक मानव दूसरे के भक्षण करने के लिए तत्पर है तो मैं उस प्रजा पर शासन करने योग्य नहीं हूँ। ऐसा जब नियम राजा अपने विचारों से जब नियमित करता है, उसको धारण कराता है प्रजा को वह प्रिय याग कर रहा है। के सा याज्ञिक बना हुआ है। के सा यागमय जीवन है राजा का। बेटा इस प्रकार ! जब राजा अपने में सुसज्जित बन जाता है तो प्रजा उससे पूर्व महत्ता को प्राप्त हो करके कर्त्तव्यवाद और याज्ञिक बनती है। याग का अभिप्राय है अपने में सुसज्जित होना, अपने को पवित्र बनाने का नाम याग माना गया है।

आओ मेरे पुत्रो मैं विशेष चर्चाएं तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं व्याख्याता नहीं ! हूँ। के वल तुम्हें परिचय देने के लिए आयाह ू। विचार क्या? मुनिवरों दार्शनिक ने !

कहा यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है।प्रत्येक मानव ऊपर उड़ान उड़ता है कि यह संसार क्या है? यह ब्रह्माण्ड एक प्रकार की यज्ञशाला है। बेटा यहाँ याग हो रहा ! यह पृथ्वी मण्डल !है। जब विचारा जाता है के सा प्रिय याग हो रहा है। जब मेरे प्यारे एक लोक के रूप में रहता है। द्वितीय पृथ्वी पर लोक के रूप में रहती है। परन्तु इसको कौन चक्र में, कौन याज्ञिक बना हुआ है बेटा!? सूर्य की नाना प्रकार की किरणों, सूर्य की महान् शक्ति नाना पृथ्वियों को अपने में धारण कर रही हैं। नाना पृथ्वियों को धारण करके वह सूर्य याग कर रहा है। परन्तु वह जो द्यौ है वह द्यौ से सूर्य प्रकाश लेता है, वह द्यौ प्रकाश में सूर्य को लाता है तो वह सूर्य याग कर रहा है। वह वनस्पतियों को तपा रहा है, कामधेनु को तपा रहा है, माता को तपा रहा है, लोकों को तपा रहा है। तीस लाख पृथ्वियों को तपा रहा है। मेरे प्यारेके सा प्रिय याग कर रहा है !? तप रहा है, तपा रहा है।

सुगन्धि बना रहा है, तेजोमयी बना रहा है। उसको अपनी गतियां दे रहा है। वह के सा प्रिय याग हो रहा है। वह के सा महान् चक्रमयी याग हो रहा है। इसको मेरे प्यारे ! अश्मेध याग कहते हैं। अश्वमेध याग के से हो रहा है? परमात्मा जो अश्वमेध याग कर रहा है, समाज को सुसज्जित और प्रकाश में लाने के लिए प्रातःकालीन सूर्य उदय हो रहा है, प्रकाश दे रहा है, प्रकाशित बन रहा है। एक एक कण में प्रकाशित हो रहा है। नाना पृथ्वियां प्रकाशित हो रही हैं और उस प्रकाश का ेले करे मानव समाज प्रकाश में रत्त हो रहा है।

विचार विनिमय क्या? मैं विशेष चर्चाओं में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता यहाँ पर अश्वमेध याग राजा सगर के पिता ने किया राजा सगर अब अभिमान में परणित हो करके याग करने लगा। अश्वमेध याग करने लगा, उन्होंने जैसे अश्व को त्यागा स्वर्ण से लाद करके, महर्षि कपिल ने उसे अपने आश्रम में कृत कर लिया। तो राजा सगर के नाना राजकीय राजकुमार, सेनाएं जब उसको ग्रहण करने के लिए गयीं, बेटा कपिल मुनि के यहाँ ! अश्व प्राप्त हो गया। कपिल मुनि सदा विज्ञान में रत्त रहते थे, महाराजा कपिल ने उनको सबको नष्ट कर दिया। परिणाम क्या? जो राजा अभिमान में आ करके, अयाज्ञिक बन

करके अश्व याग कर रहा है वह अपने को नष्ट कर रहा है। तो मेरे प्यारे मैं विशेष ! चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ परिचय दे रहा हूँ और वह परिचय क्या है? कि राजा अपने में महान् बने, माता अपने में महान् बने। माता अपने पुत्र को महान् बना देती है, वह याग कर रही है। पृथ्वी खनिज दे रही है खाद्य दे रही है, याग हो रहा है। मानव एक दूसरे से स्नेह कर रहा है, माता पुत्रेष्टि याग कर रही है। मेरे प्यारे मेघ मण्डलों ! से वृष्टि होती है तो वह याग कर रहे हैं। समुद्रों से तेजोमयी जलों का उत्थान हो रहा है, वह याग हो रहा है, वह सोम पिया जा रहा है। सोम को पान कर रहा है प्रत्येक प्राणी अणु परमाणु बन रहा है। इससे मानव का जन जीवन महान् बनता है। आओ मेरे पुत्रो एक !मैं तुम्हें विशेषता में न ले जाता हुआ उच्चारण कर रहा था मुनिवरों ! दूसरे की मानव गाथा गा रहा है। विशुद्ध रूप से जब मानवअपने में गाथा गाता है तो वह याग कर रहा है। जैसे वेदमन्त्र प्रभु महिमा का वर्णन कर रहा है, देवताओं का आह्वान करता हुआ मानव याग कर रहा है। वेद वाक्य कहता है कि मुनिवरों एक ! दूसरे की गाथा गाना, एक दूसरे में पवित्रता लाना, एक दूसरे को सहयोग में लाना, एक दूसरे को कर्त्तव्य की भावना में लाना ही याग माना है। वह यागिक पुरुष कहलाता है। बेटा एक महापुरुष साधना में प्रवेश करता है तो वह प्राण को एक में ला करके ! साधना कर रहा है। वह प्राण सूत्र का मिलान कराना चाहता है। वह उस योग में ही जाना चहाता है। जैसे वैज्ञानिक दो तरंगों का समन्वय करके यन्त्रों का निर्माण कर लेते हैं। परमाणुओं को सुगठित करके परमाणु शक्ति को संचित्त कर लेते हैं, शब्दों की आभा को ले करके विज्ञान में रमण करके यन्त्रों का निर्माण कर लेते हैं। शब्दावली यन्त्र बन जाते हैं। तो मेरे पुत्रोकौन योगेश्वर महापुर !ुष याग कर रहे हैं? विचार विनिमय क्या? मुनिवरों प्रत्येक वेदमन्त्र प्रभु की गाथा गा रहा है। माता का पुत्र माता का वर्णन ! सम्भवतः यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। यह गाती !कर रहा है। मेरे प्यारे यह ममतव को धारण होता रहता है। !रहती है पुत्रो

आज का हमारा यह वाक्य क्या कह रहा है? यहाँ वेद के आचार्यों ने, ऋषि मुनियों ने यह कहा है, दार्शनिकों ने कहा है बेटा यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है। यहाँ !

प्रत्येक मानव याज्ञिक कर्म करने के लिए आया है, याज्ञिक बना हुआ है। माता अपने पुत्र को महान् जन्म दे रही है तो याग कर रही है उस आभूषण को अपना रही है जिसको अपना करके यहाँ श्वेतके तु, प्रवाण, शिलभ्य और दालभ्य को जन्म देने वाली माता। सन्तान को जन्म देने वाली माता अपने में तप कर रही है। वह तपस्या में रत्त हो रही है। तप कर रही है। राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं कर रही है। राजा कहता है हे देवीतू राष्ट्र का अन्न ग्रहण कर। कौशल्या कहती है कदापि नहीं। राष्ट्रीय अन्न रजोगुण !, तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है। मैं उस अन्न को ग्रहण नहीं करूंगी। माता के गर्भ से राष्ट्र का जन्म होना होगा तो माता कौशल्या अवश्य बनना होगा। मेरे प्यारेम !ाता कौशल्या राम को जन्म देने वाली थी, जो त्याग में स्वयं कला कौशल करके, तप कर रही है, दार्शनिकता में रमण कर रही है। अपने को गायत्राणि छंदों में ले जा रही है। मेरे प्यारेगर्भ में रहने वाला शिशु पनप रहा है !, आनन्दवत् ज्ञान को प्राप्त कर रहा है, त्याग और तपस्यामयी बन रहा है। मेरे पुत्रो प्रत्येक मानव को इस संसार रूपी याग ! आज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का !को विचारना होगा। यह है बेटा अभिप्राय यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, एक दूसरे के ऋणी न रहते हुए परमपिता परमात्मा के सुयाग को रचाते चले जाएं। शेष चर्चाएं मैं बेटा कल प्रकट करूंगा। !

कल बेटा मैं उद्दालक गोत्र के ऋषियों की चर्चा करूंगा। भिन्न भिन्न उद्दालक गोत्रीय ! !ऋषि अपने आश्रम में विचार करके याग की उड़ान उड़ रहे थे। कल तुम्हें मैं बेटा उद्दालक गोत्रीय ऋषियों के समीप ले जाऊँगा। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन होगा। इसके पश्चात् यह वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। निवास स्थान श्री : बैजनाथ जी अब्रोल पंजाबी बाग

२० 19 01 1983 पुष्प 40 पुरातन काल का आधुनिक काल से उसका समन्वय, इतिहास

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज ह !म तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से,

जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ ये पठन पाठन का क्रम परम्परागतों से ही, चला आ रहा है। क्योंकि इस पठन पाठन में, नाना प्रकार के व्यञ्जन होते हैं और उच्चारण करने के नाना प्रकार माने गए हैं। जैसे हमारे यहाँ वेदों की ध्वनियाँ होती रहती हैं। गान गाने वाला गाता ही रहता है। कहीं वह गान जटा पाठ में गा रहा है, कहीं माला पाठ में गा रहा है, मानो कहीं विसर्ग उदात्त अनुदात्त नाना प्रकार के वेद के पठन पाठन में ऋषि मुनियों ने बेटा अनुसन्धान किया और यह उन्होंने कहा है कि ! मानव जब गान गाने लगता है तो एक शब्द को, उसके पश्चात् द्वितीय शब्द की धारा को जन्म देता है, वह उसका जन्मदाता बन जाता है परन्तु जो मानव हृदय से गान गाता है वह बेटा गाता ही रहता है। !

मुझे स्मरण आता रहता हैऋषि मुनि जब गान गाते रहते थे ,, तो बेटा वह निर्भय ! मुझे वह काल स्मरण आता !और आत्मीयता में तन्मय हो करके गान गाते थे। बेटा रहता है जब महर्षि भृगु मुनि गान गाते थे तो गान गाते गाते इतने तन्मय हो जाते थे कि उनको कोई प्रतीति नहीं होती कि बाह्य जगत् भी है। सिंहराज आ रहे हैं, गान को श्रवण कर रहे हैं, मृगराज आ रहे हैं, गान को श्रवण कर रहे हैं, परन्तु ध्वनियाँ चल रही हैं, वायुमण्डल में वे तरंगें जा रही हैं वो ऋषि हृदय से गा रहा है।

तो विचार विनिमय क्या मुनिवरोंमानव को ! जो भी गान गाना हो, उसे हृदय से गाना चाहिए क्योंकि हृदयग्राही हो करके जो मानव गान गाता है वह उस गान को प्रकाश में और अपने को प्रकाश में रत्त करा करके बेटादेखो !, गान में ऊर्ध्वा को प्राप्त हो जाता है। जैसे बेटाआज के हमारे वेद पाठ में यागां ब्रह्मे वस्तुत !व प्रव्हा वेद का आचार्य यह कहता है कि याज्ञिक पुरुष जब याग करता है तो गान गाता है, परन्तु हृदय से जब गान गाता है तो याग उससे सिद्ध हो जाता है, वह याग में परणित हो जाता है। याग के भिन्न भिन्न प्रकार के स्वरूप हमारे यहाँ माने गए हैं। क्योंकि मानव जब नेत्रों से सुदृष्टि पान कर रहा है, उन नेत्रों का सम्बन्ध मानव के हृदय से है। हृदय और नेत्रों का दोनों का जब समन्वय होता है तो नेत्र गान गा रहे हैं। मानव जब श्रोत्रों से गान गाता हैवह संसार के चित्रों को ,, शब्दों को अपने में ग्रहण कर रहा है। शब्दों के चित्रों

को ला करके हृदय को प्रदान कर रहा है। वह हृदय से शब्दों का ग्रहण कर रहा है। वह याग हो रहा है, वह साकल्य लाते हैं, हृदय में परणित कर देते हैं। तो मेरे प्यारे ! देखो, ऐसी पांच ज्ञानेन्द्रियों का जो विषय है वह सवत्र मानो देखो, उसकी जो स्थिरता है वह मानव के हृदय में परणित हो जाती है, वह हृदय में गान गाने लगती है। जैसे बेटा मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में वर्णन किया कि माता जब हृदय से गान गाती ! है और माता के हृदय में जब हम जैसे पुत्र जरायुज रहते हैं तो उस समय मानो माता गान गाती है, हृदय से जब गान गाती है तो माता ,मल्दालसा की भांति अपने गर्भस्थल में पुत्र को ब्रह्मवेत्ता बनाने की उत्सुकता में लग जाती है।

तो मेरे प्यारे केवल यह कि मानव ,मैं आज तुम्हें विशेष विवेचना देना नहीं चाहता हूँ ! को जो भी गान गाना चाहिए वह हृदय से गाना चाहिए। क्योंकि जितना भी संसार का कर्म हैवह सर्वत्र एक गान के रूप में है। जितना महानता वाला कर्म है मेरे प्यारे ! अपने अन्तःकरण में अपने !माता मल्दालसा जब गान गाती रहती थीं तो मेरे प्यारे हृदय की प्रति आस्वा मानो देखो, उसको ग्राही बना लेती थी परिणाम ये मेरे पुत्रों ! क्या वह गान गाती रहती थी और जबवह गान गाती थी तो पांच वर्ष का बालक ब्रह्मवेत्ता बन करके माता से आज्ञा पाता। माता मैं अब ब्रह्म वर्चोसि अग्नि में जाना ! चाहता हूँ। माता प्रसन्न हो रही है और यह उच्चारण कर रही है मेरा जो पुरुषार्थ है, मेरा जो मानो गान गाना है, मेरा जो शुभ कर्म है, वह जो मैंने शुभ गान गाया है वह मेरा सफल हो गया है। माता अपने में हर्ष ध्वनियाँ कर रही हैं और यह उच्चारण कर रही हैं कि मैं कितनी सौभाग्यशाली हूँ, आज मेरा पुत्र मानो देखो, बेह्मवेत्ता बनने के लिए जा रहा है।

तो विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रोदेखो !, माता वह कहलाती है। सु माता जिसका , बालक ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्माग्नि में प्रवेश करने वाला हो, मानो ब्रह्माग्नि को अपने में धारण करने वाला हो। विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रोंमैं देखो !, विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ आज का हमारा वेदमन्त्र यज्ञं भवा सम्भवत्ते मेरे प्यारे! देखो, याग में गान गाया जाता है। उद्गाता गान गा रहा है, मानो देखो, उद्गम गान गाने वाला स्वरों

से गा रहा है। जटा पाठ, घन पाठ, माला पाठ, विसर्ग पाठ, उदात्त अनुदात्त, रेणा अस्वत पाठ, दीपावली गान, स्वेत गान, नाना प्रकार के गानों का वर्णन हमारे वैदिक साहित्यों में हमें प्राप्त होता रहा है। मानो देखो, समय समय पर देखो, ऋषि मुनियों ने अपनी स्थलियों पर गान गाए हैं और देखो, मानव ही पान नहीं करता है उस गान को मृगराज, सिंहराज एक पंक्ति में विद्यमान हो करके उस गान को श्रवण करते हैं। क्योंकि उसके शब्द में इतनी शक्ति है, इतनी सत्ता है क्या मानो वह सत् से पिरोया हुआ , शब्द है, अहिंसा परमोधर्मः से पिरोया हुआ वह शब्द है जो भी श्रवण करता !मेरे पुत्रों , है वह शान्त मुद्रा को प्राप्त हो जाता है, आओ मेरे प्यारे वह अपनी महत्ती को प्राप्त ! करने लगता है।

तो विचार विनिमय क्या? हम अपने में मानो देखो, अपनी महती को जानने वाले बनें। अब मैं विशेष विवेचना आज देना नहीं चाहता हूँ क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी भी ! दो शब्दों की आज विवेचना प्रगट करेंगे। उससे पूर्व अपने वाक् अश्रधा भे सम्भवः हम अपने को जानते हुए चले जाएं। अपनी प् !ममत्यं ब्रहे अस्तोः मेरे पुत्ररतिभा, अपनी ज्ञान इन्द्रियों, कर्म इन्द्रियों को जान करके हृदय स्थली में अपने हृदय से गान गाने वाले बनें। हृदय से ही मानो देखो, प्रभु की सृष्टि को, जब हम निहारते रहते हैं तो वैज्ञानिक बन जाते हैं। उस परमपिता परमात्मा की सृष्टि को जब, आभा में दृष्टिपात करने लगते हैं तो उस समय हम भक्तजन बन करके ऋषियों की आभा में, मानो मुनियों की कोटि में प्राप्त हो जाते हैं। तो अब मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, अब मैं अपने प्यारे पुत्र अपने दो विवेचनामयी शब्दों का उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् समभवा दिव्यां मया वर्णा वसु वाचनं प्रवा स्वस्ति। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अमृत की !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! वृष्टि कर रहे थे, वह मानो हृदय की चर्चा कर रहे थे। हृदय मानव का इतना पवित्र और इतना महान् होना चाहिएजिससे प्रत्येक इन्द्रिय जो अपने स्वरूप में गान , गा रही है वह हृदय में समाहित हो जाएं और प्रत्येक इन्द्रियों का सम्बन्ध हृदयग्राही बन करके वो देवताओं की आभा में और देवताओं की पंक्ति में जाने वाला बन जाए। मेरे

पूज्यपाद गुरुदेव अहिंसा परमो धर्म की विवेचना करते रहते हैं। परन्तु वाक् तो बहुत प्रिय हैं, अहिंसा परमोधर्मी मानव को बनना चाहिए। क्योंकि यह तो मानव का स्वभाव है। आत्मा का स्वभाव बना हुआ है कि प्रत्येक जो जन चेतना है उस चेतना में आत्मा , का स्वरूप भी दृष्टिपात किया जाए। परन्तु संसार का जो यह नाना प्रकार का जो नृत्य हो रहा है इस नृत्तिका के मानो वृणी असुतों में इनकी आभा और इनकी वृत्तियों को प्राप्त करके मानव अपने से दूरी हो जाता है। जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को आज कुछ परिचय देना चाहता हूँ। वहाँ जहाँ एक , हमारी आकाशवाणी जा रही है वहाँ एक यजूंषि मानो याग की याग पूर्णता को प्राप्त हो रहा है। परन्तु मैं आज उस यज्ञमान मानो अपने हृदय से मेरी सदैव यह कामना रहती है क्या उनका सौभाग्य अखण्ड बना रहे। ब्राह्मणतव जो वेद का पठन पाठन अपनी वाणी से उद्गान गा रहा है उसका भी सौभाग्य अखण्ड बना रहे क्योंकि जिस वेद के पठन पाठन से समाज में रुचि हो करके जहाँ इस काल में राष्ट्र की पद्धतियाँ भ्रष्ट हो रही हैं, वह काल मुझे स्मरण आता रहता है। जहाँ राष्ट्रीयता में एक भाग ऐसा द्रव्य का विभक्त किया जाता था, जहाँ बुद्धिमान वेद का पठन पाठन करने वाले ब्राह्मणजन, विवेकी पुरुषों का राष्ट्रीयता से उनका सब क्रिया कलाप, उनका सब भोजन छादन का प्रबन्ध होता था। परन्तु आज तो वह काल दूरी चला गया है। मैं उस काल को स्मरण कराने के लिए नहीं आया हूँ।

विचार विनिमय यह है, कि जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है यह परम्परागतों , से ही, मानो देखो, पुण्य भूमि का क्षेत्र रहा हैं इसमें नाना ऋषिवर परम्परागतों में भ्रमण करते रहे हैं। उनके मानो देखो, आश्रम उनके यहाँ अनाथ पुत्र पुत्रियों का पालन भी होता रहा हैं मानो देखो, यहाँ राजा दुष्यन्त इत्यादियों का भी गमन होता रहा है। परन्तु देखो, जहाँ इस भारत इस राष्ट्र का नामोकरण देखो, भरत के रूप में परणित हुआ। मानो देखो, यह वह पुण्य भूमि रही है जहाँ से एक राष्ट्रीय पुष्प का पुष्पांजली के रूप में एक राष्ट्र का अस्वत बन करके पुत्र बन करके रहा है। तो मैं इस सम्बन्ध में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन करा रहा हूँ कि यह पवित्र नदियों का स्थल, महापुरुषों का

क्षेत्र रहा है। यह किसी काल में खण्डवा नामक वनों के नामों से वर्णन होता रहा है। देखो, खण्डवा एक वन कहलाता है क्योंकि हिमालय से ले करके मानो देखो, कुछ हिमालय में ऋषियों का क्षेत्र चला आया देखो, कुछ सप्त ऋषियों का एक आसन था। उसके ऊर्ध्वा भाग में यहाँ एक कजली वन कहलाता था जहाँ ऋषि मुनियों की सदैव तपस्या की स्थलियाँ रही हैं। इसके पश्चात देखो, यह स्थली देखो, जब हिमालय के निचले भाग में यह नदियों का क्षेत्र यह नदियों का स्रोत्र मानो पवित्र जलों का स्रोत बहता हुआ जब इस क्षेत्र में आया तो यह नाना विभाग के रूप में परिणित रहा। कुछ काल ऐसा रहा कि नदियों की धारा किसी आँगन को गमन कर रही है, कोई धारा किसी आँगन को गमन कर रही है परन्तु नदियों के तटों पर रहने वाले ऋषि मुनि , देखो, कण्व जैसे ऋषि भी जिनका महान् जीवन तपस्या में रहा है, जहाँ शकुन्तला महादेवी ने शिक्षा का अध्ययन किया है। ऋषि के चरणों में ओत प्रोत हो करके मानो देखो, शिक्षा का अध्ययन मानो कण्व ऋषि महाराज इतने महान् तपस्वी थे क्या मानो देखो, उन्होंने भरत जैसे भुजों में एक यन्त्र स्वातित नामक एक यन्त्र स्वजन्म कहलाता था जो उनके मानो देखो, बाहु में पिरोया जाता था। माता पिता से भिन्न कोई भी उसको अपने में धारण करे तो सर्प बन करके मानो देखो, यन्त्र इसी प्रकार का था क्या उसकी प्रतिक्रिया भिन्न हो करके मानो वह उसको मृत्यु दण्ड तक प्रदान कर देता था तो ऐसे मानो देखो, ऋषि मुनियों की यह तपस्यामयी स्थली रही है। इस स्थली में एक समय महर्षि बटुक मुनि महाराज ने यहाँ आयुर्वेद की कुछ लेखनियाँ भी लेखनित की हैं। आयुर्वेदाचार्यों का भी स्थल मानो यहीं रहा है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव किसी काल में ! खण्डवा वन में जब भ्रमण करते रहते थे तो मानो देखो, नाना ऋषियों के दर्शनार्थ के लिए इस खण्डवा वन में आए और भी नाना ऋषि आते रहे हैं।

विचार विनिमय क्या मानो देखो, यह ऋषि मुनियों की पवित्र स्थली है उसी पवित्र , स्थली पर पवित्र ये यागों का आयोजन, ये पवित्र यागों की प्रतिभा मानो देखो, जागरूक हो रही है। आज मुझे बड़ा आश्चर्य आता रहता हैमानो देखो ,, स्थानां ब्रह्मे सम्भवः, पूज्यपाद गुरुदेवने कई कालों में वर्णन भी किया !, मैं भी इस वाक् की पुनरुक्ति

करता रहता हूँ कि जहाँ इस खण्डवा वन में, जितने कण्व ऋषि और भी स्वेत्ताम, और भी नाना ऋषि तपस्या करते रहे हैं। उन सबका राष्ट्रीयता से मानो देखो, आहार का प्रबन्ध, आहार का मानो देखो, उनकी कृतियाँ बना करती थीं। राजा के यहाँ से वह द्रव्य आता था। जिस राज्य के द्रव्य में किसी प्रकार का देखो, तमोगुण और रजोगुण न हो, उस अन्न को ऋषि मुनियों के लिए उन्हें प्रवाह से प्रदान किया जाता क्योंकि , वेद के पठन पाठन करने वालों को रजोगुणी और तमोगुणी प्रवृत्ति वाला जो अन्न है। वह उसकी आत्मा को हनन कर देता है, मानो देखो, उसकी बुद्धि का हनन कर देता है। हमारे यहाँ मृत्युञ्जं भवा सम्भवेः जो मृत्यु कर होता है, उस अन्न को महापुरुषों को प्रदान नहीं करना चाहिए। ब्राह्मण समाज की मृत्यु का यदि कोई मूल कारण है तो वह कारण देखो, मृत्यु का आहार करना है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने बहुत सी लेखनियाँ इस प्रकार की बद्ध की हैं जिसके ऊपर विचार विनिमय करना है। परन्तु देखो, आज मेरा अन्तरात्मा बहुत प्रसन्न हो रहा है, कण्व जैसे ऋषि, दुष्यन्त जैसे राजाओं की जहाँ तपस्या करने की जहाँ स्थली रही है, कण्व की जहाँ तपस्या करने की भूमि रही है जहाँ शिक्षालय ऊर्ध्वा में गति करते रहे हैं। जहाँ वेद के पठन पाठन , करने वाले ब्राह्मणजन मानो देखो, तपस्या में परणित रहे हैं। आज मानो वहाँ याग जैसे पुण्यातम् ब्रहे पुण्य कर्माणास्ते वे पुण्य कर्म होते रहते हैं। मैं भी उस भूमि को निहारता रहता हूँ। मेरा बड़ा सौभाग्य है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह प्रायः वर्णन कराता रहता हूँ।

परन्तु यहाँ से कुछ दूरी पर कजली वनों में, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भारद्वाज मुनि की चर्चा करते रहते हैं। भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला जो मानो देखो, उनका विज्ञान , सूर्य में गति करना, मंगल में गति करना, बुध में गति करना, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में गतियाँ होती रहती थीं। वह भी मानो देखो, यहाँ से दूरी नहीं। देखो, उन कजली वनों में तपस्या की और विज्ञान की एक भूमिका बनती रहती थी मैं आज देखो, पुनः से पूज्यपाद गुरुदेव को इतने समय के पश्चात् उस वाक्यों का परिचय दे रहा हूँ। ! यह !हे मेरे देव ,जिनको ऋषि मुनियों को लाखों लाखों वर्ष हो गए हैं। मैं अपने पूज्य

स्थली हमारी आकाशवाणी उनका चरित्र उनके चित्र मानो देखो, वर्तमान में भी मानव के हृदय में गमन कर रहे हैं। मानव के हृदयों में, मानव की पृष्ठभूमियों में मानो देखो, उपस्थित हो रहे हैं।

विचार विनिमय क्या है मेरे भगवन मैं उस यज्ञमान को अपने हृदय की कामना सदैव ! प्रगट करता रहता हूँ, हे यज्ञमान तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। हे ! ब्राह्मणत्वतेरे जैसे उद्गान गाने वालों का देखो !, राष्ट्रीयता से सर्वत्र निश्चित हो करके तू वेद का पठन पाठन कर सकने वाला होता परन्तु आज के समय में, जिस काल में जन्म हुआ है उस काल में अपने में पूर्ति करने का स्वतः ही प्रयास करना होता है। यहाँ राजाओं के यहाँ से ब्राह्मण का प्रबन्ध होना चाहिए। ब्राह्मण की कृतियों में उसकी विद्या का अनुगान होना चाहिए जिससे उद्गान गाने वाला स्वतन्त्र रूपों से गान गा , सके और जो गान गाने वाला, वेद के पठन पाठन करने वाले को उदर की पूर्ति का सदैव भय लगा रहता है, वह स्वतन्त्र रूपों से वेद के पठन पाठन में वह एक बाधक बन जाता है। इसी प्रकार बहुत पुरातन काल में हमारे यहाँ ऋषि मुनि, जितने वैज्ञानिक वेद के पठन पाठन करने वाले होते थे इसीलिए राजा के राष्ट्र में मानो देखो, नाना प्रकार के मत मतान्तरों की मानो देखो, भूमिका बनती जा रही है क्योंकि बेद के पठन पाठन का प्रबन्ध यदि राष्ट्र से हो विवेकी पुरूष हो तो यह जो नाना प्रकार की जो रूढ़ियाँ बनती है और वह रूढ़ि कैसी बनी है क्या एक मानव, मानव के रक्त का पिपासी बन गया है जब एक दूसरे रक्त का पिपासी केवल धर्म के नामों पर बन रहा है तो राष्ट्र की व्यवस्था सुन्दर नहीं है मैं तो यह उच्चारण कर सकता हूँ क्या यह राजा नहीं है , मानो देखो, यह प्रजा के वैभव को संग्रह करने वाले मानो देखो, यह पामर कहलाते है। यह राजा नहीं हैयह पामर की कोटि में आते है राष्ट्र की कोटि में मानो देखो ,, वे आते हैं जो विवेकी पुरूषों का अपने राष्ट्र में आदर करते है। अपने राष्ट्र में मानो देखो, उनकी पृष्ठ भूमि को ले करके उस ज्ञान का प्रसार होता है जिससे रूढ़ियाँ धर्म के नाम पर रूढ़ियाँ न पनप जाएं और रूढ़ि का पनपना ही राष्ट्र के यहाँ देखो, रक्त का बहना हैरक्तभरी क्रान्ति आने के संदेह यह बने हुए है मैं ,ने बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद

गुरुदेव से वर्णन किया था मानो देखो, यह नाना प्रकार की रूढ़ि हैं जो राष्ट्रीयता की , देखो, विद्या न होने से देखो, आज के राजा को यह प्रतीत नहीं है क्या ब्रह्म क्या है ? आज ?आज के राष्ट्र को यह प्रतीत नहीं विवके किसे कहते हैआधुनिक काल के राष्ट्र को यह प्रतीत नहीं है कि वेद किसे कहते हैवह आज देखो ?, ब्रह्मज्ञान क्या है ? यदि मानो देखो, राजाओं को यह प्रतीत हो जाए क्या ब्रह्मज्ञान यह है ब्रह्मज्ञान केवल दो ही शब्दों में व्याप रहा है ब्रह्मज्ञान दो ही शब्द हैं देखो, कर्तव्यवाद का पालन करना , कतर्व्यवाद में देखो, संसार का जितना भी व्यवहारिक जीवन है देखो, उस सबकी प्रतिभा आ जाती है और जब देखो, ब्रह्मज्ञान का द्वितीय जो स्वरूप है वह आत्मा का चिन्तन करना आत्मा को जानना है क्योंकि देखो, उसको आत्मा के आत्मा जब इस संसार शरीर में आता है जब नग्न आता है और जब जाता है तो जब नग्न जाता है मानो देखो, यह संसार की जितनी भी स्वर्णमयी आभामयी तरंगे गमन कर रही है वह देखो, वे देखो, तरंगे सब यहीं रह जाने वाली है। यह मानो देखो, राजाओं को दो वाक्यों का जब ज्ञान हो जाता है देखो, अपनी आत्मा का ज्ञान आत्मा की प्रतिभा और देखो, व्यवहारिक ज्ञान की मुझे क्या क्या कर्तव्य का पालन करना है जब राजा के यहाँ दो वाक्यो की विवेचना उसके समीप आ जाती है हृदय में प्रवेश कर जाती है तो मानो देखो, राजा पवित्र बन जाता है जालवी जैसे राजा मानो देखो, जो ऋषि मुनि जा करके ब्रह्म ज्ञान को लेते थे आधुनिक काल का ऐसा है कि आधुनिक काल के राजा ऐसे है। सम्भवा स्वस्ते मानो देखो, पामर की कोटि के है। आज किसी साधु को आधुनिक काल में अपनाते हैं तो इसीलिए अपनाते हैं कि यह धार्मिक बन रहा है। परन्तु यह प्रवृत्ति नहीं कि धर्म तो तेरे अन्तर्हृदय में है परन्तु उसको तू जानता नही है तू मानो देखो, बाह्य जगत में दृष्टिपात कर रहा है मानो तू जालवी जैसा राजा बन , जब जालवी राजा बनेगा मानो देखो, कोई रूढ़िवादी महात्मा चला गया उसका भी उसी कोटि में उसका जीवन हैमानो देखो ,, एक वेद का पाण्डितव को जानने वाला चला गया वह भी उसी कोटि में हैमानो देखो ,, एक पाखण्ड को ले करके जो वेद के अनूकुल जिसका जीवन नहीं है चरित्र नहीं है वह भी चला जाता है द्रव्यपति बन रहा

है वह भी साधु उसी कोटि में है। तो क्या यह राजा है या मानो देखो, एक शमशान भूमि बन रही है अरे, राज को तुझे शमशान भूमि बनाना है या बुद्धिमानों को राष्ट्र बनाना है। परन्तु देखो, इस वाक्यों को जब राष्ट्र को विचार नही होता तो रक्तभरी क्रान्ति मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वायुमण्डल की प्रतिभा को वर्णन करते हुए कहा था पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय मुझे यह कहा था, कि रक्तभरी क्रान्ति आने में कोई दूरी नही है, क्योंकि विज्ञान का दुरूपयोग हो रहा है विज्ञान के दुरूपयोग होने से मानो देखो, समाज की प्रतिभा नष्ट हो रही है विज्ञान का दुरूपयोग राजा के राष्ट्र में उस , काल में नही होता जब बुद्धिमान पुरूष होते है, वेद के पठन पाठन करने वाले, वेद की प्रतिभा को देने वाले ज्ञान का प्रसार करें। विवेकयुक्त हो करके तो विज्ञान का दुरूपयोग नहीं हो सकता। विज्ञान का दुरूपयोग भी उस काल में होता है, जब राष्ट्र को ज्ञान नहीं होता।

जब राजा को ज्ञान नहीं होता, याग जैसे कर्म नहीं होते। उनको पाखण्ड कहकर उनका अज्ञानता के कारण तिरस्कार कर दिया जाता है अज्ञानता के कारणमानो देखो ,, उसको राजा नहीं कहते। उसको राष्ट्र का कर्मचारी भी नहीं कहते। मानो देखो, वह अपने में इतना ध्रष्ट और पामर बन गया है क्या देखो, अपनेपन में ही अपनी आभा को नष्ट कर रहा है। तो ऐसा मानो देखो, मेरा तो सदैव यह विचार रहता है पूज्यपाद की आधुनिक , काल में विज्ञान का दुरूपयोग होना यह रक्तभरी क्रान्ति के मानो देखो, अवाशेष है। उसके पश्चात् द्वितीय रूप में रूढ़िवाद पनपता जा रहा है। मानो कहीं मोहम्मद के मानने वालों की रूढ़ि है, कहीं ईसा के मानने वालां की रूढ़ि है, कहीं नाना प्रकार के और भगवानों की रूढ़ियाँ हैं। यह जो रूढ़ियाँ बन रही हैंमानो देखो ,, यह रक्तभरी क्रान्ति का एक कारण बनती चली जा रही हैं।

मुझे यह वाक् स्मरण मैंने बहुत पुरातन काल में वर्णन किया था आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करना नहीं चाहता हूँ। क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव ने केवल दो शब्दों की विवेचना के लिए मुझे आज्ञा दी है। मैं उन वाक्यों में देखो, स्वतन्त्र रूपों से वर्णन कर रहा हूँ कि राजा का कर्त्तव्य है कि ऐसे बुद्धिमानों का मानो देखो, राष्ट्रीयकरण होना चाहिए।

राष्ट्रीयकरण होना चाहिए उनका कर्त्तव्य है कि विवेक और वेद की विद्या को ले करके, ब्रह्मचारियों करके नियुक्त करके मानो देखो, राष्ट्र को ऊँचा और विचारों को ऊँचा बनाया जाए। ऐसा मेरा सदैव विचार रहा है। क्योंकि रहा है ऐसा।

हमारे यहाँ जब कारण्व ऋषि महाराज अपने आश्रम में अध्ययन करते थे, उनमें इतना विवेक था कि पुत्र और पुत्रियों में उनके यहाँ कोई अन्तर्द्वन्द्व नहीं रहता था। क्योंकि वह मानव को पुत्र पुत्रियों में अन्तर्द्वन्द्व नहीं रहता है जो प्राणायाम करते हैं, साधना करते हैं। वेद के मन्त्रों का अध्ययन करके उसके ऊपर विवेचना करते हुए, निष्पन्न हो करके जो गान गाते हैं विवेक को ले करके, उस काल में सम्भवा उनके आश्रम में सिंह और मृगराज दोनों में अन्तर्द्वन्द्व नहीं रहता। पुत्र और पुत्रियों में अन्तर्द्वन्द्व नहीं रहता। दोनों को सामान्य दृष्टि से दृष्टिपात करता है वह जिज्ञासु। तो इस प्रकार के जिज्ञासु हमारे यहाँ, परम्परागतों से रहे हैं। मानो देखो, राजा उनका प्रबन्ध, राजा उनकी प्रतिभा जान करके उनके चरणों में आते थे। आधुनिक काल कितना परिवर्तित हो रहा है पूज्यपाद ! यह बात मुझे स्मरण है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव बोले कि चलो आज प्रजापति के राष्ट्र में भ्रमण कर आएं। तो प्रजापति केराष्ट्र में जब पहुंचे तो प्रजापति ने दृष्टिपात करते ही आसन को त्याग दिया। और राजस्थली को त्याग दिया और यह कहा कि आईए , पधारिए। मानो उन्होंने अन्नाद को कहा तो महापुरुष ने कहा कि मुझे अन्नाद !भगवन नहीं पाना है। राष्ट्र का जो अन्न होता है यह रजोगुण, तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है। इसको पान करना नहीं हैं परन्तु वह काल और आधुनिक काल ऐसा कि साधु , यदि कोई राजा की कोटि में ही क्यों न हो उससे नीची कोटि में क्यों न हो, और यदि वह उनके चरणों को छू ले तो अभिमान की उसमें कोई सीमा ही नहीं रहती। परन्तु देखो, इस प्रकार की आधुनिक जगत् और पुरातन भव्य जगत् के ऊपर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो मानो देखो, ब्रह्मज्ञान न होना, विवेक न होना ही तुच्छता है समाज की। क्योंकि देखो, महापुरुषों का आदर न होना, उनके प्रति उनकी विश्वसनीयता राज के आँगन से न होना ही रूढ़ि का पनपना है। रक्तभरी क्रान्ति के अवाशेष हैं। एक दूसरा एक दूसरे के प्राणों को नष्ट करने के लिए तत्पर हो रहा है, यह रक्तभरी क्रान्ति नहीं

तो और क्या है? परन्तु देखो, राजा को चाहिए कि ऐसे वेद के पठन पाठन करने वाले महापुरुषों और विवेकियों का जो ज्ञान की कुंजी को ले करके राष्ट्र में ब्रह्मचर्यत्व को प्राप्त करके प्राणायाम करने के पश्चात देखो, राष्ट्र को कुछ दे जाएं। क्योंकि राष्ट्र को सबसे प्रथम आध्यात्मिक ब्रह्मचारी देना चाहिए, उसके पश्चात् वैज्ञानिक देना चाहिए। उसके पश्चात् धर्म का प्रसार हो, वेद का प्रसार होता है।

धर्म कहाँ रहता है? आधुनिक काल का जगत् धर्म कहीं पर्वतों में स्वीकार कर रहा है, कहीं धर्मों को मानो देखो, समुद्र से पार कर रहा है। कोई समुद्रों में ही धर्म स्वीकार कर रहा है। अरे, भोले तू वेद के आँगन में चल और वेद की उस कुंजी को जान जहाँ देखो, धर्म तेरी इन्द्रियों में समाहित हो रहा है। तू अपनी इन्द्रियों को जान नहीं रहा है। इन्द्रियों का जो याग हो रहा है पूज्यपाद वर्णन कर रहे थे, देखो, जो याग हो रहा है, नेत्र नाना प्रकार के रूप संसार के विज्ञान को ला करके हृदय में लाकर स्थिर कर देता है। शब्द के साथ में चित्र आ रहा है मानो वह ,श्रवण करने के पश्चात् हृदय में स्थिर कर देते हैं और त्वचा से प्रेम आ रहा है, प्रेम के साथ में जो नाना प्रकार की वैज्ञानिक धाराएं आ रही हैं, वह भी हृदय में परणित हो रही हैं रसना से नाना प्रकार का रस , आ रहा है, नाना वनस्पति विज्ञान आ रहा है, मानो देखो, वह भी हृदय में स्थिर हो रहा है। अरे, मानवतू इस धर्म को क्यों नहीं जान रहा है !? यदि तू धर्म को जानने वाला जिस काल में बनेगा उसी काल में यह राष्ट्र और समाज पवित्र बन जाएगा। राजा नहीं जानता, राजा कहीं जाता है व्याख्याता बन करके वह नाना धर्म कह रहा है। अरे, भोले राजा तुझे इतनी विद्या का ज्ञान भी नहीं है कि धर्म तो केवल एकोकी ! वचन है। उसमें बहुवचन नहीं माना गया। आज तुझे इतना ज्ञान भी नहीं है, तू नाना धर्म कह रहा है। अरे, भोलेअरे !, राजातुझे कितने राजा बनाया है !? मानो देखो, अपठित समाज का चुनौती देने वाला जो राजा होता हैवह मानो देखो ,, अपठित हो जाएगा, अपठित हो करके समाज में अज्ञान छा जाता है। इसी प्रकार मैं आज उन पद्धतियों के ऊपर अपना विचार देना नहीं चाहता हूँ। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वाक् प्रगट करने के लिए आया हूँ कि हे भगवन मानो जिस स्थली पर हमारी यह !

आकाशवाणी जा रही है यहाँ कारण्व ऋषि जैसों की स्थली रही हैं। जो कारण्व ऋषि की एक शब्द भरी वाणी उच्चारण होती थी, राष्ट्र को वही मान्य होती थी। मानो देखो, दुष्यन्त को राजा को वही वाक् स्वीकार करना, उसे राष्ट्रीय शब्द बन करके चलता था। क्योंकि विवेकी पुरुषों के जो शब्द होते हैं वह महान् होते हैं। विवेकी पुरुष दूषित अन्न को भी पान नहीं करते चाहे वह राजा का हो, चाहे द्रव्यपति का हो, किसी भी प्रकार का क्यों न हो, वह वृक्षों की वनस्पतियों को पान करने के लिए तत्पर रहते हैं। वृक्षों के पंचांगों का पुरातन काल में चलन रहा है। नाना प्रकार की क्योंकि आयुर्वेद में कौन सी विद्या संसार की है जो नहीं है उसमें विज्ञान है, उसमें वनस्पति विज्ञान है, उसमें मानवीय स्थली विज्ञान है। माताओं का सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान उसमें निहित रहा है। मानो देखो, उस विद्या को न जान करके मानव नाना प्रकार की रूढ़ियों में परिणत हो रहा है। यह सब मानो देखो, सूक्ष्मता राष्ट्र की कहलायी जाती है।

तो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से अब आज्ञा पाऊगा। हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आधुनिक ! काल का जो समाज है यह जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है यह वर्तमान का काल है। परन्तु देखो, यहाँ रक्तभरी क्रान्तियाँ तो धीमे धीमे अग्नि प्रचण्ड होने जा रही है। समय आएगा जब वह प्रचण्ड अग्नि महान् बनेगी उसके मूल में धर्म की रूढ़ियाँ हैं। इसीलिए आज के राष्ट्र को चाहिए कि वह धर्म की रूढ़ि को समाप्त करने के लिए तत्पर हो जाए तो यह समाज और राष्ट्र पवित्र बन जाएगा। परन्तु देखो, ऐसा मुझे होता प्रतीत नहीं हो रहा है। मुझे तो रक्तभरी क्रान्ति के अवशेषों की प्रतिभा मानो दृष्टिपात आती है। आज मैं अपने वाक्यों से उच्चारण कर रहा था, क्या हे भवाः सम्भवे हे यज्ञमानतेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मानो अश्चतं कामा स् !वते वाचा स्वस्ति कामनाएं सदैव पूर्णता को प्राप्त होती रहें। यथार्थ कामनाएं मानो सात्विक कामनाएं सदैव तेरी पूर्ण हों। हे ब्राह्मण समाज तुम्हारा हृदय पवित्र !वेद का गान गाने वालों ! हो और तुम सदैव विवेक के मार्ग को गमन करते हुए राष्ट्र और अपनी मानवीयता को ऊँचा बनाते चले जाओ जिससे मानो देखो, जितना भी वेद का प्रसारण वेद की प्रतिभा मानव के हृदय में प्रवेश होगी उतना ही देखो, मानव समाज पवित्र बनता चला जाएगा।

क्योंकि आधुनिक काल की जो शिक्षा प्रणाली है वह केवल उदर पूर्ति तक सीमाबन हो करके रह गई है। हे ब्राह्मणातू उद !र की पूर्ति नहीं, मानो तू अपने हृदय से संसार को कुछ देता चल जिससे यह जिससे यह समाज तेरी वाणी से पवित्र बन जाए और विद्या को चरित्र का एक क्षेत्र बनाओ, देखो, विद्या को केवल उदर का क्षेत्र न बनाओ। यह राष्ट्र तो चलता ही रहेगा। परन्तु मानो अपने कर्त्तव्य का पालन भी करना चाहिए। यह है आज का हमारा वाक्। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे मेरे पुत्र के हृदय में एक राष्ट्रीय विडम्बना रहती !ऋषिवर ! इस प्रकार की ,है। वह जो राष्ट्रीय विडम्बना है न प्रतीत वह क्यों है? परन्तु जैसा इनका विचार पुरातन काल का इन्होंने आधुनिक काल से उसका समन्वय किया है, परन्तु बहुत प्रिय है। जैसा महानन्द जी ने कहा है यज्ञमान का जीवन महान और पवित्र बना रहे। सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मेरी भी सदैव यह कामना रहती है हमारी क्या शुभ कर्म करने वाला, द्रव्य का सदुपयोग करने वाला, देवताओं को हवि देने वाला, ब्राह्मण समाज वेद के पठन पाठन उस पुरातन ज्ञान और विज्ञान जो एक रस होता चला आया है सृष्टि के प्रारम्भ से वर्तमान के काल तक वेद की पवित्र विद्या मानो एक रसता में गति करती रही है और वह गतियाँ देखो, मानव के हृदय में, मानव की इन्द्रियों में, मानव की प्रतिभा बन करके मानव के जीवन को ऊँचा बनाती रही हैं। मानो देखो, जब एक वेद के पठन पाठन करने वाला यदि एक विवेकी हो जाए तो राष्ट्र का, समाज का सौभाग्य हो जाता है और माता का सौभाग्य है। परन्तु वही बुद्धिमान बन करके, वैज्ञानिक बन जाता है। विज्ञान की तरंगों में तरंगित हो जाता है। विज्ञान की तरंगों को जहाँ अधूरेपन में नहीं पूर्ण रूपेण हो करके उसके ऊपर अनुसन्धान करता है, उसके पश्चात् एक पण्डित, विवेकी बन करके जैसे अग्नि प्रदीप्त हो रही है। अग्नि अपनी आभा में गति कर रही है। इसी प्रकार मानो देखो, एक सन्यसतव को प्राप्त हो करके अपने अग्निमय हृदय को बना करके जब वह गति करता है तो मानो विवेकी , पुरुष हो करके वह राष्ट्र को ऊँचा बनाता चला जाता है। तो ऐसे पाण्डितव, ऐसी आभा सदैव समाज में होनी चाहिए। मुझे यह संसार बहुत स्मरण आता रहा है। मेरे पुत्र ने

जो अभी अभी वर्णन किया है उसमें कोई मानो देखो, ऐसी एक विडम्बना है, आधुनिक काल का यदि ऐसा स्वरूप है तो यह बड़ा आश्चर्य है। परन्तु देखो, विचार यह है कि हमारा जीवन मानो देखो, एक विद्वता और वैदिकता से गुथा हुआ होना चाहिए। हम में ऐसी स्वतन्त्रता होनी चाहिए जिससे दूषित वातावरण को हम सुगन्धि में परिवर्तित कर सकें। मानो उस सुगन्धि को सुगन्धि मेंसुगन्धि को आभा में परणित करते हुए ,, और विवेक में परणित करते हुए समाज को ऊँचा बनाते रहें।

यह आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। विचारों का अभिप्रायः यह कि हमारा जीवन सदैव ऊँचा बने। और उच्चता को प्राप्त होते हुए हम इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। मेरे प्यारे महानन्द जी तो सदैव जीवन मुक्त जैसी प्रवृत्तियों ! में रहते हैं। जीवन मुक्त वह प्राणी होता है जो स्वेच्छा से मानो देखो, अन्तरिक्ष में भ्रमण करता है। स्वेच्छा से कहीं वह शरीर भी धारण कर सकता है। पञ्च महाभौतिक तत्त्वों से। यह विज्ञान है, इस विज्ञान के ऊपर मानो तथ्य प्रगट करते रहते हैं। परन्तु देखो, आज हम इन वाक्यों के साथ अपनी विचारधारा को विराम दे रहे हैं। वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः क्या? क्या विवेकी बन करके, याज्ञिक बन करके अपने जीवन को सुगन्धिमय बनाएं। यह आज का वाक् अब समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। निवास स्थान धर्मपाल जी आर्य ग्राम सुआहेड़ी .चौ :, बिजनौर। दिनांक 01 19 1983।

२१ 02 03 1983 पुष्प 42 आधुनिक काल के नाना सम्प्रदाय

जीते रहेदेखो !, मुनिवरोंआज ! हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगणान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया आज हमने पूर्व से, जिन मनोहर वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसरण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा यज्ञमयी स्वरूप माने गए हैं। जितना भी संसार का शुभ कर्म है, आत्मीय कर्म है, चाहे वह भौतिक विज्ञान में ले जाने वाला हो, चाहे वह आध्यात्मिक विज्ञान में से

ले जाने वाला हो, भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान में प्रवेश होने का नाम भी एक प्रकार का याग ही माना है। जितना यह संसार हमें प्रपञ्च रूपों में दृष्टिपात आ रहा है उसके मूल में यह भौतिकवाद है अथवा भौतिक विज्ञान है और वह कितना सूक्ष्म है? वैज्ञानिकजन तो उसकी सीमा को जान ही नहीं पाता। वह इतना सूक्ष्म है। परन्तु जब आध्यात्मिक विज्ञान में भौतिकवाद के मार्ग से हो करके प्रवेश करते हैं तो वहाँ ऋषि मुनियों की कुछ अनुभूतियां होती हैं। प्राण में गति करने वाला यह जो ब्रह्माण्ड है क्योंकि सर्वत्र जगत् एक प्राण का स्वरूप ही दृष्टिपात आ रहा है। प्राण है, गति के रूप में गति हो रही है, गतिवान बन करके परमाणु का आदान और प्रदान करता रहता है। आदान प्रदान करने का नाम ही संसार है।

एक परमाणु है वह आदान प्रदान में गति कर रहा है। वह सर्वत्र विज्ञान की एक पूंजी मानी गई है। जो मानव यह जानना चाहता है कि मैं विज्ञान और भौतिकवाद में प्रवेश होना चाहता हूँ तो आदान प्रदान ही करना है, उसको जानना है। जैसे यजामन अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके वह परमाणुओं का आदान प्रदान कर रहा है, वह जो आदान प्रदान हो रहा है वह उसके जीवन की एक महान् पूंजी कहलाती है, उसके जीवन की एक धारा कहलाती है। उस आदान प्रदान में द्रव्य भी आता है, संसार की प्रतिष्ठा भी आती है, संगतिकरण भी उसी में आ जाता है। उसमें सर्वत्र जीवन की आभा विद्यमान रहती है।

आज का हमारा वेदमन्त्र कह रहा था कि यह जो हृदय है यह मानव की अग्निमय ज्योति कहलाई जाती हैं उस ज्योति को जानने के लिए मानव को साधना और योगेश्वर बनने के लिए परिश्रम की आवश्यकता रहती है। आज मैं विशेष विवेचना नहीं करूंगा, क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी भी कुछ शब्दों की विवेचना करेंगे। आज का हमारा ! अभिप्राय केवल यह है कि जितना भी यह याग कर्म है, यागों की प्रतिभाषिता है वह प्रत्येक प्राणी के हृदय में किन्हीं न किन्हीं रूपों में विद्यमान रहती है। वह सुगन्धि का स्वरूप है। प्रत्येक मानव सुगन्धि में रहना चाहता है कोई प्राणी दुर्गन्ध में रहना नहीं चाहता वह सदैव सुगन्धि में रहना चाहता है। तो जितना भी यह याग कर्म है यह सब

सुगन्धि मानी जाती है। जैसे याग के द्वारा अग्नि में मानव आहुति देता रहता है तो उसी आहुति का सूक्ष्म रूप बन करके अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो जाता है और अन्तरिक्ष में परमाणुओं के आदान प्रदान की चर्चा आ गयी। मेरे पुत्रोइसी प्रका !र वही सुगन्ध को ले जाता हुआ जैसी अग्नि दूरिता को भस्म करती हुई शुद्धता को वायुमण्डल में परणित कर देती है इसी प्रकार मानव के जीवन में भी एक और सुगन्धि होती है जो इससे भी सूक्ष्म है उसका नाम है चरित्र रूपी अग्नि, चरित्र रूपी सुगन्धि।

बेटाऋषि एक आसन पर विद !्यमान है, तप कर रहा है, साधना कर रहा है, विद्या का अध्ययन कर रहा है, ब्रह्मवर्चोसि बन रहा है परन्तु किसी भी उच्चारण करने के लिए नहीं जाता कि मैं सुगन्धिमय याग कर रहा हूँ, वेद का अध्ययन कर रहा हूँ, विद्या का अध्यन कर रहा हूँ। परन्तु उस मानव की धीमी धीमी उसके चरित्र के क्रिया कलाप की जो सुगन्धि है वह मानव के समीप जानी स्वतः ही प्रारम्भ हो जाती है, क्योंकि प्रत्येक मानव के शरीरों में हृदय है और हृदय उन वाक्यों को छूने लगता है, वह जो तरंगें वायु में गति कर रही हैं वह मानव के हृदय में प्रवेश कर जाती हैं। और वह जो तप करने वाला ऋषि है उसके प्रति मानव के हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। उसकी सुगन्धि जब समाज में पहुंची तो राष्ट्र में चली गई। राष्ट्र में उसके द्वारा उसके जीवन की सुगन्धि से उसके क्रिया कलाप रूपी सुगन्धि से राजा भी उसका सत्कार करने लगता है अथवा उसकी नाना प्रकार की शिक्षाओं से राजा अपने को सौभाग्यशाली स्वीकार करता है। उसके कथनानुसार राष्ट्र का नियम बना देता है। राष्ट्रीयता उसमें परणित हो जाती हैं इस प्रकार उसकी सुगन्धि कहाँ से कहाँ चली गई। तो मुनिवरोंजैसे यह सुगन्धि !, यज्ञ सुगन्धि है उसी प्रकार मानव के जीवन में एक और यज्ञ हो रहा है। वह यज्ञ है चरित्र का यज्ञ, साधना का यज्ञ। ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहा है। अध्ययन करता हुआ विज्ञान के बहुत से तन्तुओं का जानता है। वह विद्यालय में प्रियता को प्राप्त हो जाता है। विद्यालय में प्रियता उसे प्राप्त हो जाती हैं वह विज्ञान की तरंगों को गणित करता हुआ उसमें सुगन्धित हो जाता है।

ज्ञान और विज्ञान की एक सुगन्धि होती है। एक और याग हो रहा है पुत्रों वह याग !

है आध्यात्मिक याग। तारा मण्डलों को गणित करता हुआ ब्रह्मवर्चोसि बन करके ब्रह्म का और अपना मिलान करना चाहता है। ब्रह्महे यह निष्ठा हो जाती है और उसके पश्चात् वह अपने को उससे मिलान कराना चाहता है। वह साधना कर रहा है। एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके वह प्रभु से वार्त्ता कर रहा है और कह रहा है हे प्रभु मैं ! तेरे समीप आना चाहता हूँ। तेरा यह ब्रह्माण्ड अनणतवत है। जैसे यह तेरा ब्रह्माण्ड अनन्त है, ऐसे ही मैं तेरी अनन्तमयी ज्योति में प्रवेश करना चाहता हूँ। मेरे पुत्रो वह ! मानव साधक बन करके प्रभु से मिलान करना चाहता है। इस संसार में प्रत्येक परमाणु में प्रभु को दृष्टिपात करने लगता है। जब प्रभु को जलसमूह में दृष्टिपात कर लेता है उसका काम, क्रोध, लोभ, मोह द्वेष जातीय नाना प्रकार के विकार मानव के हृदय में समाप्त हो जाते हैं और वह प्रभु की गोद में जाना चाहता है। वह आध्यात्मिक याग हो रहा है, आध्यात्मिक सुगन्ध आ रही है। आत्मा उससे बलिष्ठ हो रहा है। जहाँ जाता है उसका पूजन हो रहा है। समाज में जाता है, उसको पूज्य दृष्टि से समाज दृष्टिपात करने लगता है। प्रभु की आभा में रमण करता हुआ वह अपने को महान् और पवित्र बनाना चाहता है। तो आज का यह विचार अब मैं समाप्त कर रहा हूँ। मेरे प्यारे ! महानन्द जी अपने दो शब्दों की विवेचना करेंगे।

महानन्द जी का प्रवचन

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे पूज्यपाद गुरुदव अभी अभी कुछ !मेर भद्र ऋषि मण्डल ! अमृत बिखेर रहे थे। क्योंक अमृत बिखेरना ही मानव का मौलिक सिद्धान्त कहलाता है। परम्परागतों से ही, यह मौलिक सिद्धान्त है जिस आभा में मानव अपना वास करना चाहता है, उसी का वह सिद्धान्त बन जाता है। परन्तु जो ईश्वरीय और महान् सिद्धान्त हमारी जहाँ यह आकाशवाणी जा रही है वहाँ एक यज्ञोषि पठन पाठन का काम व्याप्तता में वह सम्पन्नता को गया। मेरा हृदय सदैव प्रसन्न रहता है और जब यागों के कर्म, उनके क्रियाकलाप, उनका विज्ञान स्मरण आता है तो हृदय प्रायः और भी गद् गद् हो जाता है। मेरा अन्तर्हृदय यह कहता है जिन गृहों में यागों का चलन होता है वह गृह सदैव सौभाग्यशाली होते हैं। क्योंकि द्रव्य का सदुपयोग होना ही द्रव्य की पूजा कहलाती

है। मैं, उन यज्ञमान को जिसके यहाँ सुन्दर आपनाम सुसज्जित प्रबहे हे यज्ञमान तेरा ! सौभाग्य है, तेरे यहाँ द्रव्य का सदुपयोग हो रहा है। द्रव्य का सदुपयोग होना ही द्रव्य की पूजा है। द्रव्य को देवताओं और यागों में परणित करने का नाम ही उसकी सुदपयोगिता है। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आशंका बनी रहती है यागम् ब्रहे अस्तोः कि याग में क्या है? हमारे यहाँ शुभ कर्मों का नाम तो याग माना ही है। परन्तु जब यज्ञमान अग्नि के समीप विद्यमान हो करके याग करता है तो प्रसन्नता और सम्पन्नता दोनें उसके हृदय में परणित रहती हैं। परन्तु वह कहाँ प्रदान कर रहा है? यह उसे कोई प्रतीत नहीं होता।

आज मैं इसके सूक्ष्म से विज्ञान की चर्चा करूंगा। यह जो नाना प्रकार के द्रव्य पदार्थ घृत इत्यादि साकल्य बना करके अग्नि में प्रवेश करते हैं। अग्नि इनका विभाजन कर देती हैं क्योंकि अग्नि में यह गुण होते हैं कि अग्नि प्रत्येक वस्तु का विभाजन कर देती हैं यह अग्नि नाना प्रकार की हैं यही अग्नि है जो यज्ञशाला में विद्यमान हो करके यज्ञमान के विचार, हेताजनों के विचार, जन समूह के विचार अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके साकल्य के द्वारा उन शब्दों का और पदार्थों का सूक्ष्म परमाणु बन करके उनका विभाजन कर देते हैं और जब यह विभक्त कर देती है तो अन्तरिक्ष में, उसे साकल्य में मधु होता है तो मधु का जैसे वैज्ञानिक यन्त्रों के द्वारा प्रत्येक वस्तु का मानव रस ले करके उसको उपयोग में लाता है, इसी प्रकार यह जो यज्ञमान यज्ञ कर रहा है, इसमें जो मधु होता है वह साकल्य बनता है। घृत होता है वह अन्तरिक्ष में छा जाता है। परमाणुओं में, अग्नि में जब नव शक्ति आती है वह अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो करके अशुद्ध परमाणुओ को निगलना प्रारम्भ कर देती हैं जब अशुद्ध परमाणु निगलने लगता है, शुद्ध परमाणु छा जाते हैं क्योंकि शब्दों से भी गृह ऊंचे बनते हैं और धर्म करने से भी ऊंचे बनते हैं। जिस गृह में सत्यवादी पुरुष रहते हैं, जिस गृह में सदैव सत्य उच्चारण करने वाले हों, सुसज्जित हों वह गृह सदैव महान् और पवित्र बने रहते हैं। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में मुझे यह वर्णन कराया, जब विद्यालय में प्रवेश करते थे उस काल में चरणों में ओत प्रोत करा करके शिक्षाओं को प्रदान करते रहते थे। इस

विभक्त क्रिया से साकल्य, जिसे हम सामग्री कहते हैं, सामग्री का अर्थ है, संग्रह किए हुए पदार्थ, संग्रह की हुई नाना प्रकार की औषधियां, परन्तु इस अग्नि में धारणा करने से सूक्ष्म बनाना ही वायुमण्डल की प्रतिभा को जन्म देना है। आधुनिक काल का यह जो समाज है, नाना प्रकार की रूढ़ियों में परणित हो रहा है। वह काल मुझे स्मरण है जब यह रूढ़ियां नहीं थीं इस संसार में। इस पृथ्वी मण्डल पर रूढ़ियां नहीं थीं इस संसार में। इस पृथ्वी मण्डल पर रूढ़ियां नहीं थीं। मंगल मण्डल में रूढ़ियां नहीं थीं। जिन भी लोकों में प्राणी रहता है वहाँ रूढ़ियां नहीं थी। इस पृथ्वी मण्डल पर रूढ़ियां आ गयीं। यह चाहने लगा प्राणी कि मेरी मुक्ति सहज हो जानी चाहिए, मुक्ति तो मानव के, प्राण के निरोध करने से ही प्राप्त होती है, चाहे वह किसी भी रूढ़ि में अपने को ले जाना चाहता हो। परन्तु सुगन्ध को प्रत्येक प्राणी स्वीकार करता हैं कोई संसार का प्राणी ऐसा नहीं है जो सुगन्ध को अपने से दूरी कर दे। इस सुगन्ध के कर्म काण्ड को न जानता हो। परन्तु वह सुगन्धि प्रत्येक रूढ़ियों में भी विद्यमान है।

मैं यह कहा करता हूँ कि राजा को चाहिए अपने राष्ट्र को यदि राजा ऊँचा बनाना चाहता है तो उस राजा को सबसे प्रथम अपने राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहने देनी चाहिए। क्योंकि यदि राष्ट्र में रूढ़ि रह गई तो उन रूढ़ियों के विचार सात्विक न बन करके एक राष्ट्रीयता को परणित हो करके वह एक ऐसी विकृतता बन जाती है समाज की कि वह समाज मानवीय दृष्टि से दूरी चला जाता है। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव की यह परिचय कराया कि यां नाना प्रकार की रूढ़ियाँ हैं, उन रूढ़ियों को, राष्ट्र को चाहिए कि समाप्त करे। परन्तु आधुनिक काल यह जो चल रहा है, अपनी आभा में गति कर रहा है, यदि मैं राष्ट्र के क्षेत्र में जाता हूँ मानव का संसार में कोई अधिकार नहीं है। नाना सम्प्रदाय इस प्रकार के हैं जो नाना दलीय को अपना जन्मसिद्ध अधिकार स्वीकार करते है। परन्तु मैं यह कहा करता हूँ कि हे मानव प्राणी प्राणी का भक्षण ! कररहा है। तू प्राणी प्राणी को नष्ट करना चाहता है, तझे कोई अधिकार है? परमात्मा ने कोई तुझे अधिकार दिया है? जैसे गो नाम का पशु है और भी नाना पशुओं को आहार, जिस उदर में सात्विक पदार्थ जाने चाहिए थे परन्तु वहाँ उसने अपने उदर को

श्मशान भूमि का क्षेत्र बना लिया है, क्या यह तेरा कोई अधिकार है? परमात्मा ने जब तुझे जन्म दिया तो तेरा पदार्थ भी उस प्रभुने दिया। संसार में माता की लोरियों ने दुग्ध दे दिया। उसके पश्चात् पृथ्वी के गर्भ आया, नाना प्रकार के खाद्य पदार्थ तुझे प्रदान कर दिये। प्राणी जो क्रिया कर रहा है, उद्गम कर रहा है, परमात्मा की सृष्टि का शोधन कर रहा है, अरे, उस प्राणी का प्राण लेने का तुझे कोई अधिकार नहीं। इसलिए आज मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ कि राष्ट्र को चाहिए, हमारे यहाँ पुरातनकाल में भगवान मनु हुए हैं, भगवान मनु जी ने मछली से ले करके प्राणी तक की रक्षा करने के लिए संकल्प लिया था और वह होता रहा। परन्तु यहाँ मछली से ले करके प्राणी तक की रक्षा करना यह मानवीय क्षेत्र, एक आयत बन करके ही अपने जीवन को ऊँचा बना सकता है।

यहाँ बलियों का वर्णन आता है। वैदिक साहित्य में बलियों का जो वर्णन आता है तो ऋषि मुनि जन बलियों के ऊपर विचारने लगे तो बलियों के ऊपर विचारा गया कि किसी वस्तु को परिश्रम से ऊँचा बनाना, परिश्रम से महान् बनाने का नाम बलि कही जाती है। जैसे गो नाम का पशु है वह बलि दे करके मानव का दुग्ध दे रहा है। अपने बछड़े का पालन कर रहा है। परन्तु वही बछड़ा कृषक ने अपने लिए धारण कर लिया। इस बलि के द्वारा कृषक अपने अन्नाद को ऊँचा बनाता है, इस पृथ्वी माता, वसुन्धरा के गर्भ से नाना प्रकार के खाद्य पदार्थों को उत्पन्न कर रहा है। यही उसकी बलि है। जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की बहुतज सी चर्चाएं की हैं। परन्तु यहाँ ऐसा समाज बन गया है, किसी का आह्वान हो गया कि तुझे बलि देनी है, सबसे प्रिय वस्तु की बलि देनी है तो उससे पशुओं को नष्ट करना प्रारम्भ कर दिया। अरे, भोले प्राणी यह तेरी बलि नहीं हैं। यदि तू प्रभु के आँगन में इस मन की बलि दे देगा तो तेरा कल्याण हो जाएगा। तू पशुओं की बलि देता है। तेरे द्वारा रजोगुण, तमोगुण छा जाता है तो प्रभु के राष्ट्र में तेरा कोई अधिकार नहीं। प्रभु के राष्ट्र में ! तुझे बलि देना है तो तुझे बलि अपने मन !प्रेरणा हृदय से प्राप्त होती है कि हे मानव की देना है। मन की बलि देने का ही प्राणी को अधिकार है, उसको बलि देना उसका

प्रताप कहते हैं। मुझे स्मरण है बहुत से सम्प्रदाय इस प्रकार के हैं जो यह कहते हैं कि हमारे पूर्वजों को प्रभु से आह्वान हुआ। आह्वान क्या, कि तू बलि प्रदान कर। हे भक्त ! भगवान् के प्रति बलि दे कर पशुओं को नष्ट कर रहा है। जैसे तू प्रभु के राष्ट्र में है इसी प्रकार यह पशु हैं। क्या उन्हें बलि देने का तुझे कोई अधिकार भी है। यह अपने क्रिया कर्म कर रहे हैं, तू अपना क्रिया कलाप कर रहा है, परन्तु उसको धर्मों में ला करके धर्म की प्रतिष्ठा इस समाज में नष्ट कर दी है।

तो इसीलिए मैं यह कहा करता हूँ, हे राजा तुझे चाहिए कि तू नाना प्रकार की ! रूढ़ियों को नष्ट कर। बहुत से प्राणी इस प्रकार के इस आधुनिक जगत में हैं, जो मां के ऋषि हैं और मां की बलि का आह्वान कर रहे हैं। अरे, भोले मां कह करके, मां तो सबकी रक्षा करने वाली हैं। मां तो सबके हृदय को जानती है। माँ अपने पुत्रों के ! हृदय को जानती है। जब वह चैतन्य मां है उसकी बलि देने का तुझे कोई अधिकार इस प्रकार का यह समाज बन गया है। इन रूढ़ियों !नहीं हैं हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को नष्ट करना चाहिए। मानव के हृदय से यह रूढ़ियों को नष्ट करना चाहिए। मानव के हृदय से यह रूढ़ियां यदि समाप्त हो जाएं, तो यह समाज महान् बन जाए। प्रभु के राष्ट्र में बहुत से प्राणी इस प्रकार के हैं, प्रभु की आराधना करते रहते हैं परन्तु जब उनका आहार दृष्टिपात करते हैं तो दूसरों के रक्तों का पान करते हुए दृष्टिपात करते हैं तो प्रभु !की भक्ति, प्रभु का चिन्तन ही क्या है? प्रभु की प्रतिभा और उसकी उपासना क्या? जब हम उसके कथनानुसार अपने जीवन को नहीं बनाते, इसी प्रकार हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेवमैं आधुनिक काल की रूढ़ियों की कुछ विवेचना दे रहा हूँ !, कुछ रूढ़ियों की चर्चाएं। परन्तु कोई भी ऐसा प्राणी नहीं है जो उनका खण्डन करने वाला हो। खण्डन करने वाले हैं, रसना के स्वादन करने वाले, प्रभु के भक्त भी बनना चाहते हैं, रसों का स्वादन भी चाहते हैं।

मुझे स्मरण है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्व शब्दों में लोमश मुनि और काग भूषण्ड की चर्चा कर रहे थे। जब एक पंक्ति में विद्यमान हो करके पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा नाना प्रकार की शिक्षा का अध्ययन करते रहते तो उनका कितना विशाल तप था।

आधुनिक काल का जो प्राणी है, गरुड़ जैसे ऋषि को पत्ती की संज्ञा दे रहे हैं। उसको पत्ती की संज्ञा देनी है कि यह कागः है। मुनिवरोंका !ग पत्ती बन करके उड़ान उड़ता है। इस प्रकार उसको काग की उपाधि दे दी गई। परन्तु जब मैं इन वाक्यों को श्रवण करता हूँ तो यह कहता हूँ, कहाँ चला गया वह साहित्य, कहाँ चला गया वह दर्शन विन जिसके ऊपर यह सदैव अध्ययन करते रहते थे? काग भुजण्ड जी ने एक पोथी का निर्माण किया था, बहुत पुरातन काल में, त्रेता के काल में और लाखों वर्षों पूर्व निर्माण किया था। काग भुजण्ड जी ने, जिस पोथी का नाम था चन्द्रायणानकृत पोथी। चन्द्रमा के ऊपर वह अनुसन्धान करते थे और कहते थे कि सूर्य की किरणों से चन्द्रमा प्रकाश लेता है। चन्द्रमा का अपना कोई प्रकाश नहीं है। सूर्य द्यौ से प्रकाश लेता है और वहीं प्रकाश चन्द्रमा को कृत करता है। चन्द्रमा अपनी कलाओं से, द्वितीय कला, तृतीय कला, पूर्णिमा के दिवस वह पूर्ण हो जाता है। वह लोकों की छाया में रहता है उतनी ही किरण जाती रहती है, उतना वह बलवती होता रहता है। तो उन्होंने सार्वभौम सिद्धांत की चर्चाएं कीं। उन्होंने एक वाक्य यह कहा कि वह जो चन्द्रमा है वह सूर्य से सहायता लेता है और उन्होंने कहा था कि शनि मण्डल है उस शनि मण्उल को लगभग पिचासी चन्द्रमा हैं जो उसे चन्द्रित करते रहे हैं। एक रोहिणीकेतु मण्उल की उन्होंने चर्चा की, उसको लगभग बहत्तर सूर्य एक ही मण्डल को प्रकाशित करते हैं। इस प्रकार का विज्ञान महर्षि काग भुजण्ड जी ने वर्णन किया। काग भुजण्ड जी रेणकेतु प्रवाहण ऋषि के पुत्र थे। रेणकेतु प्रवाहण ऋषि अंगिरस गोत्र में हुए। एक प्रवाहण ऋषि माता मल्दालसा के पुत्र थे। यह प्रवाहण अंगिरस गोत्रीय प्रवाहण ऋषि के पुत्र कहलाते थे। जब बाल्यकाल में माता की लोरियों में वह पनपता रहा तो माता उसे शिक्षा देती रहती थी और यह कहती रहती, हे बालक जैसे यह काग कितना महान् अपने में विश्वसनीय ! कहलाता है इसी प्रकार तुझे भी अपने को ऊँचा बनाना है और इतनाही विश्वसनीय बनना है। क्योंकि काग जो पत्ती है जैसे वह अपने में उड़ान उड़ता रहता है इसी उड़ान के ऊपर काग भुजण्ड जी ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, कागाम् चथवेतु यन्त्र यह यन्त्र उन्होंने जब काग पत्ती गति कर रहा था वायु के साथ, वायु वेद में गति कर रही

है और वह वायु के समक्ष उड़ान उड़ रहा है उसी उड़ान के साथ एक यन्त्र का उन्होंने निर्माण किया। पक्षी की प्रेरणा, हृदय की प्रेरणा, दोनों का मिलान हुआ और मिलान होने से उन्होंने यन्त्र का निर्माण किया, वह उड़ान उड़ करके वायुमण्डल में गति करते रहते थे। तो ऐसे काग भुजण्ड जी थे जिनका यह जो वर्तमान का काल चल रहा है इसमें उन्हें पक्षी की संज्ञा प्रदान की जाती है। हमारे यहाँ लोमथ इत्यादि ऋषिवर और काग भुजण्ड जी के जीवन में और भी नाना वाक्य आते रहते हैं।
यहाँ रावण के साहित्य, उस काल के साहित्य से दृष्टिपात होता रहता है। सम्पत्ति को हमारे यहाँ आकृतियों की संज्ञा प्रदान की जाती है, गरुड़ जिन्होंने रावण इत्यादि से संग्राम किया उन्हें भी पक्षी की संज्ञा प्रदान की जाती हैं यह क्यों की जाती है? क्योंकि वह पक्षी की भांति अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष में गति करते रहते थे, वह वैज्ञानिक थे। सम्पाति तो समुद्र के किनारे संयत रहता था और सुरषा नामक, जब सम्पाति को राजा रावण ने विजय कर लिया था तो सुरषा उनके राष्ट्र जो समुद्र के तट पर था उस राष्ट्र की वह धिराज बन करके रही। यह तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव परम्परा से अपनी दृष्टियों से वर्णन करते रहते है। आज केवल मैं तुम्हें यह उच्चारण करने आया हं कि हे समाज तू अपनी आभा में आधुनिककाल के जगत् में यह ! रूढ़ियां तेरे हृदय से दूरी हो जानी चाहिएं। क्योंकि यदि यह रूढ़ियां दूरी नहीं होतीं तो अज्ञान बना रहता है। यहाँ दूसरों की बलियों का वर्णन आता रहता है। हमारे यहाँ प्रायः ऐसा साहित्यकारों ने कहा है क्योंकि दैत्य और देवता परम्परा से चले आ रहे हैं। आज जो संसार में दूसरे के रक्तों को पान करने वाले हैं उनकी दैत्य संज्ञा कहलाई जाती है और अमृतमयी जो पान करने वाले हैं, अपना आहार, अपना विचार अधिकार युक्त हो करे क्रिया कलाप करते हैं, उनकी संज्ञा सदैव देववत् मानी जाती है। कर्म और क्रिया कलाप करते हैं, उनकी संज्ञा सदैव देववत् मानी जाती है। कर्म और क्रिया कलाप परम्परागतों से उनके रहे है। आधुनिक समाज यह कहता है माँस हमारा जन्म प्रवेः इससे हमारे शरीर का निर्माण होता है। परन्तु संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं वह चाहे किसी भी सम्प्रदाय के हुए हैं, चाहे वह ऋषि मुनियों की आभा में रहे हैं, शुद्ध अन्न

को पान करके ही वह महत्ता को प्राप्त हुए।
मुझे स्मरण है महर्षि कणाद ने विज्ञान की आभा को जन्म दिया। महर्षि कणाद कुन्द को एकत्रित करके उस अन्न को पान करते थे। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने शतपथ ब्राह्मण नाम की पोथी का निर्माण किया। इसी प्रकार जितने भी महापुरुष आधुनिक काल में हुए वह किसी भी सम्प्रदाय के हुए, रूढ़ि के मानने वालों ने सम्प्रदाय की संज्ञा प्रदान कर दी है। परन्तु वास्तव में उनका, रूढ़ियों का अभिप्राय नहीं था। जैसे हमारे यहाँ मोहम्मद के मानने वालों ने मांस का भक्षण करना प्रारम्भ कर दिया। महात्मा मोहम्मद ऐसे थे कि वह सदैव शुद्ध अन्न को पान करते थे। इसी प्रकार वैसे तो मोहम्मद की संज्ञा कोई महात्माओं में तो गणना नहीं की जा सकती। परन्तु राष्ट्रीय आभा में उनकी गणना की जा सकती है क्योंकि उनका जितना चलाया हुआ सम्प्रदाय है वह राष्ट्र तक सीमित है, वह योग एक सीमित नहीं। क्योंकि उनमें यौगिकता नहीं है, उनका आहार और व्यवहार अशुद्ध बन गया है। इसी प्रकार ईसा के मानने वाले, उनका आहार बाल्यकाल से कितना विचित्र और कितना पवित्र रहा है जिन आहारों से वह महात्मा कहलाए, ब्रह्म वर्चोसि कहलाए। मुझे इस संसार की बहुत सी वार्त्ताएं स्मरण हैं, जिस भी सम्प्रदाय में जो भी महापुरुष हुआ है, संचालक हुआ है उनका आहार बहुत ही पवित्र रहा है। परन्तु उनके मानने वालों ने हिंसा करनी प्रारम्भ कर दी। उस अहिंसा का परिणाम यह हुआ कि वह एक रूढ़ि बन करके रह गई। यह राष्ट्र तक सीमित बन करके रह गई। आध्यात्मिकवाद का उसमें कोई वर्णन प्राप्त नहीं होता। क्योंकि उनका क्रिया कलाप, आध्यात्मिकवाद से दूरी है, जब एक दूसरे में घृणा है, एक दूसरे के लिए ईर्ष्या है, दूसरे प्राणियों को नष्ट करने की भावना बनी रहती है तो यह महापुरुषों के जो वचन है उनके अनुसार उनकी प्रतिभा नहीं बन पा रही।
मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन कराना चाहता हूँ कि जितने भी महापुरुष हुए हैं, सम्प्रदाय हुए हैं, सम्प्रदाय तो मानने वालों ने बना दिए हैं परन्तु उनका उद्देश्य एक ही है कि अच्छाइयां बानी चाहिएं, शुद्धता आनी चाहिए। जो रूढ़ि हैं वह नष्ट होनी चाहिएं। यहाँ जितनी भी रूढ़ियां हैं वह राष्ट्र तक सीमित हैं परन्तु आध्यात्मिकवाद में

तो राष्ट्र का महत्व ही नहीं माना गया है। हमारे यहाँ जब आध्यात्मिकवादी जनों ने यह विचारा कि राष्ट्र क्या है? तो राष्ट्र केवल धर्म की रक्षा करने के लिए है। विचारा गया कि धर्म क्या है? धर्म मानव की इन्द्रियों में समाहित हो रहा है। धर्म मानव के हृदय से दूरी नहीं है। जब मानव का अन्तरात्मा, जो यह पांच ज्ञानेन्द्रियां हैं इनमें जो धर्म समाया हुआ है, सुदृष्टिपात करना, सु शब्द ग्रहण करना, सु उच्चारण करना, प्रीति में रहना, सुगन्ध को ग्रहण करना यह पांचों इन्द्रियों में पांच वार्त्ताएं समाहित हो रही हैं और यह ो ब्रह्माण्ड है यह पांचों के आश्रित हो करके गति कर हरा है। इसी प्रकार मैं कोई विशेष विवेचना न देता हुआ केवल तुम्हें यह निर्णय देना चाहता हूँ, संसार में यह जो बलि की प्रथा है यह असम्भ प्रथा है। प्रत्येक प्राणी को विचार करके कुरीतियों को त्याग देना चाहिए। यही इस मानव की मानवता कहलाती है। यदि वह त्रुटियों को नहीं त्यागता है तो यह समाज नहीं रह सकता। माहनता की प्रतिभा, ओजस्विता की आभा मानव के हृदय में सदैव परणित रहनी चाहिए। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा था कि यह संसार कुरीतियों का जब बन जाता है तो यह केवल अज्ञानता के कारण बनता है, ज्ञान होना चाहिए। आधुनिक काल का जगत् ऐसा है जहाँ ज्ञान प्राप्त हो रहा है वहाँ जाना नहीं चाहता, क्यों नहीं जाना चाहता? क्योंकि रूढ़ियों का यह जो ज्ञान बन गया है। यदि मोहम्मद वाले अच्छी वार्त्ता प्रकट कर रहे हैं तो वहाँ नहीं जा पाते क्योंकि उनका कोई विषय होगा। यदि आर्यत्व कोई ज्ञान बिखेर रहे हैं वहाँ मोहम्मद के मानने वाले नहीं जाते, यह हो रहा होगा क्योंकि ज्ञान जहाँ भी प्राप्त हो जाए मानव को ले लेना चाहिए। ज्ञान किसी भी क्षेत्र में हो, किसी भी मानव के द्वारा हो। ज्ञान और विज्ञान मानव का मौलिक गुण कहलाया जाता है। उसके ऊपर मानव को नाना प्रकार की टिप्पणियों में नहीं जाना चाहिए।

मैने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह निर्णय कराते हुए कहा है कि आहार और व्यवहार जब तक मानव का स्वच्छ नहीं बन जाएगा तब तक प्रभु के राष्ट्र में रहने का अधिकार भी नहीं। उसको वास करने का क्या अधिकार है? रहा यह कि इसमें वैज्ञानिक तथ्य क्या है? जिस समय प्राणी को नष्ट करता है उस समय उसकी जो आह है 2, उसकी

जो दाह है वह किस प्रकार विकृत होती है? अरे, मानव तू उसको पान करता है तेरे ही शरीर में रक्त की उसी प्रकार की विकृतता का जन्म हो जाएगा। यह वैज्ञानिक सिद्धांत है। वैज्ञानिकजनों ने बहुत पुरातन काल में यह सर्वभौम सिद्धांत की वार्त्ताएं प्रकट की हैं। धर्म और मर्यादा मानव के समीप उस काल में रह सकती है जब मानव की बुद्धि में शुद्धता होगी, उसकी बुद्धि में महत्ता होगी, आहार और व्यवहार में पवित्रता होगी। उसी काल में वह पवित्र रहेगा आहार ब्रहे सम्भवा देवश्चयाम् जब मैं इन वाक्यों को कहता हूँ तो समाज तो यह कहता है कि यह महानन्द कैसी अशुद्ध वार्त्ता प्रकट कर रहा है? आधुनिक काल जब यह कहता है तो मुझे आनन्द और मग्नता आती है कि यह समाज किस रूढ़ियों में परिणित हो करके अपने को समाप्त कर रहा है। वह आत्मा सर्वत्र है। वह चेतना माता वसुन्धरा जो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव वर्णन करते हैं माता के गर्भ में किसी भी रूढ़ियों मं माता नहीं रहती। रूढ़ियों में चैतन्य नहीं है। चेतना तो एक रस रहने वाली है। ज्ञान भी एक रस रहने वाला है। इन्द्रियों का विषय भी एक रस रहने वाला है। मानव के जीवन में जो विभक्त शक्ति प्रधान हो गई है वह संकीर्णता की अग्नि है सम्प्रदायों को ले करके इस अग्नि का प्रसार हो रहा है, यह कितना एक मानव के विनाश का क्षेत्र बन रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था यह घृणा का क्षेत्र जो इस प्रकार का आधुनिक काल में बनता चला जा रहा है यह बहुत निकट समय आ रहा है जब यहाँ रक्तभरी क्रान्ति के अवशेषों का जन्म होता जा रहा है और वह रक्तभी क्रान्ति मानव समाज में परिणित हो जाएगी।

पूज्यपाद गुरुदेव से अब मैं आज्ञा पाऊंगा क्योंकि इतना ही समय मुझे पर्याप्त है। आज मैंने कुछ अपने विचार व्यक्त किए हैं पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञा से। मैं यज्ञमान के लिए जहाँ याग हो रहा है वह उस याग को दृष्टिपात करके मेरा अन्तरात्मा सदैव प्रसन्न रहता हैं हे यज्ञमानतेरे जीवन का सौभाग् !य अखण्ड बना रहे। तेरा समय समय पर द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, दुरूपयोग की कामना न जागे। सदैव यही मेरी कामना रहती है। इसके साथ मैं अपने वाक्यों को विराम दे रहा हूँ।

पूज्य महानन्द जीः मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने कुछ विचार !मेरे प्यारे !ऋषिवर !

व्यक्त किए हैं। उनके विचारों में समाज के प्रति एक दाह रहती है, एक विडम्बना बनी रहती है। यह विडम्बना प्रभु सदैव सम्भवः स्वेः पूर्णता को प्राप्त करते रहते हैं। समय समय पर अपनी आभा को जन्म देते रहते हैं। आज मैं भी जैसा महानन्द जी ने कहा है यज्ञमान तेरे जीवन की आभा सदैव !महान् और पवित्र बनी रहे। इसके साथ यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है। आज का विचार हमारा क्या कि वह जो अग्नि है यह विचारों का, परमाणुओं का आदान प्रदान करती रहती है। इसमें प्राण शक्ति गति करती रहती है। यह अग्नि ही सूक्ष्मरूप बना करके एक ब्रह्माण्ड का निर्माण करती रहती है। गृहों में जो परमाणुवाद स्वच्छ रूपों में गति करते हैं तो गृह उससे महान् और पवित्र बनते है। यह आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। निवास स्थान : गिरीराज सिंह विक्रम सिंह चौ0, खतौली, समय बजे 10 प्रातः :

२२ 09 05 1983 पुष्प 42 भौतिक और आध्यात्मिक विज्ञान के समन्वय

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा हमारा वरणीय माना गया हैं वही परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है। ये ब्रह्माण्ड उसका आयतन माना गया है, प्रत्येक वस्तु उसकी आयतन है वह उसमें वास कर रहा है तो इसीलिए हमारे आचार्यों ने इनके ऊपर गम्भीर चिन्तन मनन करने के पश्चात् उस परमपिता परमात्मा का यज्ञोमयी स्वरूप माना है क्योंकि यह संसार एक प्रकार का यज्ञोमयी है और यह उसका आयतन माना गया है। तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्पवरूप कहते हैं जहाँ वह यज्ञोमयी स्वरूप है वहाँ मुनिवरों ! वह विज्ञानमयी भी है। विज्ञानवेत्ताओं ने ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ी हैं और उड़ते रहते हैं परन्तु वह जो परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान है उसी को प्रत्येक मानवउद्बुद्ध करता रहा है। उसी को परीक्षण रूपों में अपने में धारण करता रहा है। कोई संसार में

नवीनता नहीं आती, नवीनता उन वस्तुओं की आती है जो कदापि नहीं होतीं, परन्तु जो सर्वत्र है, जो सर्वत्रकाल में रहते हैं तो उसमें न्यूनता और वृद्धपन का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। वह तो सदैव एक रस रहने वाला ज्ञान है, एक रस रहने वाला विज्ञान है, एक रस रहने वाली चेतना है। जिस चेतना के ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अनुसन्धान और अनुष्ठान करता रहा है। वैज्ञानिकजन उसी गति को अणु रूप में दृष्टिपात करते हुए उनका मिलान करते रहते हैं और जब आध्यात्मिक वैज्ञानिकों के समीप जाते हैं तो वह यह विचारते हैं, संसार में किसी वस्तु का विनाश नहीं होता तो जब विनाश नहीं होता, रूपांतर हैं तो अन्धकार भी नहीं रहना चाहिए। तो अन्धकार के लिए प्रत्येक मानव अपने में महानता चाहता रहता हैं। ऊँची ऊँची उड़ान उड़ने वाला अपने में महान सार्थक और विचारणीय अपनी वस्तु को लाने का प्रयास करता है। परन्तु उस परमपिता परमात्मा को जहाँ विज्ञानमयी स्वरूप कहा आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं ने इसके ऊपर बहुत सी टिप्पणियां कीं। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता अपने में महान्, अपने में विचित्र बनना चाहता है। प्रत्येक मानव की यही आकांक्षा होती हैं क्योंकि मैं अज्ञोमयी अपने जीवन को बनाता चला जाऊं। मुनिवरोंभौतिक विज्ञानवेत्ता ने भी परम्परागतों से ही !, इस महान् रहस्यतम गम्भीर रहस्यों में अपने को ले जाने का प्रयास किया और उन्होंने यह विचारा है कि हम वास्तव में अपने जीवन को एक महान् यज्ञोमयी बनाना चाहते हैं।

मेरे प्यारे मैं विशेष विवेचना तुम्हें देने नहीं आया हूँ। केवल कुछ परिचय देने के ! लिए आया हूँ और वह परिचय क्या है? मेरे प्यारे महानन्द जी की कुछ प्रेरणा होती ! रहती है उन प्रेरणाओं का श्रोत्र क्या है? यजन्म् ब्रह्मे वार्चो वृतता अस्वम् ब्रह्मे वाचो वरणास्तम् विश्वोवृते वाचौसन्दम् वेद का मन्त्र कहता है हे यज्ञोमयी बनने वाले मानव ! तू अपनी मानवीयता को अपनी आभा में ले जा जैसे हमारे यहाँ पुरातन काल में एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज याग कर रहे थे तब अग्नि का चिन्तन करते हुए, अग्नि को प्रदीप्त करते हुए, अग्नि का चयन करते हुए और अग्नि से कहते थे कि हे अग्नि आदान कर रहा है अथवा !तू मेरे हृदय में प्रकाश दे। वह अग्नि के लिए बेटा ! उसका आह्वान कर रहा है और कह रहा है, हे अग्निआ !, तू मेरे हृदय में प्रकाश दे,

तेज दे जिससे मेरा जीवन प्रकाशित हो जाए और मैं संसार में याज्ञिक बन करके, यज्ञमान बन करके मैं अपनी वाणी को, अपनी उद्गार हृदय की तरंगों को तेरे में समर्पित करके मैं द्यौ लोक तक पहुंचाना चाहता हूँ। मैं द्यौ लोक में अपने को ले जाना चाहता हूँ। हे अग्नि तू आ। द्यौ !मण्डल से सूर्य प्रकाश लेता है। वेद का मन्त्र कहता है उद्गम वतो वासम् उदगौ वस्तति देवः यह जो उद्गम है यह द्यौ है इस द्यौ मण्डल से सूर्य सहायता ले करके इस संसार का उद्गाता है। इस पृथ्वी मण्डल का उद्गाता बन करके उद्योग कर रहा है, प्रकाश दे रहा है। ऐसा अनुपम प्रकाश आ रहा है जिस प्रकाश को पा करके वनस्पति अपने जीवन को पान करने लगती है। माता के गर्भस्थल में जो शिशु होता है वह उसके प्रकाश में प्रकाशित होकर के तेल को प्राप्त कर रहा है। जो नाना प्रकार की खनिज हैं जो पृथ्वी के गर्भ में पनप रही हैं। अभी रेतक रूपों में हैं, उनका उद्घोष हो रहा है वह अपने में, परमाणु किरणों के साथ में अपने में मिलान कर रहीं हैं तो मेरे पुत्रोयह कैसा प्रभु का कैसा विज्ञान है !? जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अनुसन्धान, कैसा यज्ञोमयी स्वरूप है, कितना प्रिय याग हो रहा है। सूर्य उद्गाता बन रहा है। उद्गाता बन करके जीवन प्रदान कर रहा है। नाना प्रकार की वनस्पतियों में एक महानता की ज्योति महान्, प्रबल बन करके वह वैज्ञानिकों के लिए सार्थक बन रहा है।

विचार विनिमय क्या? आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता कहता है। हे अग्नि आयाहि तू मेरे ! हृदय में प्रवेश हो, तू मेरे नेत्रों में प्रकाश दे जिससे मैं तेरे इस दृश्य को, इस अग्नि को अग्न्याध्यान करता हुआ मैं तेरे परमाणुओं को वैज्ञानिक तथ्यों के द्वारा, यन्त्रों के द्वारा उन परमाणुओं को अपने में दृष्टिपात कर सकूं। हे यज्ञोमयी, हे अग्नि अग्न्याध्यान करने वाले तू अग्नि को प्रदीप्त कर। अग्नि कहती है अग्नम ब्रह्मः चाचः यह वेद का आचार्य ! कहता है, यज्ञमान कहता है, हे अग्नि तू मेरे हृदय में प्रवेश हो। मैं तेरे से प्रकाश को ! पाता हूँ, मैं इसमें हृदय रूपी जो अग्नि मेरी शान्त हो गई है उस अग्नि को मैं प्रदीप्त करना चाहता हूँ, उस अग्नि को मैं उद्बुद्ध करके उसमें साकल्यों का स्वाहा देना चाहता हूँ। घृत की मैं श्रद्धामयी आहुति देना चाहता हूँ, यह घृतोमयी जो श्रद्धा है उससे मेरा

जीवन ऊँचा बनेगा परन्तु मैं उसकी आहुति देना चाहता हूँ। अग्न्याध्यान करता हुआ अग्नि की उपासना करता हुआ यज्ञमान कहता है, हे भगवन् मेरे गृह में प्रकाश रहे किसी ! ऐसी उद्गम इच्छा उद्गार हृदयों की वह अग्नि की !प्रकार का अन्धकार न रहे। मेरे प्यारे तरंगों को उद्बुद्ध कर देता है। उद्बुद्ध करता हुआ वह जो परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है जो इस संसार रूपी यज्ञ का रचयिता है इसको सहारता है, वह इस प्रकृति के एक एक कण कण में जो विद्यमान है वह यज्ञोमयी है क्योंकि यज्ञ उसका आयतन है, उसकी स्थली बनी हुई है तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की उपासना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम अपने में महान् बनना चाहते हैं। परन्तु आज का हमारा वाक्य यह कह रहा है मेरे पुत्र ने मुझे प्रेरणा दी है कि याग के सम्बन्ध में कुछ चर्चाएं की जाएं तो मैं बेटा इतना उच्चारण कर सकता हूँ ! कि इस संसार में याग तो होने ही चाहिएं क्योंकि जब यह परमात्मा का भव्य जगत् ही एक प्रकार की यज्ञशाला है यह प्रत्येक मानव एक यज्ञशाला के रूप में कुछ ऐसा याग कर रहा है, कोई मानव हूत कर रहा है, अग्नि को अग्नि के मुख में परणित स्वरूप जब आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं के द्वारा पहुंचा अथवा भौतिक विज्ञानवेत्ताओं के द्वारा पहुंचा तो बेटादेखो !, अग्नि की तरंगों में से उन्होंनं अग्नि में अणु और परमाणु, परमाणुओं के निहित कर रहा है उन परमाणुओं के ऊपर वह अनुसन्धान अपने में परमाणु देना आरम्भ कर दिया है उस परमाणु का विभाजन करने लगे तो विभाजन करते सृष्टि का चक्र, सृष्टि का चित्रण उसमें एक एक परमाणु में दृष्टिपात आने लगा। उन परमाणुओं का मिलान किया तो यन्त्रों का निर्माण हो गया। यंत्रित होने लगे। मेरे प्यारेदेखो !, राष्ट्रीयता में उसकी भव्यता आभ्याद्गति प्राप्त हो गई। परिणाम, परन्तु देखो, यही विज्ञान ! देखो !मुनिवरों, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं के समीप पहुंचा तो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता ने सोचा, विचारा, चिन्तन औश्र मनन करने के पश्चात् क्यों यह संसार तो बाहरीय जगत् है यह बाहरीय तो यज्ञशाला है परन्तु इस बाहरीय जगत्शाला में नाना प्रकार का एक याग हो रहा है। देखो, कहीं सूर्य प्रातःकालीन ऊषा और क्रान्ति के द्वारा प्रकाश कर ! रहा है, कहीं चन्द्रमा रेणुका के अन्धकार को लेकर के शान्ति वृष्टि कर रहा है कहीं मेरे

प्यारेदेखो !, यह वायु इस संसार को प्राण दे रही है, प्राण शक्ति देता, इसका भेदन हो रहा है। यह अग्नि संसार को तेजोमयी बना रही है तेजोमयी बना करके मुनिवरों ! अउसके स्वरूप को जाना जा रहा है परन्तु आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता यह विचारता है कि मुझे तो साधक बनना है, मुझे तो संसार में मुद्रित हो जाना है। यही प्रश्न भगवान कृष्ण ने एक समय सन्दीपन ऋषि से किया था। महाराजा संदीपन ऋषि से यही प्रश्न किया था कि महाराजमैं आध्यात्मिक मुद्रित होना चाहता हूँ !, आध्यात्मिक मुद्रित मैं कैसे बनूंगा? तो मेरे प्यारेदेखो !, महाराजा सन्दीपन ऋषि ने इसी वाक्य को ले करके कहा था कि तुम्हें मुद्रित होना है, मुद्रित होना है तो सम्भव ब्रहे वृतः तुम प्रत्येक इन्द्रियों को मुद्रित बना लो। मेरे पुत्रो मुझे कुछ ऐसा स्मरण है भगवान कृष्ण ने उनके !चरणों में ओत प्रोत हो करके अपने को मुद्रित बनाने का प्रयास किया नेत्रां को मुद्रित किया, श्रोत्रों को मुद्रित किया, त्वचा को मुद्रित किया। सबको मुद्रित करने के पश्चात् इस ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात किया। इस ब्रह्माण्ड के विज्ञान को विज्ञान के तत्त्वाधान में ले गए, भौतिक विज्ञान जिसे कहते हैं जहाँ अणुओं और परमाणुओं की तरंगों में जाने वाला वैज्ञानिक उड़ान उड़ता हुआ कोई सूर्य में रमण कर रहा है, कोई चन्द्रमा में जा रहा है कोई मंगल में जा रहा है, कोई शुक्र और बुद्ध में जा रहा है, कोई नाना रूपों में परिक्रमा कर रहा है, कोई गुरु की परिक्रमा यान कर रहा है, कोई सूर्य की परिक्रमा कर रहा है। कोई स्वाति की परिक्रमा कर रहा है परन्तु देखो, यहाँ परिक्रमा का बहुत महत्व माना गया है। माता अपने पुत्र की परिक्रमा कर रही है और पुत्र अपनी माता को परिक्रमा कर रहा है। पत्नी अपने पति की परिक्रमा कर रही है, पति पत्नी की परिक्रमा कर रहा है। बेटायह कैसा ब्रह्माण्ड है !? कैसा परिक्रमा करने वाला यह जगत् है? इन्हीं परिक्रमाओं को जानते जानते एक विचार दूसरे विचार से उसका समन्वय हो जाता है और जब विचारों का समन्वय हो गया तो वह मुद्रित होना प्रारम्भ हो जाता है और वह मुद्रित होता हुआ अपनी आत्मा ब्रह्मवाचः जैसे मानव के शरीर में इन्द्रियां प्राणों की परिक्रमा कर रही हैं और प्राण मेरे प्यारेदेखो !, इन्द्रियों की परिक्रमा ! कर रहा है। प्राण अपाण की परिक्रमा कर रहा है, अपाण व्यान की परिक्रमा कर रहा

है, व्यान समान की परिक्रमा कर रहा है और उद्गम ब्रह्मे समान की परिक्रमा करता हुआ बेटाकैसा अनुपम यह ब्रह्माण्ड है !यह समय रूपी चक्र चल रहा है। मेरे पुत्रो !? प्राण प्राण की परिक्रमा कर रहा है, इन्द्रियों के विषय इन्द्रियों में समाहित हो रहे हैं। मानो, देखो, समाहित हो करके एक दूसरे में एक हो करके बेटा प्राण सूत्र से चले ! जाते हैं। वेद का ऋषि कहता है प्राणम् ब्रह्मे कृतं जलप्रभवहे वाचः। वेद के आचार्य संदीपन ने यह कहा था भगवान कृष्ण को हि हे पुरुषम् मानव ये जो ब्रह्माण्ड ब्रह्मे वाचः है वह प्राण सूत्र में पिरोया हुआ है। इसका सूत्र ही प्राण है। प्राण सूत्र में देखो, इन्द्रियां पिरोई हुई हैं। जब प्राण चला जाता है तब इन्द्रियों का अपना अस्तित्व नहीं रह जाता है। यह प्राण सूत्र ही है, जब सुषुप्ति में जाता है तो सब शून्य हो जाता है परन्तु देखो, कौन जागरूक रहता है? प्राणम् ब्रह्मे वाचः आत्मा के साथ ही, प्राण ही एक आत्मा का सूत्र बना हुआ है। मेरे पुत्रो ब्रह्माण्ड का भी वही सूत्र है क्योंकि लोक ! लोकान्तरों में क्या, परमाणु परमाणु में क्या, एक गति गति में वह प्राण अपनी प्रतिक्रिया कर रहा है। तो विचार विनिमय में देखो, बेटायदि कोई ! संसार का यदि कोई उद्गाता है तो उद्गान गाने वाला यज्ञशाला में विद्यमान हो करके अपना उद्गम गा रहा है। उद्गीत गा रहा है। उद्गीता गाता हुआ उद्गम ब्रह्मे वाचः ब्रह्मः लोकः, वह अपने में समाहित हो रहा है। विचार रहा है कि मैं कहाँ चला गया हूँ? परन्तु देखो, महाराजा संदीपन ने यही वाक्य कहते हुए आचार्यों से अपनी महान् से महान् कल्पना का उद्घोष किया है।

तो आओ मेरे प्यारेमैं विशेष विवेचना न देता हुआ वाक्य दूरी न ले जाऊं !, परन्तु आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता यही कहता है कि मैं आत्मा को जानने का प्रयास कर रहा हूँ। आत्मा ही हमारा एक नृत्य है, आत्मा ही प्राण स्वरूप है। प्राणस्वरूप होने से बेटा ! एक एक आभा को लेकर के शरीर रूपी यज्ञशाला का शोधन कर रहा है। हे याज्ञिक बनने वाले तू अपने में महान् बनता चले, अपने में विचित्र बनता चल। क्योंकि विचित्र बनना ही संसार में प्रभु के समीप जाना हैं क्योंकि परमात्मा विचित्र है, परमात्मा अणुवस्तिति कहलाता है, वह इस संसार में रहता हुआ परन्तु इस संसार से दूरी रहती है। आओ मेरे प्यारेविचार विनिमय क्या !? हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते

हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होनाचाहते हैं। बाहरीय याग, आध्यात्मिक याग से मिलान करता हुआ। भारद्वाज मुनि जी यह कहता है, हमें बाहरीय से आध्यात्मिक याग का समन्वय करना है। हमें उस बाहरीय याग को वैज्ञानिक तत्त्वों में ले जाना है परन्तु जिससे हम राष्ट्र और समजा और मानवीयता को महान् बना सकें। बेटा आज का हमारा वाक्य यह समाप्त होने जा रहा हैं अब मेर ! प्यारे महानन्द जी दो शब्दों की विवेचना करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी मेरे !मेरे भद्र ऋषि मण्डल ! पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे और वह ऐसे शब्दों में हमें ज्ञान की वृष्टि कर रहे थे। किसी का में जब इनके चरणों में विद्यमान हो करके इस साधना के क्षेत्र में जब प्रवेश हो जाते थे तब अपने यौगिक और साधकों के द्वारा यह नाना प्रकार की क्रियात्मक अपने विशाल अभ्रों को अवगत कराते रहते थे। परन्तु वह समय तो दूरी चला गया है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी यज्ञोमयी स्वरूप की कल्पना कर रहे थे। कल्पना ही नहीं उसका विशुद्ध रूपों से वर्णन कर रहे थे। जहाँ हम यह उच्चारण करते हैं कि याग जैसा कर्म द्वितीय नहीं हो सकता। तो यह केवल हमारे हृदय की कल्पना ही नहीं रहती है। यह वेद का मन्त्र तथा ज्ञान और विज्ञान की धारा इसमें मानव को ले जाती है और वह उसमें मुद्रित और धारणा होता हुआ अपने में यह स्वीकार करता है कि वास्तव में यह शुद्ध कार्य करना चाहिए। द्रव्याम भूतम् ब्रह्मः, पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल में हमें यह निर्णय कराया था कि संसार में इतना द्रव्य है इसका सदुपयोग होना चाहिए क्योंकि यदि द्रव्य का सदुपयोग नहीं होता तो द्रव्य मानव को मृत्यु के आँगन में ले जाएगा और यदि द्रव्य का सदुपयोग होता रहेगा तो यही द्रव्य मानव को सुखद और स्वर्ग में ले जाता है। क्योंकि संसार के मूल में यदि हम यह विचारते हैं कि यह जितना द्रव्य है यह परमपिता परमात्मा की सम्पदा है। सृष्टि का सृजन करने वाले ने सृष्टि के प्रारम्भ में द्रव्य की आभा, द्रव्य क्या है ?

यह परमाणुओं का एक मिलान है। इसमें विचारों की अनुकृतिका है जब इसमें एक

आभा परणित हो जाती है तो इसका रूप द्वितीय रूप में परणित हो जाता है। परिणाम यह है कि उस द्रव्य का सदैव सदुपयोग होना चाहिए आज जहाँ हमा यह आकाशवाणी जा रही है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के शब्दों को प्रतिपादित किया जा रहा है, मैं भी अपनी आभा वहाँ एक यज्ञों का आयोजन हो रहा है, मेरा हृदय बड़ा प्रसन्न हो रहा था, मैं अपने में सदैव प्रसन्नयुक्त रहने के लिए यागों से याग अमृतम् ब्रह्मे वाचः यह याग अमृत है, यह याग अग्नि है। यह याग मानो, देखो, स्वर्ग में ले जाने वाली एक एक प्रतिभा कृत्य कहलाती है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को प्रेरणा देता रहता हूँ और प्रेरणा दे करके कहा करता हूँ प्रभु यह संसार तो एक बड़ी आभा में जा रहा है। मानव में जहाँ ! अधिकार की पुकार होती जा रही है, कर्त्तव्य की विहीनता होती चली जा रही है। यह काल तो ऐसा विचित्र होता चला जा रहा है परन्तु वहाँ मैं जब यागों जैसे कर्मों को दृष्टिपात करता हूँ तो अन्तरात्मा प्रसन्न हो जाती है। हे यज्ञमान तेरे जीवन का सौभाग्य ! अखण्ड बना रहे, क्योंकि तेरे जीवन में महानता और विचित्रताएं तथा कर्म करने का क्रिया कलाप में कुशलता आती रहे, मेरी सदैव यह कामना रहती है। सौभाग्य अखण्ड बना रहने का अभिप्राय क्या जीवन में सदैव प्रसन्नता रहे। आनन्द चित्तता रहनी चाहिए। मेरी यह कामना रहती है परन्तु देखो, यज्ञोभव सम्भवः क्योंकि यह याग सृष्टि के प्रारम्भ में सृष्टि के पिता ने इस अणुकरणीयता को निर्धारित किया। क्योंकि मुझे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रकट कराते रहते थे जब मैं अध्ययन करता था कि ब्रह्मा के अथर्वा नामक दो पुत्र थे, वह याग करते रहते थे और याग करते करते परमाणुओं पर अनुसन्धान करते करते वायुमण्डल में अपनी उड़ान उड़ते रहते थे। ऐसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रकट कराते रहे हैं, परन्तु मैं इस सम्बन्ध में नहीं जाना चाहता हूँ।

आधुनिक काल में कुछ काल समाप्त हो गया है जब यागों को पाखण्ड के रूप में समाज ने परणित कर दिया था। परन्तु देखो, समय आता रहा काल का काल आता रहा परन्तु देखो, याग को पुनः से समाज ने अपनाने का प्रयास किया है। आधुनिक काल में भगवन्यह जो पृथ्वी मण्डल है !, पृथ्वी मण्डल के वैज्ञानिकों का जिस भी काल में कोई समूह एकत्रित होता है उस समय वह एकत्रित हाकर यह विचारते हैं कि

यह जो प्रदूषण हो रहा है। वायुमण्डल में दूषितपन आ रहा है इसका भी कोई मार्ग है जिससे इसे विशुद्ध किया जाए तो वैज्ञानिकजनों में इस प्रकार की धाराएं जो उत्पन हो चुकी हैं कि गो के घृत में ऐसे परमाणु हैं जो वायुमण्डल में अशुद्ध परमाणुओं को निगल करके विशुद्ध परमाणुओं का प्रसार कर सकते हैं। कोई और साधना नहीं है और कोई ऐसा कृत्य नहीं है। परन्तु देखो,उनके विचारों में परिवर्तन होता रहता है !, आज विचार कुछ हैं। जिस विचार का आज वह खण्डन कर रहे हैं परन्तु कुछ काल में उन्हीं विचारों का मण्डन करने लगते हैं। उसके मूल में क्या है? उसके मूल में यह है कि जो वैज्ञानिक हैं उनका तप महान् नहीं है। वह आत्मतत्व के वेत्ता नहीं हैं क्योंकि जो आत्मवेत्ता पुरुष होते हैं, वह उस विज्ञान में रमण करते हैं तो उसकी घोषणा में अशुद्धपन नहीं आता। परन्तु जब वैज्ञानिकों की धाराएं, उनकी परिवर्तित होती रहती हैं, परिवर्तित क्यों होती रहती हैं? क्योंकि परमात्मा का यह जो जगत् है, विज्ञान है यह बड़ा विशाल है परन्तु विशाल को अविशालता अंकित करना चाहते हैं तो उनके विचारों में अन्तर्द्वन्द्व आ जाता है।

तो विचार विनिमय क्या? मैं वैज्ञानिकों के सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं, विचार मैं देने जा रहा हूँ कि जो आधुनिक काल का वैज्ञानिक है यह मानव को त्रास दे रहा है, वह मानव को त्रास क्यों दे रहा है? क्योंकि उसमें तप नहीं है, आत्मविश्वास नहीं हैं यदि आत्मज्ञानी हो तो समाज को त्रास नहीं दिया जा सकता। परन्तु देखो, कहीं वैज्ञानिकजन अपनी अपनी आभा में गति कर रहा है मुझे इससे कोई विवाद नहीं है, मुझे कोई विरोध भी नहीं है। विचार केवल हमारा यह है भय ब्रह्मः वाचा, क्योंकि जब विज्ञान में चरित्र की धारा ही नहीं हैं तो विज्ञान की एक अग्नि काण्ड बन कर रह जाने की सम्भावना बनी रहती है। विचार यह रहता है कि विज्ञान में आध्यात्मिकवाद, परमाणुवाद के मिलान करने में आध्यात्मिकवाद का यदि मिलान हो जाए तो विज्ञान सार्थक बन करके, जनसमूह का प्रिय बन करके यह रूढ़िवाद को समाप्त करके अपनी धाराओं में परणित हो सकता है। यह समाज एक महान् बन सकता है परन्तु आज जो काल चल रहा है यहाँ विज्ञान का दुरूपयोग होता जा रहा है। विज्ञान के दुरूपयोग

होने से विज्ञान अपनी चरित्र की सम्पदा नहीं रही है। वह क्यों नहीं रही क्योंकि इसमें आध्यात्मिकवाद की सूक्ष्मता है और यह अग्नि के मुखारबिन्दु पर विद्यमान हो करके, समुद्र के तट पर विद्यमान हो करके इस संसार रूपी समुद्र में न जाने किस समय अग्नि प्रदीप्त हो जाए। ऐसा ऐसा काल, विज्ञान का दुरूपयोग हो रहा है तो मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ अपने पूज्यपाद गुरुदेव से, हे मेरे देव रावण के काल में भी ! विज्ञान का दुरूपयोग हुआ था, लंका समाप्त हो गई। समाज समाप्त हो गया। इसी विज्ञान का दुरूपयोग महाभारत के काल में हुआ था। महाभारत के काल में एक कुटुम्ब अपने कुटुम्ब में इस विज्ञान के दुरूपयोग से अग्नि प्रदीप्त हो गई और उसका परिणाम क्या था? विज्ञान का दुरूपयोग कर्त्तव्य का पालन नहीं रहा। केवल स्वार्थवाद की प्रथा बन गई। जिस भी काल में राजा व्यवसायी बन जाएगा विज्ञान का दुरूपयोग हो जाएगा। जब राजा निरीक्षण रहेगा, आध्यात्मिक वेत्ता रहेगा, ब्रह्म की उसे पुकार होगी वह राजा इस समाज निरीक्षण करके व्यवसायी नहीं बन रहा है, वह समाज की रक्षा के लिए लगा हुआ है परन्तु देखो, वह राजा पवित्र होता है। उस राजा के राष्ट्र में विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होगा। विज्ञान का दुरूपयोग उस राजा के राष्ट्र में होता है जब राजा स्वतः व्यवसायी बन जाता है, व्यवसायी बन करके दूसरे के द्रव्यों को, माताओं के श्रृङ्गार को अपने में ग्रहण करने में तत्पर हो जाएगा तो वहाँ विज्ञान का दुरूपयोग हो करके वह काल, वह राजा का राष्ट्र एक समय अग्नि का काण्ड बनकर रह जाएगा। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह निर्णय करारहा हूँ कि आधुनिक जगत् इस प्रकार की प्रतिभा में आ गया है। आज मैं वैज्ञानिकों के प्रति केवल अपनी सहानुभूति केवल इतनी ही है कि प्रभु उन्हें उन्नति देकर के, सुबुद्धि देकर के, विज्ञान में यदि आध्यात्मिकवाद आ जाए, मानवीयवाद आ जाए, चरित्रवाद आ जाए तो जाए, मानवीयवाद आ जाए, चरित्रवाद आ जाए तो राष्ट्र और समाज दोनों में पवित्रता आ जाएगी परन्तु मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चाएं याज्ञम् ब्रह्मा वाचः चर्च नहीं करना चाहता हूँ।

विचार विनिमय यह कि हे यज्ञमानयह काल तो चलता ही रहेगा !, परम्परागतों से चल

रहा है, कहीं अग्निकांड है तो कहीं शीतल कांड है, कहीं कर्त्तव्य का पालन है। यह तो परम्परागतों से ही, काल चल रहा है परन्तु देखो, तेरे !मैं कह रहा हूँ हे यज्ञमान ! गृह में सदैव द्रव्य का सुदपयोग होता रहे। द्रव्य का जिस गृह में सदुपयोग होता है वह गृह स्वर्ग कहलाता है, वह गृह महान् कहलाता है, मेरे प्यारेदेखो !, मेरी आकांक्षा यही बनी रहती है हे यज्ञमान तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। उद्गान गाने ! वाले, उद्गीत गाने वाले उद्गाता, आयुभूषनम् आयु में, ऊर्ध्वा में प्राप्त होते रहें, ऐसी मेरी सदैव कामना रहती हैं हे उद्गाता। कहीं वे परमपिता परमात्मा की यह सृष्टि है वही इसमें सूर्य उद्गाता बन रहा है कहीं प्राण उद्गाता बन रहा है कहीं आत्मा उद्गाता बन रहा है, कहीं यहाँ अध्वर्यु भी इसी प्रकार के रूपों में परणित होता रहता हैं मेर पूज्यपाद गुरुदेव आध्यात्मिक चर्चाएं और भौतिक चर्चाएं दोनों का समन्वय करना चाहते हैं। परम्परागतों से ऋषि मुनियों की एक ही धारा रही है कि भौतिक विज्ञान भी पराकाष्ठा पर हो परन्तु उसमें आध्यात्मिकवाद भी अवश्य रहना चाहिए। आध्यात्मिकवाद से ही विज्ञान सार्थक बन सकता है।

आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा क्योंकि मुझे तो इतना वाक्य प्रकट करना है। मैं अपने यज्ञमान को अपने हृदय की सहानुभूति प्रकट करता हूँ। हे यज्ञमान आयुष्मान् भव। मैं उस काल में जाना नहीं चाहता हूँ जब ! महाराज अश्वपति के यहाँयागों में परणित होते रहते थे। यागों का कर्म कराते रहते थे। नाना प्रकार के याग, पुत्रेष्टि याग, अश्वमेध याग, अजयमेघ याग, नरमेघ याग, गौकरण याग जैसे अस्तम आश्वमेध हो जैसे वृष्टि याग, वाजपेयी याग, इन्द्र याग नाना प्रकार के यागों का चयन हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में प्राप्त होता हैं मेरे पूज्यपाद गुरुदेव उनकी विवेचना करते रहते हैं आभा में प्रकट कराते रहते हैं।

आज तो मैं केवल इतना उच्चारण कराने आया हूँ मेरे हृदय में एक ही विडम्बना रहती है और वह विडम्बना है कि मानव, मानव में स्नेह होना चाहिए। मानव मानव में प्रीति होनी चाहिए, परमपिता का विशुद्ध रूप समाज में आना चाहिए। रूढ़ियां उस राष्ट्र को नष्ट कर रही हैं। आधुनिक काल में प्रत्येक राष्ट्र में क्या समाज रूढ़ियों में परणित हो

रहा है। धर्म के मर्म को राजा को जानना चाहिए और धर्म पद्धति को राष्ट्र में लाकर के राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहिए, यह मेरी आकांक्षा रहती है। यह सदैव विचार रहते हैं मुझे यही पिपासा लगी रहती है। मानव रूढ़िवाद को त्यागने वाला बने। समाज में रूढ़ियां नहीं रहनी चाहिएं क्योंकि जो राजा होता है रूढ़ियों को समाप्त करने वाला उसमें ज्ञान होना चाहिए। विवक होना चाहिए। ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। ब्रह्मवेत्ता ही रत्नों के मर्म को जानने वाला ही रूढ़ियों को समाप्त कर सकता है और जब यह रूढ़ियां बनी रहेंगी तो राजा के राष्ट्र में कर्तव्य का पालन नहीं हो सकता। जब कर्तव्य नहीं होगा तो महाअद्धितीयों में अधिकार की पुकार होने लगेगी। अधिकार की पुकार करता करता प्राणी अपने में नष्ट हो जाएगा। यह मेरा सदैव परम्परागतों का एक वाक्य है पूज्यपाद गुरुदेव ऐसा भी उच्चारण करते रहते हैं। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना न देता हुआ मैं सदैव जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है मेरा हृदय प्रसन्न है क्योंकि यज्ञों में द्रव्यों का सदुपयोग होना देवताओं को वि देना देखो, सूक्ष्म रूप से अग्नि की तरंगों पर विद्यमान होकर के शब्द जाना, शब्द के साथ में मुनिवरों चित्र जाना ! वह अन्तरिक्ष में लय हो जाते हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव नित्यप्रति वाक्यों की पुनरुक्तियां करतेरहते हैं, हम कराते रहते हैं। अब मैं पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने उद्गार दिये। !मेरे प्यारे !ऋषिवर ! उनके उद्गार बड़े पवित्र और सार्थक होते हैं क्योंकि सत्य उच्चारण करना ही मानव का कर्तव्य कहलाता है। क्योंकि ऋषि कहते उसे हैं जो अपने वाक्य उद्गार हृदय के प्रकट करें। आज का वाक् यह क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की प्रतिभा और महानता में रमण करते चले जाएं। आध्यात्मिक, भौतिक इन सबका समन्वय करते हुए और द्रव्य को यह विचारते कि यह परमपिता परमात्मा की एक सम्पदा है इसका सदुपयोग करना हमारा कर्तव्य है। आत्मा किसी सूत्र में पिरोई हुई है। प्राण सूत्र में इन्द्रियां पिरोई हुई हैं जैसा हमने पूर्व उच्चारण किया आज जैसा महानन्द जीने कहा हे यज्ञमान तुम्हारे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। सदैव मेरी भी यह कामना रहती ! है।जीवन सदैव आन्नदित होता हुआ इस संसार की प्रतिभा को जानते हुए अपने में

महान् विचित्र बन करके सागर से पार होने का प्रयास ऐसा मेरा भी मन्तव्य रहता है। आज मैं भी महानन्द जी के इन्हीं विचारों की पुनरुक्ति करता हूँ। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा। दिनांक स्थान 43 श्री देवराज पहूजा सी :, साऊथ एक्सटेंशन 1, नई दिल्ली।